विशेषज्ञ समिति

प्रो0 के. सी. जोशी
पूर्व कुलपति
कुमायुँ विश्वविद्यालय , नैनीताल
उत्तराखण्ड

प्रो0 गिारिजा पाण्डे
निदेशक समाज विज्ञान विद्या शाखा
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
हल्द्वानी उत्तराखण्ड

प्रो0 कृष्ण देव राव
कुलसचिव
राष्ट्रीय विधि विश्वविद्यालय
देहली

प्रो0 श्यामबिहारी मिश्रा
विभागाध्यक्ष विधि विभाग
के.जी.के. मुरादाबाद
उत्तरप्रदेश

डा0 शैफाली यादव
सह प्राध्यापक
एम.जे.पी. रूहेलखण्ड विश्वविद्यालय
उत्तरप्रदेश

डा0 मनीष सिंह
सहायक प्राध्यापक
लखनऊविश्वविद्यालय
उत्तरप्रदेश

नरेन्द्र कुमार जगूड़ी
पाठ्यक्रम समन्वयक
विधि विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
हल्द्वानी (उत्तराखण्ड)

पाठ्यक्रम समन्वयक एवं सम्पादन

नरेन्द्र कुमार जगूड़ी
पाठ्यक्रम समन्वयक
विधि विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
हल्द्वानी (उत्तराखण्ड)

इकाई लेखक खण्ड एवं इकाई संख्या

डा0 दिनेश शर्मा (खण्ड–1)–04
सहायक प्राध्यापक विधि
रा0विधि महाविद्यालयय,गोपेश्वर
जनपद– चमोली (उत्तराखण्ड)

डा0 नागेन्द्र कुमार शर्मा (खण्ड–2,3,4)– 08
सहायक प्राध्यापक विधि विभाग
नेहरू ग्राम भारती विश्वविद्यालय
इलाहबाद उ0प्र0

Copy Right @UTTRAKHAND OPEN UNIVERSITY
Edition: June 2012

Publisher : Director Study & Publish
mail : studies@uou.ac.in
Uttrakhand Open University, Haldwani (Nainital) –263139

UTTRAKHAND OPEN UNIVERSITY
HALDWANI

Legal Regulation of Economic Enterprises
आर्थिक उद्यम के कानूनी विनियमन

LL.M.-106

खण्ड– 1 सरकारी विनियमन का औचित्य पृ0क्रमांक

इकाई–1–संवैधानिक परिप्रेक्ष्य 1–28

इकाइ –2 –नई आर्थिक नीति – औद्योगिक नीति संकल्प, घोषणाएं एवं कथन..... 29–53

इकाई–3– आर्थिक गतिविधियों पर नियन्त्रण, सूचनाओं का प्रकटीकरण 54–83

इकाई–4– प्रतिस्पर्धा में निष्पक्षता; उपभोक्तावाद पर जोर 84–103

खण्ड– 2 औद्योगिक विकास

इकाई –1–औद्योगिक उपक्रमों का विकास व उसके नियम विनियम 104–115

इकाई–2– रूग्ण (बीमार) औद्योगिक उपक्रम 116–138

इकाई–3 –आवश्यक वस्तुओं नियम विनियम..... 139–159

खण्ड –3 नियंत्रण और जवाबदेही की समस्याएं

इकाई–1– व्यापक विनाशलीला और पर्यावरण अवनयन (पतन) 160–189

इकाई–2– लोक दायित्व बीमा 190–212

खण्ड — 4 कानूनी विनियमन

इकाई–1– तकनीकी अन्तरण के लिये संधि (सहयोग) करार 213–228

इकाई–2– भारत में विनियोग 229–247

इकाई–3– प्रमुख लोकउपक्रमों के विधिक विनियम 248–265

LL.M. PART- I
Legal Regulation of Economic Enterprises

ब्लाक–1.सरकारी विनियमन का औचित्य **(The Rationale of Government regulation)**

ईकाई–1.संवैधानिक परिप्रेक्ष्य **(Constitutional perspective)**

इकाई की संरचनाः–

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 अनुच्छेद 14

1.4 अनुच्छेद 15 (1)

1.4.1 अनुच्छेद 15 (3)

1.5 अनुच्छेद 16

1.6 अनुच्छेद 21

1.6.1प्राण व दैहिक स्वतन्त्रता का अर्थ है शरीर के सभी अंगों अखण्ड बनाये रखना

1.6.2 मानव गरिमा के साथ जीने का अधिकार

1.6.3 अच्छे जीवन के अधिकार

1.6.4 जाविकोपार्जन एवं कार्य का अधिकार

1.6.5 आश्रय का अधिकार

1.6.6 स्वास्थ्य का अधिकार

1.6.7 प्रदूषण मुक्त पर्यावरण का अधिकार

1.6.8 एकान्तता का अधिकार

1.6.9 शिक्षा का अधिकार

1.7 अनुच्छेद 39 (घ)

1.8 अनुच्छेद 42

1.9 सारांश

1.10 महत्वपूर्ण शब्दावली

1.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1.12 संदर्भ ग्रन्थ

1.13 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1.14 निबंधात्मक प्रश्न

1.1.प्रस्तावना

भारत के संविधान की उद्देशिका में निम्न उद्देश्यों की प्राप्ति की परिकल्पना की गयी है– 'हम भारत के लोग, भारत को एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न समाजवादी पंथनिरपेक्ष लोकतन्त्रात्मक गणराज्य[1] बनाने के लिए, तथा उसके सभी नागरिकों को;

सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय,विचार अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतन्त्रता,प्रतिष्ठा और अवसर की समता प्राप्त कराने के लिए, तथा उन सबमें व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता और अखंडता[2] सुनिश्चित करने वाली बंधुता बढ़ाने के लिए,

दृढ़ संकल्प होकर अपनी इस संविधान सभा में आज तारीख 26 नवम्बर, 1949 ई0 (मिति मार्गशीष शुक्ला सप्तमी, संवत दो हजार छह विक्रमी) को एतद्द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।

उद्देशिका 'भारत के लोगों के आदर्शों और आकांक्षाओं को समेटे हुए हैं। इनमें से एक सुनहरा आदर्श– 'प्रतिष्ठा एवं अवसर की समानता' के उद्देश्य को प्राप्त करने हेतु संविधान में समता के अधिकार को उपबंधित किया गया है। जो स्पष्ट रूप से जाति, धर्म, मूलवंश, लिंग और जन्मस्थान के आधार पर विभेद का प्रतिषेध करता है एवं सबको विधि के अन्तर्गत समान संरक्षण प्रदान करता है। इस प्रकार भारतीय संविधान न केवल पुरूष–पुरूष एवं स्त्री–स्त्री के मध्य वरन पुरूष–स्त्री के मध्य समता की गारंटी प्रदान करता है।[3]

अनंच्छेद 14 के तहत भारत का संविधान समानता का अधिकार प्रदान करता है। समानता भारतीय लोकतन्त्र की सबसे महत्वपूर्ण आधारशिला है। विधि के समक्ष समता का सिद्धान्त विधि के शासन का एक आवश्यक उपसिद्धान्त है। जो भारतीय संविधान में व्याप्त है।[4] अनुच्छेद 14 भेदभाव को सामान्यतः गैरकानूनी बनाते हुए सभी व्यक्तियों को विधि के समक्ष समता की गारंटी देता है। समता के अधिकार के अन्तर्गत अनुच्छेद 14 सबसे महत्वूपर्ण हैं एवं हाल के वर्षो में न्यायालयों द्वारा सबसे अधिक जोर भी इसी पर दिया गया है।

मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा, 1948 में भी अनुच्छेद 17 यह घोषणा करता है विधि के समक्ष सभी समान है एवं बिना किसी भेदभाव के विधि के समान संरक्षण के हकदार हैं। हमारे संविधान के अन्तर्गत अनुच्छेद 14 भी इसी सिद्धान्त को समेटे हुए हैं।

1.2.उद्देश्य

उच्चतम न्यायालय द्वारा समता का अधिकार संविधान का बुनियादी तत्व घोषित किया गया है। समता के सिद्धान्त से इसे अलग नहीं किया जा सकता। संविधान की उद्देशिका में समता के सिद्धान्त को आधारशिला बनाया गया है अर्थात कोई भी संवैधानिक संशोधन जो समता के अधिकार को न्यून अथवा छीनता है वह असंवैधानिक या शून्य होगा, न तो संसद और न ही किसी राज्य की विधायिका समता के सिद्धान्त का उल्लंघन कर सकते हैं। समता भारत के संविधान का आधारिक लक्षण है एवं समान व्यक्तियों के साथ असमान व्यवहार एवं असमानों के साथ समान व्यवहार भारत के संविधान के इस आधारिक ढांचे के साथ खिलवाड़ माना जायेगा।

1.3 अनुच्छेद–14

अनुच्छेद 14 भेदभाव वाली विधियों एवं अन्य भेदभावों का प्रतिषेध करता है। अनुच्छेद 14 राज्य के मनमाने या भेदभावपूर्ण कार्य से बचाव करता है। अनुच्छेद 14 में निहित समानता के आयामों का न्यायिक घोषणाओं द्वारा विस्तार किया गया है।

अनुच्छेद 14 के उपबंधों के अनुसार, ''भारत के राज्यक्षेत्र के भीतर किसी भी व्यक्ति को विधि के समक्ष समता एवं विधि के समान संरक्षण से वंचित नहीं करेगा। यह प्रावधान अमेरिका के संविधान के 14वें संशोधन जो समान संरक्षण से संबंधित है एवं मेल खाता है, जो घोषणा करता है– ''कोई भी राज्य अपने क्षेत्राधिकार के अन्तर्गत किसी व्यक्ति को विधि के समान संरक्षण से वंचित नहीं करेगा।''

प्रथम कथन एक नकारात्मक अवधारणा है जो यह सुनिश्चित करता है कि कोई भी पक्ष विशेषाधिकार के अन्तर्गत नहीं है। कानून के समक्ष सभी समान है एवं कोई व्यक्ति चाहे उसकी कोई भी रैंक अथवा अवस्था हो विधि से ऊपर नहीं है। यह ब्रिटेन के विधि के शासन के Diccyan सिद्धान्त के दूसरे उपसिद्धान्त के समकक्ष है।[5]

हालांकि यह एक पूर्ण नियम नहीं है एवं इसक कई अपवाद हैं, उदाहरणार्थ विदेशी राजनायिकों को देश की न्यायिक प्रक्रिया से उन्मुक्ति प्रदान की गई है। अनुच्छेद 361 राष्ट्रपति को उन्मुक्ति प्रदान करता है एवं राज्यों के राज्यपाल के लोक अधिकारी एवं न्यायाधीशों को भी उन्मुक्तियां प्रदान की गयी हैं। कुछ विशेष समूहों और ट्रेड यूनियनों को भी विधि द्वारा विशेषाधिकार प्रदान किया गया है।

दूसरा कथन 'विधि का समान संरक्षण' सकारात्मक धारणा को व्यक्त करता है। इसका अर्थ यह नहीं कि एक विधि समान रूप से सभी व्यक्तियों पर लागू होनी चाहिए और प्रत्येक विधि देश में विभिन्न परिस्थितियों में समान रूप से लागू होगी। विधि के समान संरक्षण का अर्थ यह कदापि नहीं है कि यह सभी व्यक्तियों से बिना किसी विभेद के समान व्यवहार करेगी। यह समान परिस्थितियों में उपचार की समानता दर्शाता है। यह कहता समानों के साथ समान व्यवहार होना चाहिए। जाति, धर्म, धन सामाजिक स्तर और राजनीतिक प्रभाव का भेदभाव किये बिना सभी के साथ समान व्यवहार किया जाएगा।[6]

विधि की समानता के सिद्धान्त का यह अर्थ नहीं है कि सभी पर एक ही विधि लागू होगी वरन इसका अर्थ यह है कि एक जैसे वर्ग के लोगों पर एक ही विधि लागू होगी। समान परिस्थिति में समान विधि लागू होगी। अर्थात समानों के साथ असमान व्यवहार एवं असमानों के साथ समान व्यवहार नहीं होना चाहिए। समान के साथ समान व्यवहार ही होना चाहिए।[7] अनुच्छेद

14 विधि के समक्ष समता का उपबंध करता है। परन्तु हकीकत यही है कि सभी व्यक्ति प्रकृति द्वारा समान नहीं बनाए गये हैं एवं सभी समान परिस्थितियों में नही रहते हैं। अतः सभी पर एक ही विधि लागू नहीं की जा सकती, यह अन्याय होगा। अतः विधि के समक्ष समता का यह अर्थ कदापि नहीं है कि अलग–अलग परिस्थितियों वाले व्यक्तियों पर एक ही विधि लागू की जाएगी।[8] विभिन्न वर्गों के लोगों की जरूरतें अलग होती है। अतः उनके साथ अलग–अलग व्यवहार ही करना उचित है। विधायिका को विभिन्न मानव संबंधों से उत्पन्न विभिन्न समस्याओं का सामना करना पड़ता है। अतः इन सभी उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु विधायिका को विधि बनाने की शक्ति चाहिए। अनुच्छेद 15(1) भारत के किसी भी नागरिक को केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग एवं जन्म स्थान के या उनमें से किसी एक के आधार पर विभेद का प्रतिषेध करता है।

1.4 अनुच्छेद 15

अनुच्छेद 15(1) कुछ आधारों पर विभेद का प्रतिषेध करता है। उच्चतम न्यायालय के अनुसार धर्म एवं जाति के आधार पर विभेद का प्रतिषेध राष्ट्रीय पहचान को बढ़ावा देता है। यह भारतीय संस्कृति की बहुलता को नकारना नहीं बल्कि इसकी रक्षा के लिये हैं।[9]

अनुच्छेद 15(1) अनुच्छेद 14 का ही विस्तार है। अनुच्छेद 15(1), अनुच्छेद 14 में निहित समता के सामान्य सिद्धान्त को विशेष रूप में लागू करता है। वर्गीकरण का सिद्धान्त जो अनुच्छेद 14 में निहित है वहीं अनुच्छेद 15(1) में भी है।

अनुच्छेद 14 एवं 15 का सम्मिलित प्रभाव यह नहीं है कि राज्य एक समान कानून नहीं पारित कर सकती, बल्कि एक समान कानून पास करते समय उसमें निहित असमानता युक्तियुक्त आधारों पर आधारित होनी चाहिए एवं अनुच्छेद 15(1) के अनुसार, धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या जन्म स्थान वर्गीकरण के लिये युक्तियुक्त आधार नहीं हो सकते। अनुच्छेद 15(1) के अन्तर्गत भेदभाव में एक प्रतिकूल पूर्वाग्रह का तत्व निहित है। इन आधारों में से किसी भी आधार पर आधारित एवं अन्यों पर आधारित भेदभाव अनुच्छेद 15(1) और अनुच्छेद 15(2) के अधीन आघात नहीं है बल्कि अनुच्छेद 14 के अन्तर्गत आघात है। अगर धर्म, लिंग, जाति, मूलवंश या जन्मस्थान, वो एक कारक है जिसे विधायिका द्वारा संज्ञान में लिया गया है, तब यह

तथ्य पर आधारित भेदभाव नहीं होगा। लेकिन अगर विधायिका द्वारा केवल एक आधार पर भेदभाव किया गया है एवं अन्य किसी कारक की उपस्थिति नहीं है तो यह निश्चित ही अनुच्छेद 15(1) के खिलाफ विधि होगी।

अनुच्छेद 15, अनुच्छेद 14 का ही एक फलक है। अनुच्छेद 14 की भांति अनुच्छेद 15 भी राज्य के सभी क्रियाकलपों को आच्छादित करता है, परन्तु अनुच्छेद 14 के परिप्रेक्ष्य में इसका विषयक्षेत्र कम है।

अनुच्छेद 14 नागरिकों एवं गैर नागरिकों पर समान रूप से लागू होता है। अनुच्छेद 15 केवल नागरिकों पर लागू होता है। कोई भी गैरनागरिक अनुच्छेद 15 के तहत अपने अधिकरों का दावा नहीं कर सकता जबकि अनुच्छेद 14 के तहत वह ऐसा कर सकते हैं।

अनुच्छेद 14 किसी भी तर्कसंगत मापदण्ड के आधार पर युक्तियुक्त वर्गीकरण की अनुमति देता है। अनुच्छेद 15 के अधीन कुछ आधार दिये गये हैं जिन आधारों पर वर्गीकरण नहीं किया जा सकता है।

1.4.1 अनुच्छेद 15(3)

अनुच्छेद 15(3) राज्य को महिलाओं एवं बच्चों के प्रति विशेष प्रावधान बनाने की अनुमति देता है। यह अनुच्छेद यह तथ्यांकित करता है कि भारत में महिलाएं सदियों से सामाजिक एवं आर्थिक रूप से असहाय रही हैं जिसके कारण वह देश की सामाजिक–आर्थिक क्रियाकलापों में बराबर की भागीदार नहीं बन सकीं। अनुच्छेद 15(3) का उद्देश्य महिलाओं के आर्थिक एवं सामाजिक पिछड़ेपन को दूर करके उन्हें इतना सबल बनाना है जिससे महिला एवं पुरूष के बीच समानता स्थापित हो सके। अनुच्छेद 15(3) का उद्देश्य महिलाओं को दृढ़ एवं उनकी स्थिति में सुधार लाने का है। इस प्रकार अनुच्छेद 15(3) राज्य को अनुच्छेद 15(1) के अन्तर्गत किये गये बंधन से आजाद करते हुए महिलाओं को सामाजिक एवं आर्थिक समानता प्रदान करने वाले उपबंध करने की अनुमति देता है।

इसमें एक संदेह उभरता है कि क्या अनुच्छेद 15(1) महिलाओं के पक्ष में किसी भी उपबंध की रक्षा करता है या उनके पक्ष में केवल सुनिश्चित करता है। इसे बेहतर नजरिये से देखें तो

लगता है कि जब राज्य महिलाओं एवं बच्चों से सम्बन्धित कोई विशेष प्रावधान बनाता है तो उसे केवल लिंग के आधार पर भेदभाव नहीं मानना चाहिए। यही अनुच्छेद 15(3) एवं अनुच्छेद 15(1) का सम्मिलित प्रभाव है। यद्यपि सामान्य रूप में लिंग के आधार पर कोई भेदभाव नहीं किया गया है। संविधान स्वयं अनुच्छेद 15(3) के अधीन महिलाओं एवं बच्चों के प्रति विशेष उपबंधों का प्रावधान करता है। अनुच्छेद 15(3) एवं अनुच्छेद 15(1) को साथ पढ़ने से यह स्पष्ट हो जाता है कि राज्य पुरूषों के विरूद्ध महिलाओं के पक्ष में तो भेद कर सकता है, परन्तु महिलाओं के विरूद्ध पुरूषों के पक्ष में भेद नहीं कर सकता। हालांकि अनुच्छेद 15(3) के तहत राज्य महिलाओं के पक्ष में युक्तियुक्त प्रावधानों का निर्माण ही कर सकता है एवं वे अनुच्छेद 15(2) के अन्तर्गत प्रावधान के अनुरूप ही होने चाहिए। अनुच्छेद 15(3) का क्रियान्वयन निम्न उदाहरणों द्वार समझा जा सकता है–

आई0पी0सी0 की धारा 497 के अन्तर्गत व्याभिचार का अपराध सिर्फ पुरूष पर ही लागू होता है एवं इसके अन्तर्गत महिला को दुष्प्रेरक का अपराधी भी नहीं माना जा सकता है। यह प्रावधान महिलाओं के लिये विशेष प्रावधान के अन्तर्गत आता है एवं इसे अनुच्छेद 15(3) के अन्तर्गत संरक्षण प्राप्त है। उच्चतम न्यायालय के अनुसार[10] ''लिंग वर्गीकरण का आधार है। यद्यपि सामान्यतः इस आधार पर विभेद नहीं किया जा सकता लेकिन संविधान के अनुच्छेद 15(3) के अनुसार महिलाओं एवं बच्चों के लिए विशेष प्रावधान का निर्माण करने में राज्य सक्षम है। अनुच्छेद 14 एवं 15 सम्मिलित रूप से धारा 497 के अन्तिम कथन को मान्यता प्रदान करते हैं जो व्याभिचार के आरोप में महिला को एक दुष्प्रेरक के रूप में दंडित करने से प्रतिबन्धित करता है।''

बाम्बे उच्च न्यायालय ने एक पूर्व वाद में धारा 497 के प्रावधान को कायम रखते हुए कहा कि धारा 497 के अन्तर्गत विभेद इस तथ्य पर आधारित नहीं है कि महिला का लिंग पुरूष से भिन्न है वरन देश में महिलाओं की स्थिति के कारण हैं जिसके अन्तर्गत उन्हें सुरक्षा प्रदान करने हेतु विशेष विधायन जरूरी है।

महिलाओं एवं पुरूषों हेतु परीवीक्षा अधिकारी का सामान्य संवर्ग है, लेकिन बेसहारा महिलाओं के लिये संस्थान के प्रमुख के पद के लिए केवल महिला को ही मात्र माना गया है। बी0आर0

अंचोरी बनाम गुजरात राज्य[11] के मामले में इस विभेद को चुनौती दी गई। उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि केवल इस कारण से कि, वहां एक सामान्य संवर्ग है जिस पर दानों लिंगों के व्यक्तियों की नियुक्ति की जा सकती है, इसका यह अर्थ कदापि नहीं है कि ऊँचे संवर्गों के सभी पदों को बिना किसी लिंग के विभेद से भरा जाना चाहिए। कर्तव्य के संपादन की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए ही राज्य सरकार द्वारा यह निर्धारित किया गया है कि महिलाओं के संस्थान की प्रमुख एक महिला ही हो सकती है। अनुच्छेद 15(3) राज्य को महिलाओं एवं बच्चों के लिए विशेष प्रावधान बनाने के लिये सक्षम करता है अतः इसे असंवैधानिक करार नहीं दिय जा सकता है।

आन्ध्रप्रदेश राज्य बनाम पी0बी0 विजय कुमार[12] के महत्वूपर्ण वाद में उच्चतम न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया कि अनुच्छेद 15(3) के अधीन राज्य सरकारी नौकरियों में महिलाओं के लिये आरक्षण का प्रावधान कर सकता है एवं कुल पदों में, 30 प्रतिशत तक अगर अन्य बातें समान हैं तो महिलाओं को वरीयता दिये जाने का नियम अनुच्छेद 15(3) के अधीन मान्य है।

यह तर्क दिया जाता है कि किसी पिछड़े वर्ग के लिये पदों पर आरक्षण अनुच्छेद 15(2) के अधीन मान्य है परन्तु महिलाओं के लिये नहीं। अतः महिलाओं के लिये आरक्षण का प्रावधान नहीं किया जा सकता है क्योंकि लोक सेवाओं में लिंग के आधार पर विभेद अनुच्छेद 16(2) का उल्लंघन है। इस तर्क को नकारते हुए उच्चतम न्यायालय ने निर्धारित किया कि अनुच्छेद 15(3) के अधीन इस तरह का प्रावधान किया जा सकता है। जबकि अनुच्छेद 15(1) राज्य को लिंग के आधार पर विभेद से प्रतिबन्धित करता है, अनुच्छेद 15(3) के अधीन राज्य महिलाओं के लिए विशेष प्रावधानों का निर्माण कर सकता है। अतः अनुच्छेद 15(3) राज्य को अनुच्छेद 15(1) के तहत प्रतिबन्ध से सीधी उन्मुक्ति प्रदान करता है।

1.5 अनुच्छेद 16

अनुच्छेद 16 अनुच्छेद 14 का ही एक और फलक है। ये दोनों अनुच्छेद अर्न्तसम्बन्धित हैं। अनुच्छेद 16 अपनी जड़े अनुच्छेद 14 से ही प्राप्त करता है। अनुच्छेद 16(1), अनुच्छेद 14 की

साधारणता को विस्तृत करता है एवं राज्य के अन्तर्गत रोजगार के सम्बन्ध में ''अवसर की समानता'' को संवैधानिकता प्रदान करता है।

अनुच्छेद 14 एवं 16 के मध्य एक महत्वपूर्ण अन्तर यह है कि अनुच्छेद 14 जहाँ नागरिकों एवं गैर नागरिकों को समान रूप से संरक्षण प्रदान करता है वहीं अनुच्छेद 16 केवल नागरिकों पर ही लागू होता है गैरनागरिकों पर नहीं।

अनुच्छेद 16(1) राज्य के अधीन किसी पद पर नियोजन या नियुक्ति से सम्बन्धित विषयों में सभी नागरिकों के लिये अवसर की समानता की गारंटी देता है।

अनुच्छेद 16(2) के अनुसार, ''राज्य के अधीन किसी नियोजन या पद के सम्बन्ध में केवल धर्म, मलूवंश, जाति, लिंग, उद्भव, जन्मस्थान, निवास या इनमें से किसी के आधार पर न तो कोई नागरिक अपात्र होगा और न उससे विभेद किया जायेगा।

उच्चतम न्यायालय के निर्धारण के अनुसार 'समान कार्य के लिये समान वेतन' का सिद्धान्त अनुच्छेद 14, 16 एवं 39(ब) ओर संविधान की उपदेशिका में समाहित है। ऐसा कोई सिद्धान्त संविधान में स्पष्ट रूप सन्निहित नहीं है परन्तु परन्तु अब एक मौलिक अधिकार के रूप में स्थापित हो गया है। मध्यप्रदेश राज्य बनाम प्रमोद भारतीय[13] के वाद में उच्चतम न्यायालय ने निर्धारित किया कि 'समान कार्य के लिए समान वेतन' का सिद्धान्त अनुच्छेद 14 में निहित है। यह नियम अनुच्छेद 14 एवं अनुच्छेद 16(1) का एक हिस्सा है और इसे अनुच्छेद 16(1) के अन्तर्गत भी कहा गया है जो राज्य के नीति निदेशक तत्वों के अन्तर्गत आता है एवं राज्य को इस सिद्धान्त से सम्बन्धित नीति बनाने के लिए निर्देशित करता है।

न्यायालय द्वारा इस सिद्धान्त का प्रतिपादन इस प्रकार किया गया है[14], ''समान कार्य पर समान वेतन का सिद्धान्त समान कार्य के लिए लागू होगा लेकिन इस अर्थ सभी मामलों में समानता नहीं है, अगर व्यक्तियों के दो वर्ग समान कार्य को समान परिस्थितियों में समान जिम्मेदारी के साथ समान नियोक्ता के अधीन अंजाम देते हैं तो वहां यह सिद्धान्त लागू होगा एवं यह राज्य को दोनों वर्गों में वेतन पर विभेद की अनुमति नहीं देता है। लेकिन यह नहीं कहा जा सकता कि राज्य के नीति निर्देशक तत्वों के अधीन नहीं किया जा सकता क्योंकि यह अनुच्छेद 14 का

भी एक हिस्सा है। मौलिक अधिकार एवं नीति निर्देशक के सिद्धान्त एक दूसरे का अपवर्जन नहीं कर सकते।

एक ही नियोक्ता के अन्तर्गत समान पद पर समान कार्य एक ही प्रकार के दायित्वों का निर्वाह करने वाले कर्मचारी एक ही वेतन पाने के अधिकारी हैं। न्यायालय ने जोर देकर कहा यह कोई अनन्य सिद्धान्त नहीं है लेकिन एक तथ्य जरूर है। हालांकि इसे स्पष्ट रूप से संविधान द्वारा वर्णित नहीं परन्तु एक संवैधानिक लक्ष्य है।

'समान कार्य पर समान वेतन' का सिद्धान्त वहां लागू नहीं होता है जहाँ नियोक्ता अलग हैं। सहकारी बैंकों द्वारा संचालित क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों में नियोजित, कामर्शियल एवं राष्ट्रीय बैंकों द्वारा संचालित क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों में नियोजतों के समान वेतन की मांग नहीं कर सकते।[15]

अनुच्छेद 14 युक्तियुक्त वर्गीकरण की इजाजत देता है अर्थात वर्गीकरण का स्पष्ट आधार होना चाहिए। जिस आधार पर वर्गीकरण किया जा रहा है उसका वर्गीकरण के उद्देश्य से सुसंगत सम्बन्ध होना चाहिए। 'समान कार्य के लिए समान वेतन का सिद्धान्त वहाँ लागू होता है। जहाँ वेतन की विभिन्नता बिना किसी वर्गीकरण या अयुक्तियुक्त वर्गीकरण पर आधारित होती है। जबकि विभिन्न वेतन पाने वाले समान नियोक्ता के अन्तर्गत समान कार्य के लिए नियोजित किये जाते हैं। यह तथ्य कि नियेजन एवं और योजनाओं की प्रकृति अस्थायी हे अप्रासांगिक है। अगर एक बार यह साबित होता है कि कर्तव्य एवं किए जाने वाले कार्य की प्रकृति समान है तो 'समान कार्य पर समान वेतन' का सिद्धान्त लागू हो जाता है।[16]

लेकिन इस सिद्धान्त को निरपवाद रूप से पेशेवर सेवा के लिये लागू नहीं किया जा सकता है। उदाहरणार्थ, एक डाक्टर एवं एक कम्पाउण्डर द्वारा किसी घाव की ड्रेसिंग को एक आधार पर नहीं आँका जा सकता। इसी तरह एक वरिष्ठ एवं कनिष्ठ वकील को एक सा पारिश्रमिक नहीं दिया जा सका। किसी दर पर पेशेवर सेवा में इस सिद्धान्त को लागू नहीं किया जा सकता। अलग अलग योग्यता वाले चिकित्सकों को पारिश्रमिक के उद्देश्य से अलग ग्रेड दिये जा सकते हैं, वहाँ भी जहाँ वे चिकित्सालय के प्रभारी हों।

कार्य की समानता का निर्धारण अकादामिक योग्यताओं के आधार पर किया जा सकता है। जिम्मेदारी के परिमाण एवं पदों की गुणवत्ता का अन्तर वर्गीकरण का आधार हो सकता है।

प्रशासनिक क्षमता विभिन्न वेतन का आधार बन सकती है। जैसा कि उच्चतम न्यायालय ने कहा है कि समानता समान के मध्य होनी चाहिए। असमान समानता का दावा नहीं कर सकते।[17]'समान कार्य के लिये समान वेतन' के सिद्धान्त वहॉ लागू नहीं होता है जहॉ दो वर्ग दो भिन्न संस्थाओं में कार्यरत है एवं जिनके कर्तव्य ओर कार्य की गुणवत्ता भी भिन्न है।[18]

1.6 अनुच्छेद 21

जो जीवन का अधिकार एवं व्यक्तिगत स्वतन्त्रता की गारंटी प्रदान करता है, ने अपनी पहुँच हर क्षेत्र में व्याप्त की है। मूल अधिकार के क्षेत्र में यह मानवीय मूल्यों का अभ्यारण है। अतः ठीक ही इसे मूल अधिकारों का मूल अधिकार कहा गया है।

निजी स्वतन्त्रता के अधिकार की भांति जिसने नये तत्व प्रदान किये हैं, जीवन का अधिकार मानव गरिमा का पर्याय बन गया है जो सभी मानवाधिकारों की आधारशिला है। फ्रांसिस कोरेली मुलिन बनाम दिल्ली प्रशासन[19] के वाद में न्ययमूर्ति भवगती ने जीवन के अधिकार की महत्ता का वर्णन किया।

जीवन का अधिकार जो अनुच्छेद 21 के अधीन प्रदान किया गया है वह मात्र एक पशु की तरह जीने तक सीमित नहीं है, इसका अर्थ भौतिक उत्तरजीविता से कहीं अधिक है। इसका भौतिक अस्तित्व ही नहीं वरन आध्यात्मिक अस्तित्व भी है, 'प्राण' का अधिकार शरीर के अंगों की संरक्षा तक ही सीमित नहीं है जिससे जीवन का आनन्द मिलता है या आत्मा बाह्य जीवन से सम्पर्क स्थापित करती है वरन इसमें 'मानव गरिमा' के साथ जीने का अधिकार भी सम्मिलित है, जो मानव जीवन को पूर्ण बनाने के लिए आवश्यक है, जिसके अन्तर्गत पर्याप्त पोषण, वस्त्र, सिर के ऊपर छत, पढ़ने–लिखने की सुविधा, स्वेच्छा से आवागमन, दूसरे मनुष्यों से मिलना जुलना, भी आता है। इस अधिकार के आयाम देश के आर्थिक विकास पर भी निर्भर है, अर्थात जीवन की आधारभूत जरूरतों के साथ–साथ वे सभी अधिकार भी व दैनिक स्वतन्त्रता के अन्तर्गत आते हैं स्वयं की पूर्ण अभिव्यक्ति के लिये आवश्यक है।

आलेगा तेलीस बनाम बाम्बे म्युनिसिपल कारपोरेशन[20] के मामले में उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि 'जीविकोपार्जन का अधिकार' अनुच्छेद 21 में शामिल है।

मुख्य न्यायमूर्ति चन्द्र चूढ़ ने कहा कि प्राण के अधिकार में मरने का अधिकार सम्मिलित नहीं है, विधि की सम्यक प्रक्रिया अपनाए बिना किसी का जीवन नहीं लिया जा सकता। जीविकोपार्जन का अधिकार एक आत्यान्तिक अधिकार नहीं है। अनुच्छेद 39(डी) एवं 41 के अन्तर्गत इसे नीति निदेशक तत्व में रखा गया है अतः यह राज्य की जिम्मेदारी है।

कई उदाहरणों से यह साबित होता है कि प्राण का अधिकार, मुख्य अधिकार है जिसमें से अन्य कई अधिकार उत्पन्न होते हैं। भारत की परिस्थितियों में यह प्रश्न उठता है कि किस सीमा तक मूल अधिकारों को संपादित किया जा सकता है।[21]

1.6.1 प्राण व दैहिक स्वतन्त्रता का अर्थ है शरीर के सभी अंगों अखण्ड बनाये रखना

प्राण व दैहिक स्वतन्त्रता का अर्थ एक पशुवत जीवन से कहीं अधिक है। प्राण का अधिकार शरीर के अंगों की संरक्षा तक ही सीमित नहीं है जिससे जीवन का आनन्द मिलता है।

खरक सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य[22] में उच्चतम न्यायालय ने निर्धारित किया कि अनुच्छेद 21 में प्रयुक्त 'प्राण' शब्द का अर्थ केवल पशुवत जीवन से नहीं है वरन शरीर के सभी अंगों को अखण्ड रखने के अधिकार से है। इस अर्थ पूर्ण गरिमा के साथ जीने से है। इस अधिकार में प्रयुक्त 'दैहिक' विशेषण का अर्थ सीमित करने के लिये नहीं वरन अनुच्छेद 19 में दी गयी स्वतन्त्रता के अन्तर को स्पष्ट करने के लिये है।

ए0के0 गोपालन बनाम मद्रास राज्य[23] के मामले में उच्चतम न्यायालय ने कहा कि ''अनुच्छेद 21 में 'दैहिक स्वतन्त्रता' का अर्थ 'शारीरिक स्वतन्त्रता' मात्र से है। अनुच्छेद 19 में प्रयुक्त समस्त भारत में भ्रमण का अधिकार' अनुच्छेद 21 में प्रदत्त दैहिक स्वतन्त्रता से भिन्न है। अर्थात न्यायालय ने 'दैहिक स्वतन्त्रता' पदावली को शाब्दिक एवं सीमित अर्थ लगाया। परन्तु बाद के विनिश्चयों में न्यायालय ने उक्त निर्णय को अस्वीकार कर दिया। खरक सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य में उच्चतम न्यायालय ने निर्णय दिया कि रात्रि में पिटीशनर के घर पुलिस का आना उसकी 'दैहिक स्वतन्त्रता' पर आक्रमण है।[24]

1.6.2 मानव गरिमा के साथ जीने का अधिकार

मेनका गांधी के वाद[25] में उच्चतम न्यायालय ने अनुच्छेद 21 को नया आयाम प्रदान किया। न्यायालय द्वारा निर्धारित किया गया, 'प्राण' का अधिकार केवल भौतिक अस्तित्व तक ही सीमित नहीं है, वरन इसमें मानव गरिमा के साथ जीने का अधिकार सम्मिलित है। प्रेन्सिस कोरेली बनाम भारत संघ[26] के मामले में न्यायालय ने उक्त वाद का अनुसरण करते हुए कहा कि 'प्राण' का अधिकार केवल पशुवत जीवन से नहीं है, इसका अर्थ भौतिक जीवन से अधिक है। यह अधिकार शरीर के अंगों की संरक्षा तक ही सीमित नहीं है जिससे जीवन का आनन्द प्राप्त होता है या आत्मा बाहरी जीवन से सम्पर्क स्थापित करती है बल्कि इसमें मानव गरिमा के साथ जीने का अधिकार भी है जो किसी मनुष्य के जीवन को पूर्ण बनाने के लिए आवश्यक है। सभी आधारिक जरूरतें जैसे, रोटी, कपड़ा मकान, पढ़ना – लिखना अपने आपको विभिन्न माध्यमों से व्यक्त करना, मुक्त होकर घूमने एवं सबसे मिलने जुलने का अधिकार भी सम्मिलित है। उक्त दोनों वादों के निर्णयों का अनुसरण करते हुए उच्चतम न्यायालय ने पीपुल्स यूनियन फार डेमोक्रेटिक राइट्स बनाम भारत संघ[27] के ऐतिहासिक मामले में निर्धारित किया कि एशियाड खेलों की विभिन्न योजनाओं में कार्य करने वाले श्रमिकों को न्यूनतम मजदूरी का भुगतान न करना अनुच्छेद 21 द्वारा प्रदान उनके मानव गरिमा के साथ जीविका के अधिकार का उल्लंघन है। बहुमत का निर्णय सुनाते हुए न्यायाधिपति श्री भगवती ने कहा कि ठेकेदारों द्वारा नियुक्त किये गये कर्मकारों को विभिन्न श्रम विधियों के आधीन प्रदत्त अधिकार और सुविधाएं मानव गरिमा को सुरक्षित रखने के लिए हैं, और उन्हें इससे वंचित रखना अनुच्छेद 21 का उल्लंघन है। उन्होंने आगे कहा कि विभिन्न श्रमिक विधियों का निजी ठेकेदारों द्वारा पालन न करना एवं राज्य संस्थानों द्वारा लागू न करना अनुच्छेद 21 के अन्तर्गत 'मानव गरिमा के साथ' जीने का अधिकार का स्पष्ट उल्लंघन है। उपरोक्त निर्णय से एक नयी विधिक क्रान्ति का जन्म हुआ, लाखों कर्मकारों को जो विभिन्न कारखानों, खेलों, खानों आदि में कार्यरत थे उन्हें सुरक्षा मिली, न्यूनतम मजदूरी पाने के उनके अधिकार एवं अनेक लाभदायक विधियों जिसके अन्तर्गत उन्हें पीने का पानी, आश्रय, चिकित्सीय सुविधा आदि का अधिकार भी प्राप्त हुआ।

चन्द्र राजा कुतनारी बनाम पुलिस कमिश्नर हैदराबाद[28] में निर्धारित किया गया कि प्राण के अधिकार में मानव गरिमा या शालीनता के साथ जीवन जीने का अधिकार शामिल है अतः

सौन्दर्य प्रतियोगिताएं आयोजित करना जो महिलाओं की गरिमा एवं शालीनता को ठेस पहुँचाती है अनुच्छेद 21 का उल्लंघन है। अतः आन्ध्र प्रदेश आपत्तिजनक प्रदर्शन प्रतिबंध अधिनियम, 1956 का धारा 3 के अन्तर्गत सरकार ऐसी प्रतियोगिताओं पर रोक लगा सकती है जो शालीनता के विरूद्ध एवं ब्लैकमेलिंग का आशय रखती है।

महाराष्ट्र राज्य बनाम चन्द्रभान[29] के वाद में न्यायालय द्वारा निर्धारित किया गया कि निलम्बन की अवधि में सरकारी सेवक को 1 रूपया प्रतिमाह निर्वाह भत्ता प्रदान करना असंवैधानिक है क्योंकि यह अनुच्छेद 21 का उल्लंघन ळें

1.6.3 अच्छे जीवन स्तर का अधिकार

अहमदाबाद म्यूनिसिपल कारपोरेशन बनाम खान गुलाम खान[30] एवं अन्य में शीर्ष न्यायालय ने कहा कि अनुच्छेद 19(1) (म) को अनुच्छेद 21 के साथ पढ़ने एवं मानवाधिकारों का सार्वभौम घोषणा के अनुच्छेद 25(1) के अनुसार प्रत्येक को अच्छे जीवन स्तर, सम्पूर्ण स्वास्थ्य एवं स्वयं के और अपने परिवार के कल्याण का अधिकार है। संविधान के अनुच्छेद 39 एवं 38 राज्य को सुविधाएं एवं अवसर प्रदान कराने का निर्देश देते हैं। अनुच्छेद 38 एवं 46 के अनुसार राज्य का यह कर्तव्य होगा कि समाज के कमजोर वर्गों को सामाजिक एवं आर्थिक न्याय प्रदान कर कल्याण को बढ़ावा प्रदान करे एवं समाज में व्याप्त असमानता दूर करे। ओलिग तेलीस[31] के मामले में उच्चतम न्यायालय ने जीविकोपार्जन के अधिकार को अनुच्छेद 21 के तहत मूल अधिकार निर्धारित किया परन्तु यह भी कहा यह एक आत्यान्तिक अधिकार नहीं है ''..... सार्वजनिक स्थान निजी कारोबार के लिए नहीं होते, नगर निगम द्वारा इन स्थलों से झुग्गी–झोपड़ी वालों को हटाया जाना अयुक्तियुक्त अनुचित तथा अन्यायपूर्ण नहीं है।'' परन्तु न्यायालय ने उनके लिए वैकल्पिक प्रबन्ध करने के निर्देश दिये।

1.6.4 जीविकोपार्जन एवं कार्य का अधिकार

बेगुला बापी राजू बनाम आन्ध्र प्रदेश राज्य[32] में न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित किया गया कि जीविकोपार्जन का अधिकार अनुच्छेद 21 के अन्तर्गत मूल अधिकार नहीं है। प्रस्तुत वाद में

वादियों की अधिशेष भूमि का अधिग्रहण गरीब एवं वंचितों को देने के लिये किया गया था। न्यायालय ने इसे उचित बताते हुए कहा कि ऐसा अनुच्छेद 39 के अन्तर्गत नीति निदेशक तत्व को प्रभाव देने के लिये किया गया था।

ओलिगा तेलिस बनाम बाम्बे म्युनिसिपल कारपोरेशन[33] वाद जो 'फुटपाथ पर रहने वाले लोगों के वाद' के रूप में जाना जाता है, में उच्चतम न्यायालय के पांच न्यायाधीशों की पीठ ने निर्णय दिया अनुच्छेद 21 के अन्तर्गत जीविकोपार्जन का अधिकार भी शामिल है। उक्त वाद में बम्बई शहर के फुटपाथों और मलिन बस्ती में रहने वालों ने मुम्बई नगर निगम अधिनियम, 1888 की धारा 313, 313 (झ) 314 पर 497 की विधिमान्यता को इस आधाार पर चुनौती दी कि उक्त अधिनियम के अधीन नगर निगम को फुटपाथों और सड़कें तथा अन्य सार्वजनिक स्थानों पर फेरी वालों को सामान बेचने से मना किया एवं वहां से निकालने का आदेश पारित किया। न्यायालय ने उक्त धाराओं को विधिमान्य घोषित करते हुए कहा कि सार्वजनिक स्थानों पर समान बेचना मूल अधिकार नहीं है एवं उनके इस अधिकार पर युक्तियुक्त निर्बधन लगाये जा सकते हैं।

दिल्ली डेवलपमेंट हार्टीकल्चर इम्पलायज बनाम दिल्ली प्रशासन के वाद में न्यायालय ने निर्धारित किया कि अनुच्छेद 21 के अन्तर्गत प्राण के अधिकार में जीविकापोर्जन के अन्तर्गत 'काम का अधिकार' भी शामिल है परन्तु इसे मूल अधिकार के रूप में समाविष्ट नहीं किया जा सकता। अभी देश इतना सक्षम नहीं है अतः इसे अनुच्छेद 41 में नीति निदेशक तत्वों के अन्तर्गत रखा गया है।

1.6.5 आश्रय का अधिकार

चमेली सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य[34] के वाद में उच्चतम न्यायालय ने निर्धारित किया अनुच्छेद 21 के अन्तर्गत आश्रय का अधिकार प्रत्येक नागरिक का मूल अधिकार है। न्यायालय के अनुसार 'किसी व्यवस्थित समाज में रहने से अर्थ यह कदापि नहीं है कि केवल मनुष्य की भौतिक जरूरतें पूरी हों, बल्कि इसका अर्थ उन सभी रूकावटों को दूर करने से है जो एक मनुष्य के विकास में बाधक होते हैं। आश्रय के अधिकार से तात्पर्य है पर्याप्त खाना, पानी, शुद्ध

वातावरण, शिक्षा चिकित्सीय सुविधा एवं छत से है। किसी मनुष्य को आश्रय देने का अर्थ मात्र उसके प्राण एवं अंगों की रक्षा करना नहीं है। बल्कि ऐसे घर से है जहॉ उसका शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक एवं आध्यात्मिक विकास का अवसर मिले।

1.6.6 स्वास्थ्य का अधिकार

विसेन्ट परिकुलंगरा बनाम भारत संघ के वाद में उच्चतम न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित किया गया कि लोक स्वास्थ्य को बनाये रखना एवं उसमें सुधार का अधिकार मानव गरिमा के साथ जीने के अनुच्छेद 21 के अधिकार अन्तर्गत आता है। सभी मानव क्रियाकलापों के लिए स्वस्थ शरीर का होना आवश्यक है। एक कल्याणकारी राज्य का कर्तव्य है कि वह सार्वजनिक स्वास्थ्य को बनाये रखने के लिये आवश्यक कदम उठाये, संविधान के भाग चार में अनुच्छेद 47 के अनुसार, ''राज्य, अपने लेागों के पोषाहार स्तर और जीवन स्तर को ऊँचा करने और लोकस्वास्थ्य के सुधार को अपने प्राथमिक कर्तव्यों में मानेगा और राज्य विशिष्टतया, मादक पेयों और स्वास्थ्य के लिए हानिकारक औषधियों के, औषधीय प्रयोजनों से भिन्न उपभोग का प्रतिबन्ध करने का प्रयास करेगा'', परमानन्द कटारा बनाम भारत संघ[35] के वाद में उच्चतम न्यायालय ने अपने ऐतिहासिक निर्णय में यह अभिनिर्धारित किया कि अनुच्छेद 21 के अधीन सभी चिकित्सकों का यह कर्तव्य है कि वे घायल व्यक्ति को दण्ड प्रक्रिया संहिता के अन्तर्गत विधिक प्रक्रिया अर्थात पुलिस कार्यवाही के पूरी होने की प्रतीक्षा किए बिना अतिशीघ्र चिकित्सीय सहायता दें और घायल व्यक्ति के जीवन की रक्षा करें।

कन्ज्यूमर एजूकेशन एण्ड रिसर्च सेन्टर बनाम यूनियन ऑफ इण्डिया[36] के वाद में उच्चतम न्यायालय ने निर्धारित किया कि कर्मकारों को सेवा के दौरान एवं सेवानिवृत्त होने के पश्चात भी 'स्वास्थ्य तथा चिकित्सी सहायता' प्राप्त करना एक मूल अधिकार है, न्यायालय ने कहा कि सभी प्राधिकारी, निजी व्यक्ति तथा कारखानों के स्वामी अनुच्छेद 32 और 142 के अधीन न्यायालय द्वारा जारी किये गये आदेशों का पालन करने के लिए बाध्य हैं। न्याालय ने देश के तमाम अजबेस्टर कारखानों के लिये निम्न मार्गदर्शक सिद्धान्त विहित किये–

1.सभी अजबेस्टस कारखानों के अपने कर्मचारियों हेतु स्वास्थ्य बीमा कराना जरूरी होगा।

2.प्रत्येक वृत्तिक स्वास्थ्य संकट से पीड़ित कर्मचारी 1 लाख का प्रतिकर पाने का अधिकारी होगा।

3.प्रत्येक ऐसे कारखानों को अपने सभी कर्मचारियों की नियुक्ति के प्रारम्भ से कम से कम 40 वर्ष तक या सेवानिवृत्ति या सेवासमाप्ति के पश्चात 15 वर्ष तक जो भी बाद में हो, तक स्वास्थ्य का रिकार्ड रखना आवश्यक होगा।

4.मेटेलीफेरस माइन्स रेग्यूलेशन्स, 1961 तथा वियना कन्वेशन की तरह ही सभी कारखानों को अजबेस्टस बीमारी का पता करने के लिए मेम्ब्रेन फिल्टर टेस्ट कराना होगा।

5.सभी कारखानों को चाहे कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम या कर्मकार प्रतिकर अधिनियम के अधीन हो, प्रत्येक कर्मचारी के स्वास्थ्य का बीमा कराना होगा।

1.6.7 प्रदूषण मुक्त पर्यावरण का अधिकारः–

सुभाष कुमार बनाम बिहार राज्य[37] के वाद में यह निर्धारित किया गया कि प्रत्येक नागरिक को जल एवं वायु प्रदूषण से बचाने के अनुच्छेद 32 के अन्तर्गत लोक हित वाद दायर करने का अधिकार है। प्रदूषण मुक्त जल एवं वायु के उपभोग का अधिकार अनुच्छेद 21 के अधीन 'प्राण के अधिकार' में शामिल है। रूरल लिटेगेशन एण्ड इनइटिलमेन्ट केन्द्र, देहरादून बनाम उत्तर प्रदेश राज्य[38] में लोकहित याचिका के जरिये देहरादून में चूना पत्थर की खुदाई के कारण आस–पास के दूषित हो रहे पर्यावरण के संबंध में न्यायालय को संज्ञान में लाया गया था। न्यायालय ने जांच हेतु समिति नियुक्त की एवं रिपोर्ट प्राप्त होने के पश्चात पत्थर की खानेां में खुदाई का कार्य रोकने का आदेश जारी किया। श्रीराम फूड फर्टिलाइजर[39] के मामले में उच्चतम न्यायालय ने दिल्ली के आवासीय इलाके में स्थित कम्पनी की ईकाई को ओलियम नामक खतरनाक गैस का उत्पादन करने से रोक दिया, जबतक कि सुरक्षा के सम्पूर्ण उपाय नहीं अपनाए जाते, कम्पनी के कारखाने से ओलियम गैस के रिसाव के कारण आस पास के निवासियों एवं कम्पनी के कर्मचारियों को बहुत क्षति पहुँची थी। इस सम्बन्ध में कम्पनी के प्रबंधकों को न्यायालय में सिक्योरिटी के तौर पर 20 लाख रूपये जमा करने के आदेश दिये गये जिनसे इस गैस के पीड़ितों को क्षतिपूर्ति दी जा सके एवं 15 लाख की बैंक गारंटी के भी

निर्देश दिये गये कि अगर कभी भविष्य में गैस का रिसाव हो तो पीड़ितों को दिये जा सकें। एम0सी0 मेहता बनाम भारत संघ[40] के दूसरे मामले में उच्चतम न्यायालय ने कानपुर के समीप जाजमाऊ नामक स्थान में स्थित चर्मशोधन शालाओं को तत्काल बन्द करने के निर्देश जारी किये ताकि गंगा को प्रदूषित होने से रोका जा सके। एक समाज सेवक द्वारा जनहित याचिका के माध्यम से इस मामले को न्यायालय के संज्ञान में लाया गया था। उच्चतम न्यायालय ने निर्धारित किया कि गंगा जल प्रदूषण एक सार्वजनिक उपताप है। जल प्रदूषण निवारण तथा नियन्त्रण अधिनियम के उपबन्धों को लागू करने में राज्य नाकाम रहा है एवं वे कानून मात्र कागजों तक ही सीमित हैं। न्यायालय ने निर्धारित किया कि पिटीशनर हालांकि गंगा तट का वासी नहीं है परन्तु उसे जनहित में वाद संस्थित करने का अधिकार है। न्यायालय ने कानपुर नगर पालिका को 6 माह के अन्दर 'जल परिषद' को जल प्रदूषण रोकने का प्रस्ताव भेजने के निर्देश दिये एवं आदेश दिया कि दूध की डेरी को शहर से बाहर ले जाया जाय श्रमिक कालोनी में सीवर लाइन बिछायी जाये। निर्धन लोगों के लिए सार्वजनिक शौचालय एवं मूत्रालय बनाये जायें और मनुष्य की लाश तथा मरे हुए पशुओं को गंगा में /फेंकने पर रोक लगाई जाए। नये कारखाने स्थापित करने के लिए लाइसेंस तब तक न दिये जायें जब तक कि वे प्रदूषण रोकने हेतु पर्याप्त उपाय न अपनाएं। ये निर्देश उन सभी नगरपालिकाओं एवं नगर निगमों पर लागू होंगे जहां से होकर गंगा बहती है।[41]

पारम्परिक सिद्धान्त के अनुसार विकास एवं पर्यावरण एक दूसरे के विरोधी हैं, परन्तु अब 'सस्टेनेबिल डवलपमेंट' अर्थात चिरस्थायी विकास का धारणा ने सब बदल दिया है। सबसे पहले इस सिद्धान्त के बारे में स्काटहोम घोषणा, 1972 में कहा गया। तत्पश्चात इस सिद्धान्त के बारे में विस्तार से पर्यावरण एवं विकास पर विश्व समिति की रिपोर्ट– 'हमारा साझा भविष्य' (Our Comman Future) में बताया गया। जिसके अध्यक्ष नार्वे के प्रधानमंत्री श्री जी0एस0 ब्रून्डलैण्ड (G.S. Brundtland) थे।

^Polluter's Pays^ सिद्धान्त अर्थात 'दूषित करने वाला ही भुगतान करता है', 'चिरस्थायी विकास' का एक आवश्यक लक्षण है। इसके एक अन्य लक्षण 'एहतियाती सिद्धान्त' के अनुसार–

1.राज्य को ऐसे उपाय करने चाहिए जो पर्यावरण को हानि पहुँचाने वाले कारणों को रोक सकें।

2.जहाँ भी गम्भीर एवं स्थायी नुकसान का भय हो वहां वैज्ञानिक अनिश्चितता का लाभ नहीं उठाने देना चाहिए।

3.इस सबूत का भार उस विकास कार्य करने वाले या उद्योगपति पर होना चाहिए कि उसका कार्य पर्यावरण अनुकूल है। इण्डियन काउन्सिल फॉर इनविरोमेन्टल लीगल एक्शन बनाम भारत संघ[42] के मामले में उच्च्तम न्यायालय ने 'दूषित करने वाला भुगतान करता है' के सिद्धान्त को लागू किया। न्यायालय ने निर्धारित किया कि इस विषय में सरल, व्यवहारिक एवं देश की अवस्थाओं के अनुरूप सिद्धान्त लागू होना चाहिए न्यायालय ने कहा कि जो खतरनाक क्रियाकलापों से सम्बन्धित उद्योग स्थापित करते हैं उनके इस प्रकार के क्रियाकलापों से अगर किसी को हानि पहुँचती है कि वे इसके जिम्मेदार होंगे, चाहे उन्होंने उचित सावधानी बरती हो। एक अन्य वाद में न्यायालय ने 'सावधानी का सिद्धान्त' (Precautionary Principle) और ''प्रदूषणकर्ता भुगतान करता है'' (Pulluter Pays) सिद्धान्तों को स्वीकार किया।

1.6.8 एकान्तता का अधिकार

गोविन्द बनाम मध्यप्रदेश[43] में यह अभिनिर्धारित किया गया कि एकान्तता का अधिकार (Right of Privacy) अनुच्छेद 21 के आधीन है लेकन यह आत्यात्तिक अधिकार नहीं है और इस पर लोक हित के अन्तर्गत निर्बन्धन लगाए जा सकते हैं।

1.6.9 शिक्षा का अधिकार

मोहिनी जैन बनाम कर्नाटक राज्य[44] के अपने ऐतिहासिक निर्णय में उच्चतम न्यायालय ने शिक्षा पाने के अधिकार को अनुच्छेद 21 के अन्तर्गत प्रत्येक नागरिक का मूल अधिकार निर्धारित किया उक्त मामले में पिटीशनर ने कर्नाटक एजूकेशन इन्स्टीट्यूशन (प्रोहीबिशन ऑफ कैपिटेशन फीस) एक्ट 1983 की विधिमान्यता को चुनौती दी गयी थी। इसके अधीन, सरकारी कोटे के स्थानों के लिए 2000/– रूपये, कर्नाटक राज्य के छात्रों के लिए 25,000/– रूपये

एवं कर्नाटक के बाहर के छात्रों के लिए 60,000/– रूपये प्रतिवर्ष ट्यूशन फीस निर्धारित की गयी थी। वादी जो उत्तर प्रदेश की निवासी थी उसे विहित फीस 60,000/– रूपये न देने के कारण प्रवेश से इन्कार कर दिया गया। उच्चतम न्यायालय को दो न्यायाधीशों को पीठ ने यह निर्णय दिया अनुच्छेद 21 के अन्तर्गत 'प्राण' के अधिकार के अन्तर्गत 'शिक्षा पाने का अधिकार' भी एक मूल अधिकार है। कालेजों द्वारा कैपिटेशन फीस लेना नागरिकों को उनके इस अधिकार से वंचित करना है। अतः अवैध है एवं अनुच्छेद 14 का भी उल्लंघन है। क्योंकि यह वर्गीकरण मनमाना है। शिक्षा भारत में बेचने की वस्तु नहीं रही है। बिना शिक्षा के कोई नागरिक अपने अन्य मूल अधिकारों का पूरा उपयोग नहीं कर सकता।

यूनी कृष्णन बनाम आन्ध्र प्रदेश राज्य[45] के मामले में कालेजों (विभिन्न राज्यों) के मामले में प्रबन्धकों ने मोहिनी जैन के मामले दिये गये विनिश्चय पर पुनर्विचार का आग्रह किया। न्यायालय के पांच न्यायाधीशों की पूर्ण पीठ ने 3–2 ने बहुमत से मोहिनी जैन के बाद में दिये गये निश्चय की पुष्टि की किन्तु उस पर एक परिसीमा लगा दी कि शिक्षा का अधिकार 14 वर्ष तक के बच्चों के लिए ही सीमित है। उच्च शिक्षा के मामले में यह अधिकार राज्य की आर्थिक क्षमता पर निर्भर करेगा। अनुच्छेद 41, 45 एवं 46 के अधीन बाध्यताओं को राज्य को पूरा करना ही चाहिए चाहे अपनी संस्थाओं का निर्माण करके या निजी संस्थाओं को मान्यता देकर। आज के संदर्भ में निजी संस्थाएं आवश्यकता बन गयी है। परन्तु राज्य द्वारा उन पर उचित नियन्त्रण स्थापित करना चाहिए ताकि शिक्षा का बाजारीकरण न हो सके। राज्य की अनुमति से और एक निश्चित फीस लिया जाना कैपिटेशन फीस नहीं कहा जा सकता।

यूनि कृष्णन पी0जे0 बनाम आन्ध्र प्रदेश[46] के बाद में उच्चतम न्यायालय द्वारा निर्धारित किया गया कि शुल्क देने वाले 50 प्रतिशत स्थानों में 5 प्रतिशत अप्रवासी भारतीय छात्रों के लिए स्थान होंगे जिन्हें प्रवेश परीक्षा द्वारा योग्यता के आधार पर प्रवेश मिलेंगे।

अल्पसंख्यक शिक्षण संस्थानों से सम्बन्धित टी0एम0ए0 फाउन्डेशन बनाम स्टेट ऑफ कर्नाटक[47] के मामले में उच्चतम न्यायालय ने यूनीकृष्णन के मामले में कैपीटेशन शुल्क और छात्रों के प्रवेश से सम्बन्धित निर्णय को उलट दिया। अनुच्छेद 19(1) (जी) और अनुच्छेद 26 के अन्तर्गत सभी नागरिकों को और अनुच्छेद 30 के अन्तर्गत अल्पसंख्यक शिक्षण संस्थाओं की स्थापना एवं

संचालन का अधिकार प्राप्त है, किन्तु अनुच्छेद 19(6) के अन्तर्गत इस पर युक्तियुक्त निर्बन्धन लगाए जा सकते हैं। अनुच्छेद 30 के अन्तर्गत अल्पसंख्यक शिक्षण संस्थाओं की स्थापना एवं संचालन का अधिकार भी आत्यान्तिक नहीं है। लोक हित एवं राष्ट्र के हित में उस पर युक्तियुक्त निर्बन्धन लगाए जा सकते हैं। टी0एम0आई0 फाउन्डेशन के मामले में निर्णय की व्यापकता के कारण उसको समझने एवं लागू करने में कठिनाई हुई। फलतः याचिकाकर्ताओं द्वारा पुनः न्ययालय की शरण ली गयी। इस तरह की परिस्थितियों में इस्लामिक एकेडमी ऑफ एजूकेशन बनाम कनार्टक राज्य[48] के वाद में 5 न्यायाधीशों की पीठ गठित की गयी ताकि पूर्व के वाद में उत्पन्न उलझनों को स्पष्ट किया जा सके। गैर सहायता प्राप्त व्यवसायिक शिक्षण संस्थाओं द्वारा फीस के निर्धारण के प्रश्न पर न्यायालय ने कहा कि ये संस्थाएं अपना शुल्क नियत कर सकती हैं जिसके साथ वह संस्था के विकास आदि के लिए कुछ बढ़ा हुआ शुल्क भी प्राप्त कर सकती हैं एवं जब तक वे लाभ कमाने का कार्य नहीं करेंगी सरकारी दखल से बची रहेंगी। परन्तु ये अधिकार नियन्त्रण मुक्त नहीं है।

1.7अनुच्छेद 39(डी)

अनुच्छेद 39(डी) के अनुसार, ''राज्य पुरूषों और स्त्रियों दोनों को समान कार्य के लिए समान वेतन सुनिश्चित करेगा।''

अनुच्छेद 39(डी) के उपबन्धों को लागू करना सुनिश्चित करने के उद्देश्य से संसद द्वारा समान पारिश्रमिक अधिनियम, 1976 पारित किया गया है। यह अधिनियम महिला एवं पुरूष को समान कार्य या समान प्रकृति के कार्य हेतु समान पारिश्रमिक प्रदान करने का उपबन्ध करता है। इस विधि के उल्लंघन पर शिकायतों के निवारण हेतु अधिकारी की नियुक्ति का भी उपबन्ध इस अधिनियम में किया गया है। रणधीर सिंह बनाम भारत संघ[49] के वाद में उच्च्तम न्याालय द्वारा निर्धारित किया गया कि 'समान कार्य के लिए समान वेतन' एक मूल अधिकार नहीं है, परन्तु यह अनुच्छेद 14 एवं 16 के अधीन है, संविधान की उद्देशिका में 'समाजवाद' शब्द इसी उद्देश्य को प्रावधानित करता है।

1.8 अनुच्छेद 42

संविधान के अनुच्छेद 42 के अनुसार, राज्य काम की न्यायसंगत और मानवाचित दशाओं को सुनिश्चित करने के लिए प्रसूति सहायता के लिए उपबंध करेगा।

अनुच्छेद 42 भारत में श्रम कानून को विस्तृत आधार प्रदान करता है। अनुच्छेद 42 एवं 43 के बारे में वर्णन करते हुए उच्च्तम न्यायालय ने कहा कि संविधान कर्मकारों के कल्याण हेतु गहन सरोकार व्यक्त करता है। हालांकि न्यायालय द्वारा इसे प्रवर्तित नहीं कराया जा सकता है परन्तु निर्देशक तत्वों द्वारा इसे संवैधानिक लक्ष्य तो घोषित किया ही गया है।

निर्देश

1.संविधान के 42वें संशोधन अधिनियम 1976 द्वारा जोड़ा गया (3.1.1977 से प्रभावित)।

2.प्इपक

3.भारत के संविधान के अनुच्छेद 14–15

4.आशुतोष गुप्ता बनाम राजस्थान राज्य (2002) 4 एस0सी0सी0, 34 ए0आई0आर0 2002 एस0सी0 1533

5.वेड एण्ड फिलिप्स, कान्स्टीट्यूशन एण्ड एडमिनिस्ट्रेटिव लॉ 87 (1977)

6.जगन्नाथ प्रसाद बनाम उत्तर प्रदेश राज्य ए0आई0आर0 1961 एस0सी0 1245

7.गोरीशंकर बनाम भारत संघ ए0आई0आर0 1995 एस0सी0 55

8.चिरंजीत लाल बनाम भारत संघ ए0आई0आर0 1951 एस0सी0 41

9.वालसम्मा पाल बनाम कोचीन विश्वविद्यालय ए0आई0आर0 1996 एस0सी0 1011–1019

10.यूसुफ अब्दुल अजीज बनाम महाराष्ट्र राज्य ए0आई0आर0 1954 एस0सी0 1618

11.1988 संइ प्ब 1465

12.ए0आई0आर0 1995 एस0सी0 1648

13.ए0आई0आर0 1993 एस0सी0 286

14.जयपाल बनाम हरियाणा राज्य ए0आई0आर0 1988 एस0सी0 1504

15.क्षेत्रीय किसान ग्रामीण बैंक बनाम डी0बी0 शर्मा ए0आई0आर0 2001 एस0सी0 168

16.जयपाल बनाम हरियाणा राज्य ए0आई0आर0 1988 एस0सी0 1504

17.उत्तर प्रदेश राज्य बनाम जे0पी0 चौरसिया (1989)। एस0सी0सी0 121

18.गढ़वाल जल सम्मेलन कर्मचारी बनाम उ0प्र0 राज्य ए आई आर 1997 एस0सी0 2143

19.ए0आई0आर0 1981 एस0सी0 746

20.ए0आई0आर0 1986 एस0सी0 180

21.Ibid, मुख्य न्यायमूर्ति चन्द्रचूड़ के अनुसार, पृष्ठ 185

22.ए0आई0आर0 1963 एस0 सी0 1295

23.ए0आई0आर0 1950 एस0 सी0 27

24.ए0आई0आर0 1963 एस0 सी0 1295

25.ए0आई0आर0 1978 एस0 सी0 547

26.ए0आई0आर0 1981 एस0 सी0 746

27.ए0आई0आर0 1982 एस0 सी0 1473

28.ए0आई0आर0 1998 ए0 पी0 302

29.(1983) 3 एस0सी0सी0 387

30.1995 (Suppl) 2 एस0 सी0 सी0 182, ए0आई0आर0 1997 एस0 सी0 152

31.ए0आई0आर0 1986 एस0 सी0 180

32.(1984) एस0 सी0 सी0 66

33.ए0आई0आर0 1986 एस0सी0 180(1985) एस0 सी0 सी0 545

34.ए0आई0आर0 1987 एस0 सी0 2117

35.ए0आई0आर0 1987 एस0 सी0 2117

36.(1995) 3 एस0 सी0 सी0 42

37.1998 (8) एस0 सी0 सी0 296

38.(1985) 2 एस0 सी0 सी0 431

39.एम सी मेहता बनाम भारत संघ (1986)

40.(1987) 4 एस0 सी0 सी0 463

41.एम सी मेहता बनाम भारत संघ, (1998)। एस0सी0सी0 471

42.(1996) 2 जे आई (एस0 सी0) 196 ए0आई0आर0 1996 एस0 सी0 डब्ल्यू 1069

43.ए0 आई0 आर0 1975 एस0 सी0 1295

44.(1992) 3 एस0 सी0 सी0 666

45.(1993) 1 एस0 सी0 सी0 645

46.ए0आई0आर0 1993 एस0 सी0 2178 : (1993 ए0आई0आर0 एस0सी0डब्ल्यू 863)

47.(2002) 8 एस0 सी0 सी0 481 : एआईआर 2003 एस0 सी0 355 : (2002) एस सी डब्ल्यू 4957

48.(2003) 6 एस0 सी0 सी0 697, ए0आई0आर0 2003 एस0 सी0 3 724, (2003 ए0आई0आर0 एस सी डब्ल्यू 4240)

49.ए0आई0आर0 1982 एस0 सी0 879

अभ्यास प्रश्न

सत्य/असत्य कथन–

1. अनुच्छेद 14 का संरक्षण नागरिकों एवं गैर नागरिकों दोनों को प्राप्त है। सत्य/असत्य
2. .अनुच्छेद 14 किसी भी तर्कसंगत आधार पर तर्कीकरण की अनुमति प्रदान करता है परन्तु अनुच्छेद 15 के अन्तर्गत कुछ आधारों पर विभेद का प्रतिषेध किया गा है। सत्य/असत्य
3. अनुच्छेद 15 लिंग के आधार पर विभेद का प्रतिषेध करता है अतः महिलाओं के लिये विशेष प्रावधान असंवैधानिक हैं। सत्य/असत्य
4. राज्य पुरूषों के विरूद्ध महिलाओं के पक्ष में विभेद कर सकता है परन्तु महिलाओं के विरूद्ध पुरूषों के पक्ष में विभेद नहीं कर सकता। अतः यह समता के अधिकार के विरूद्ध है। सत्य/असत्य
5. मेनका गांधी वाद ने अनुच्छेद 21 को नवीन आयाम प्रदान किये। सत्य/असत्य

6. अनुच्छेद 21 के अन्तर्गत 'प्राण' के अधिकार में मरने का अधिकार भी शामिल है। सत्य / असत्य

1.9 सारांश

उद्देशिका 'भारत के लोगों के आदर्शों और आकांक्षाओं को समेटे हुए हैं। इनमें से एक सुनहरा आदर्श– 'प्रतिष्ठा एवं अवसर की समानता' के उद्देश्य को प्राप्त करने हेतु संविधान में समता के अधिकार को उपबंधित किया गया है।

अनुच्छेद 14 भेदभाव वाली विधियों एवं अन्य भेदभावों का प्रतिषेध करता है। अनुच्छेद 14 राज्य के मनमाने या भेदभावपूर्ण कार्य से बचाव करता है। अनुच्छेद 14 में निहित समानता के आयामों का न्यायिक घोषणाओं द्वारा विस्तार किया गया है। विधि की समानता के सिद्धान्त का यह अर्थ नहीं है कि सभी पर एक ही विधि लागू होगी वरन इसका अर्थ यह है कि एक जैसे वर्ग के लोगों पर एक ही विधि लागू होगी। समान परिस्थिति में समान विधि लागू होगी। अनुच्छेद 15(1) अनुच्छेद 14 का ही विस्तार है। अनुच्छेद 15(1), अनुच्छेद 14 में निहित समता के सामान्य सिद्धान्त को विशेष रूप में लागू करता है। वर्गीकरण का सिद्धान्त जो अनुच्छेद 14 में निहित है वहीं अनुच्छेद 15(1) में भी है। अनुच्छेद 14 नागरिकों एवं गैर नागरिकों पर समान रूप से लागू होता है। अनुच्छेद 15 केवल नागरिकों पर लागू होता है। कोई भी गैरनागरिक अनुच्छेद 15 के तहत अपने अधिकरों का दावा नहीं कर सकता जबकि अनुच्छेद 14 के तहत वह ऐसा कर सकते हैं। अनुच्छेद 15(3) राज्य को महिलाओं एवं बच्चों के प्रति विशेष प्रावधान बनाने की अनुमति देता है। अनुच्छेद 15(3) का उद्देश्य महिलाओं के आर्थिक एवं सामाजिक पिछड़ेपन को दूर करके उन्हें इतना सबल बनाना है जिससे महिला एवं पुरूष के बीच समानता स्थापित हो सके। आन्ध्रप्रदेश राज्य बनाम पी0बी0 विजय कुमार[12] के महत्वूपर्ण वाद में उच्चतम न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया कि अनुच्छेद 15(3) के अधीन राज्य सरकारी नौकरियों में महिलाओं के लिये आरक्षण का प्रावधान कर सकता है एवं कुल पदों में, 30 प्रतिशत तक अगर अन्य बातें समान हैं तो महिलाओं को वरीयता दिये जाने का नियम अनुच्छेद 15(3) के अधीन मान्य है।

अनुच्छेद 16(1), अनुच्छेद 14 की साधारणता को विस्तृत करता है एवं राज्य के अन्तर्गत रोजगार के सम्बन्ध में ''अवसर की समानता'' को संवैधानिकता प्रदान करता है। उच्चतम न्यायालय के निर्धारण के अनुसार 'समान कार्य के लिये समान वेतन' का सिद्धान्त अनुच्छेद 14, 16 एवं 39(ब) ओर संविधान की उपदेशिका में समाहित है।

अनुच्छेद 14 युक्तियुक्त वर्गीकरण की इजाजत देता है अर्थात वर्गीकरण का स्पष्ट आधार होना चाहिए। जिस आधार पर वर्गीकरण किया जा रहा है उसका वर्गीकरण के उद्देश्य से सुसंगत सम्बन्ध होना चाहिए।

जीवन का अधिकार जो अनुच्छेद 21 के अधीन प्रदान किया गया है वह मात्र एक पशु की तरह जीने तक सीमित नहीं है, इसका अर्थ भौतिक उत्तरजीविता से कहीं अधिक है। इस अधिकार के आयाम देश के आर्थिक विकास पर भी निर्भर है, अर्थात जीवन की आधारभूत जरूरतों के साथ–साथ वे सभी अधिकार भी व दैनिक स्वतन्त्रता के अन्तर्गत आते हैं स्वयं की पूर्ण अभिव्यक्ति के लिये आवश्यक है।

आलेगा तेलीस बनाम बाम्बे म्युनिसिपल कारपोरेशन[20] के मामले में उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि 'जीविकोपार्जन का अधिकार' अनुच्छेद 21 में शामिल है। परन्तु जीविकोपार्जन का अधिकार एक आत्यान्तिक अधिकार नहीं है। अनुच्छेद 39(डी) एवं 41 के अन्तर्गत इसे नीति निदेशक तत्व में रखा गया है अतः यह राज्य की जिम्मेदारी है।

अहमदाबाद म्यूनिसिपल कारपोरेशन बनाम खान गुलाम खान[30] एवं अन्य में शीर्ष न्यायालय ने कहा कि अनुच्छेद 19(1) (म) को अनुच्छेद 21 के साथ पढ़ने एवं मानवाधिकारों का सार्वभौम घोषणा के अनुच्छेद 25(1) के अनुसार प्रत्येक को अच्छे जीवन स्तर, सम्पूर्ण स्वास्थ्य एवं स्वयं के और अपने परिवार के कल्याण का अधिकार है। संविधान के अनुच्छेद 39 एवं 38 राज्य को सुविधाएं एवं अवसर प्रदान कराने का निर्देश देते हैं। अनुच्छेद 38 एवं 46 के अनुसार राज्य का यह कर्तव्य होगा कि समाज के कमजोर वर्गों को सामाजिक एवं आर्थिक न्याय प्रदान कर कल्याण को बढ़ावा प्रदान करे एवं समाज में व्याप्त असमानता दूर करे।

कन्ज्यूमर एजूकेशन एण्ड रिसर्च सेन्टर बनाम यूनियन ऑफ इण्डिया[36] के वाद में उच्चतम न्यायालय ने निर्धारित किया कि कर्मकारों को सेवा के दौरान एवं सेवानिवृत्त होने के पश्चात

भी 'स्वास्थ्य तथा चिकित्सी सहायता' प्राप्त करना एक मूल अधिकार है, न्यायालय ने कहा कि सभी प्राधिकारी, निजी व्यक्ति तथा कारखानों के स्वामी अनुच्छेद 32 और 142 के अधीन न्यायालय द्वारा जारी किये गये आदेशों का पालन करने के लिए बाध्य हैं।

पारम्परिक सिद्धान्त के अनुसार विकास एवं पर्यावरण एक दूसरे के विरोधी हैं, परन्तु अब 'सस्टेनेबिल डवलपमेंट' अर्थात चिरस्थायी विकास का धारणा ने सब बदल दिया है। ''च्वससनजमतश्े च्ंले'' सिद्धान्त अर्थात 'दूषित करने वाला ही भुगतान करता है', 'चिरस्थायी विकास' का एक आवश्यक लक्षण है।

अनुच्छेद 39(डी) के उपबन्धों को लागू करना सुनिश्चित करने के उद्देश्य से संसद द्वारा समान पारिश्रमिक अधिनियम, 1976 पारित किया गया है। यह अधिनियम महिला एवं पुरूष को समान कार्य या समान प्रकृति के कार्य हेतु समान पारिश्रमिक प्रदान करने का उपबन्ध करता है।अनुच्छेद 42 भारत में श्रम कानून को विस्तृत आधार प्रदान करता है। अनुच्छेद 42 एवं 43 के बारे में वर्णन करते हुए उच्च्तम न्यायालय ने कहा कि संविधान कर्मकारों के कल्याण हेतु गहन सरोकार व्यक्त करता है।

1.10 महत्वपूर्ण शब्दावली

Diceyan सिद्धान्त – ए0 वी0 डायसी उन्नीसवी शताब्दी के ब्रिटिश ज्यूरिस्ट थे। उन्होंने 'त्नसम वि सूं' अर्थात विधि के शासन का सिद्धान्त दिया, जिसका अर्थ है कानून सर्वोपरि है तथा वह सभी लोगों पर समान रूप से लागू होता है।

नीति निदेशक तत्व – संविधान के भाग 4 में उल्लिखित राज्य के नीति के निदेशक तत्व आयरलैण्ड के संविधान से लिए गये हैं। इसमें वे उद्देश्य एवं लक्ष्य समाहित हैं जिनका पालन राज्य का कर्तव्य है।

1.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1.सत्य 2.सत्य 3.असत्य 4.असत्य 5.सत्य 6.असत्य

1.12 संदर्भ ग्रन्थ

1.पाण्डे, डा0 जय नरायण, भारत का संविधान, 44वॉ संस्करण, सेन्ट्रल ला एजेन्सी

2.भारत का संविधान, द्विभाषी संस्करण, कानून प्रकाशन, संस्करण 2008

3.वसु आचार्य डा. दुर्गा दास, भारत का संविधान – एक परिचय, नौवा संस्करण पुनर्मुदण 2009, लक्सिस नेक्सिस बटरवर्थ वाधवा मागपुर।

1.13 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1.डा0 जे0जे0 आर उपाध्याय, भारत का संविधान

2.दुर्गा दास वसु, शार्टर कन्स्टीयूशन ऑफ इंडिया।

1.14 निबन्धात्मक प्रश्न

1.भारत के संविधान के अन्तर्गत कौन–कौन से मूल अधिकर प्रदान किए गए हैं?

2.जीविकोपार्जन एवं आश्रय के अधिकार से आप क्या समझते हैं?

3.शिक्षा के अधिकार को कैसे प्राप्त किया जा सकता है?

4.एकान्तता के अधिकार को परिभाषित कीजिए।

LL.M. PART- I
PAPER –Legal Regulation of Economic Enterprises

ब्लाक– 1 सरकारी विनियमन का औचित्य (The Rationale of Government regulation)

ईकाई– 2 **नई आर्थिक नीति – औद्योगिक नीति संकल्प, घोषणाएं एवं कथन। बदलते संदर्भ में सार्वजनिक, लघु, सहकारी, निगम, निजी एवं संयुक्त क्षेत्र का स्थान।** (The New Economic Policy-Industrial Policy Resolution, Declaration and Statements; The Place of Public, Small Scale, Co-Operative, Corporate, Private and Joint Sectors in the Changing Context)

इकाई संरचना

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 1956 के पश्चात आर्थिक नीति

2.3.1औद्योगिक नीति – 1956

2.3.21960 एवं 1970 के दशक में औद्योगिक नीतिगत उपाय

2.3.3औद्योगिक नीति– 1973

2.3.4. ओद्योगिक नीति – 1977

2.3.5 औद्योगिक नीति– 1980
2.3.61980 के दशक के दौरान औद्योगिक नीतिगत उपाय

2.4 औद्योगिक नीति – 1991

2.4.11991 के बाद में औद्योगिक नीतिगत उपाय

2.5 निजी एवं सार्वजनिक क्षेत्र, संयुक्त उद्यम

2.5.1सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों और/या राज्य सरकारें (जिनके साथ कोई अभिज्ञेय निजी प्रवर्तक नहीं हो लेकिन आम जनता की भागीदारी हो)

2.5.2सार्वजनिक उद्यम एवं सहकारी या किसी उपक्रम के कर्मचारियों के मध्य संयुक्त उद्यम

2.5.3सार्वजनिक उद्यम एवं घरेलू निजी उद्यमियों के मध्य संयुक्त क्षेत्र

2.5.4 सार्वजनिक उद्यमों एवं विदेशी सहयोगियों के मध्य संयुक्त उद्यम

2.6 नई आर्थिक नीति की उपलब्धियाँ

2.6.1 राष्ट्रीय उत्पाद में वृद्धि

2.6.2 आयात

2.6.3 राजकोषीय घाटा

2.6.4 विदेशी मुद्रा भंडार

2.6.5 कृषि उत्पादन

2.6.6 विदेशी निवेश

2.7 सारांश

2.8 महत्वपूर्ण शब्दावली

2.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

2.10 संदर्भ ग्रन्थ

2.11 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

2.12 निबंधात्मक प्रश्न

2.1.प्रस्तावना

भारत की अर्थव्यवस्था सकल घरेलू उत्पादन (GDP) की दृष्टि से विश्व की 11वीं एवं क्रय शक्ति समानता (PPP) में तीसरे सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था है। भारत जी–20 के प्रमुख अर्थव्यवस्थाओं में से एक है एवं ब्रिक्स (BRICS –ब्राजील, रूस, भारत, चीन एवं दक्षिण अफ्रीका–देशों का समूह) का सदस्य है। सन् 2011 में देश की औसत प्रति व्यक्ति आय 3,694 डालर मापी गयी जो विश्व में 129वें स्थान पर है, जो इसे निम्न–मध्यम अर्थव्यवस्था में स्थान देती है।

स्वतन्त्रता के पश्चात (सन् 1947 से पहले एवं कुछ बाद तक) भारतीय अर्थव्यवस्था आर्थिक विकास के सोवियत मॉडल से प्रेरित रही। जिसके अन्तर्गत बड़े सार्वजनिक क्षेत्र, उच्च आयात शुल्क जिसमें कई हस्तक्षेप नीतियाँ भी शामिल थीं। जिसकी परिणीति भारी अक्षमता एवं बड़े पैमाने पर भ्रष्टाचार से हुई। बाद में भारत ने मनमोहन सिंह जो उस समय वित्त मंत्री थे, के नेतृत्व में मुक्त बाजार सिद्धान्त को अपनाया एवं अन्तराष्ट्रीय व्यापार के लिए अपनी अर्थव्यवस्था

को उदार बनाया। उस समय भारत के प्रधानमंत्री पी0वी0 नरसिम्हाराव थे। इन मजबूत आर्थिक सुधारों के बाद देश की अर्थव्यवस्था ने बहुत तेजी से प्रगति की एवं उच्च विकास दर के साथ लोगों की आय में भी बढ़ोत्तरी हुई।

सन् 2000 के मध्य भारत में सबसे अधिक विकास दर दर्ज की गयी। भारत दुनिया में सबसे तेजी से बढ़ती हुई अर्थव्यवस्थाओं में से एक है। इस विकास का मुख्य श्रेय मध्यम वर्गीय उपभोक्ताओं का बड़ा वर्ग, बड़ी श्रम शक्ति एवं काफी संख्या में विदेशी निवेश को जाता है। भारत विश्व में 19वाँ सबसे बड़ा निर्यातक एवं 10वाँ सबसे बड़ा आयातक देश है। 2011–12 वित्तीय वर्ष में आर्थिक विकास दर 7 प्रतिशत के आस–पास मापी गयी।

2.2 उद्देश्य

इस ईकाई को पढ़ने के पश्चात आप समझ सकेंगे–

- नई आर्थिक नीतियों की जानकारी।
- नई आर्थिक नीति के पीछे का इतिहास।
- नई आर्थिक नीति की उपलब्धियाँ।

2.3 1956 के पश्चात आर्थिक नीति

सन् 1947 में स्वतन्त्रता के पश्चात आम राष्ट्रीय सहमति तीव्र औद्योगिकीकरण के पक्ष में थी जो न केवल आर्थिक विकास की कुंजी थी बल्कि आर्थिक सम्प्रभुता पाने का भी रास्ता था। क्रमिक आर्थिक नीति संकल्पों एवं घोषणाओं के द्वारा भारतीय आर्थिक नीति ईजाद हुई। कमिक पंच वर्षीय योजनाओं के माध्यम से औद्योगिक विकास को प्राथमिकता प्रदान की गयी। स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व बने बाम्बे–प्लान के आधार पर, पहली आर्थिक नीति जिसकी सन् 1948 में घोषणा की गयी, का ताना बाना बुना गया। औद्योगिक

विकास की रणनीति बनाई गई। इस समय तक भारत के संविधान ने पूर्ण आकार नहीं लिया एवं योजना आयोग का गठन भी नहीं हुआ था। आवश्यक विधिक ढाँचा भी उपस्थित नहीं था।

अतः इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि उक्त संकल्प अपने क्षेत्र एवं दिशाओं में बहुत व्यापक था। फिर भी उद्योगों के मध्य एक महत्वपूर्ण अन्तर का निर्माण किया गया जिसके अन्तर्गत सार्वजनिक क्षेत्र अर्थात सरकारी स्वामित्व के अन्तर्गत उद्योगों की नींव रखी गयी। निजी एवं संयुक्त क्षेत्र के उद्यमों को अलग–अलग किया गया।

तत्पश्चात् जनवरी 1950 में भारतीय संविधान को अपनाया गया। मार्च 1950 में योजना आयोग गठित हुआ एवं 1951 में औद्योगिक (विभाग और विनियमन) अधिनियम का अधिनियमन किया गया जिसका उद्देश्य लाईसेंस के माध्यम से उद्योगों के विकास को नियन्त्रित करने हेतु सरकार को आवश्यक कदम उठाने के लिये सशक्त किया गया। इस तरह 1956 की उद्योग नीति के लिये मार्ग प्रशस्त हुआ जो भारत के औद्योगिक विकास की रणनीति बनाने वाला पहला व्यापक घोषणा–पत्र था।

2.3.1 औद्योगिक नीति – 1956

औद्योगिक नीति– 1956 महालनोबिस के विकास मॉडल पर आधारित संकल्प था। जिसके अनुसार भारी उद्योगों को प्राथमिकता दी गयी। इसका उद्देश्य आर्थिक विकास को गति प्रदान करना एवं समाज हेतु समाजवादी रूप को प्राप्त करने हेतु साधन के रूप में औद्योगिकीकरण की प्रक्रिया को बढ़ावा देना था। पूंजी की कमी एवं अपर्याप्त उद्यमी आधार को देखते हुए औद्योगिक विकास की प्रत्यक्ष जिम्मेदारी राज्य को सौंपी गयी। वे सभी उद्योग जो मूल एवं सामाजिक महत्व रखते थे एवं जिनका चरित्र लोक उपयोगी सेवाओं का था एवं जिनमें बड़े पैमाने पर निवेश की आवश्यकता थी उन्हें सार्वजनिक क्षेत्र के लिए आरक्षित रखा गया।

1.प्रथम श्रेणी में 17 उद्योग आते थे (अनुसूची ए सहित) जिन पर सरकार का एकाधिकार था। इनमें, रेलवे, हवाई, परिवहन, हथियार– गोला बारूद, लोहा और इस्पात एवं परमाणु ऊर्जा शामिल थे।

2.दूसरी श्रेणी के अन्तर्गम 12 उद्योग (अनुसूची बी) रखे गये जो उत्तरोत्तर राज्य के स्वामित्व वाले थे परन्तु जिनमें निजी क्षेत्र के सहयोग की भी आशा की गयी थी।

3.तीसरी श्रेणी में अन्य सभी उद्योग सम्मिलित थे। यह उम्मीद की गयी कि निजी क्षेत्र इन उद्योगों का विकास आरम्भ करेगा परन्तु राज्य के लिये भी ये उद्योग खुले रहेंगे। यह माना गया कि राज्य निजी क्षेत्र में इन उद्योगों के विकास को बढ़ावा देगा। जो पंचवर्षीय योजनाओं में बनाये गये कार्यक्रमों के अनुसार होगा एवं जिसमें उचित राजकोषीय उपाय एवं पर्याप्त बुनियादी सुविधाएं सुनिश्चित की जायेंगी।

उद्योगों को अलग–अलग श्रेणियों में वर्गीकृत करने के बावजूद उक्त घोषणा पत्र बहुत लचीला था जिसमें राष्ट्रीय हितों के अनुसार सामन्जस्य एवं संशोधन करने की अनुमति दी गयी थी।

उक्त संकल्प का दूसरा उद्देश्य औद्योगिक विकास के जरिये क्षेत्रीय असमानताओ को दूर करना था। तदनुसार कम औद्योगिक विकास वाले क्षेत्रों के औद्योगिक विकास हेतु पर्याप्त बुनियादी ढाँचे पर जोर दिया गया। बड़े पैमाने पर रोजगार प्रदान करने की क्षमता को देखते हुए, आय के समान वितरण और उद्योगों के व्यापक विस्तार हेतु उक्त घोषणा पत्र में छोटे एवं कुटीर उद्योगों को सभी प्रकार की सहायता उपलब्ध कराने के सरकार के संकल्प को दोहराया गया। वास्तव में यह घोषणा पत्र भारत की मूल्य आधारित प्रणाली को दर्शाता था एवं औद्योगिक उत्पादन में आत्मनिर्भरता का प्राप्त करने हेतु केन्द्रित था। सन् 1956 का औद्योगिक नीति एक मील का पत्थर घोषणा पत्र था एवं यह क्रमिक नीतिगत घोषणाओं का आधार बना।

2.3.2 1960 एवं 1970 के दशक में औद्योगिक नीतिगत उपाय

सन1964 में आई0ओ0आर0 एक्ट 1951 के अन्तर्गत आर्थिक शक्ति के केन्द्रीयकरणएवंऔद्योगिक लाइसेंसिंग के तहत कार्यवाही के विभिन्न पहलुओं के मूल्यांकन हेतु एकाधिकार जाँच आयोग (Monopolies Inquiry Commission) का गठन किया गया। इस बात पर बल दिया गया कि योजनाबद्ध अर्थव्यवस्था उद्योगों के विकास में सहायक होगी। MIC की जाँच द्वारा यह निष्कर्ष निकला कि लाइसेंसिंग प्रणाली में बड़े औद्योगिक घरानों ने असंगत रूप से अधिक लाइसेंसों को प्राप्त किया जिसके द्वारा योग्यता पीछे छूट गयी एवं पूर्व क्रयाधिकार को बढ़ावा मिला। तत्पश्चात् 1967 में औद्योगिक लाइसेंसिंग नीति जांच समिति (दत्त समिति) का गठन

किया गया। जिसकी सिफारिशों के अनुसार, बड़े औद्योगिक घरानों को मुख्य एवं भारी औद्योगिक निवेश क्षेत्रों हेतु ही लाइसेंस प्रदान किया जाना चाहिए अतः औद्योगिक लाइसेंसिंग नीति के पुनः स्थापन की जरूरत महसूस की गई।

सरकार को आर्थिक शक्ति के केन्द्रीयकरण को प्रभावी तरीके से नियन्त्रित करने हेतु सशक्त बनाने के लिए 1969 में एकाधिकार और प्रतिबंधात्मक व्यापार व्यवहार (MRTP) अधिनियम पारित किया गया। दत्त समिति द्वारा 350 लाख रूपयों से अधिक की सम्पत्ति रखने वाले को बड़े औद्योगिक घरानों के रूप में परिभाषित किया गया था। एम0आर0टी0पी0 एक्ट, 1969 में उनको बड़े औद्योगिक घरानों की श्रेणी में रखा गया था जिनकी कुल सम्पत्ति 200 लाख रूपये एवं अधिक थी। बड़े उद्योगों को एम0आर0टी0पी0 कम्पनियों के रूप में नामित किया गया एवं जो उद्योग सरकार या लघु क्षेत्र के लिए आरक्षित नहीं थे उनमें वे भाग ले सकते थे।

1970 की नई औद्योगिक लाइसेंसिंग नीति के तहत उद्योगों को चार श्रेणियों में विभाजित किया गया। प्रथम श्रेणी को 'मूलभूत क्षेत्र' (**Core Sector**) कहा गया जिसके अन्तर्गत आधारभूत, महत्वपूर्ण एवं सामारिक उद्योग सम्मिलित थे, द्वितीय श्रेणी को 'भारी निवेश क्षेत्र' (**Heavy Investment Sector**) का नाम दिया गया जिसमें वे परियोजनाएं आती थीं जिनमें 50 लाख रूपयों या अधिक का निवेश सम्मिलित था। तृतीय श्रेणी जिसे 'मध्य क्षेत्र' (**Middle Sector**) का नाम दिया गया, के अन्तर्गत 10 लाख रूपयों से 50 लाख रूपयों तक की निवेश परियोजनाएं आती थीं। चतुर्थ श्रेणी के अन्तर्गत 10 लाख रूपयों से कम की निवेश परियोजनाएं आती थीं एवं उन्हें लाइसेंस से छूट मिली हुई थी। सन् 1970 की उद्योग लाइसेंस नीति के द्वारा मूलभूत, भारी एवं निर्यातोन्मुख क्षेत्रों में बड़े औद्योगिक घरानों की भूमिका सीमित की गयी।

2.5.3 औद्योगिक नीति– 1973

औद्योगिक गतिविधियों का बड़े औद्योगिक घरानों में केन्द्रीयकरण रोकने के उद्देश्य से 1973 की औद्योगिक नीति में छोटे एवं मध्यम उद्योगों को, जन उपभोग की वस्तुओं के उत्पादन में

नई ईकाईयों की स्थापना में, बड़े घरानों और विदेशी कम्पनियों पर प्राथमिकता दी गयी। नए उपक्रमों को अचल सम्पत्ति के माध्यम से 10 लाख रू तक की सम्पत्ति का विस्तार करने के लिए लाइसेंस से छूट एम आर टी पी कम्पनियों, विदेशी कम्पनियों एवं मौजूदा लाइसेंसयुक्त या पंजीकृत उपक्रमों जिनकी अचल सम्पत्ति 50 लाख रूप्यों एवं उससे अधिक है, को नहीं प्रदान की गई।

2.3.4. ओद्योगिक नीति – 1977

ओद्योगिक नीति, 1977 के द्वारा लघु, अति लघु एवं कुटीर उद्योगों को बढ़ावा दिया गया एवं ओद्योगिक क्षेत्र के विकेन्द्रीकरण पर बल दिया गया। इसने ओद्योगिक एवं कृषि क्षेत्रों के मध्य घनिष्ठ संबंध प्रदान कियौ बिजली उत्पादन एवं पारेषण को ऊँची प्राथमिकता दी गई। लघु क्षेत्र के लिए अनन्य रूप से आरक्षित मदो की सूची का विस्तार करते हुए इसे 180 मदो से 500 मदों से अधिक विस्तार प्रदान किया गया। पहली बार लघु क्षेत्र के अन्दर अति लघु इकाई को परिभाषित किया गया। इसके अनुसार एक इकाई जिसमें मशीनरी एवं अन्य उपकरणों पर 1 लाख रूपयों तक का निवेश किया गया हो और जो शहर में स्थित हो या गांव में जिसकी आबादी 50,000 से कम हो (1971 की जनगणना के अनुसार), उसे अति लघु इकाई का दर्जा दिया गया। आधारिक वस्तुओं, पूंजीगत वस्तु, उच्च प्राद्योगिकी वाले उद्योगों जो लघु क्षेत्र एवं कृषि क्षेत्र के विकास के लिए महत्वपूर्ण थी उनका व्यापक पैमाने पर निरूपण किया गया। यह भी कहा गया कि जो विदेशी कम्पनियां अपने विदेशी शेयर का चालीस प्रतिशत तक विदेशी मुद्रा विनियमन अधिनियम, (**FERA**) 1973 के अन्तर्गत डाइल्यूट करेंगी उनके साथ भारतीय कम्पनियों की तरह व्यवहार किया जाएगा। 1977 की नीति व्यक्तव्य द्वारा उद्योगों की एक सूची जारी की गयी। जिसमें वित्तीय या तकनीकी प्रवृत्ति के विदेशी सहयोग की अनुमति प्रदान नहीं थी क्योंकि स्वदेशी तकनीकी पहले से उपलब्ध थी। पूर्ण स्वामित्व वाली विदेशी कम्पनियों को केवल उन्हीं क्षेत्रों में अनुमति दी गई जो उच्च निर्यातोन्मुख या अत्याधुनिक तकनीकी क्षेत्र थे। सभी अनुमोदित विदेशी निवेश के लिये कम्पनियां पूंजी, लाभांश, मुनाफा एवं रायल्टी आदि को स्वदेश भेजने के लिए स्वतन्त्र थी। इसके अलावा संतुलित क्षेत्रीय

विकास को सुनिश्चित करने के क्रम में, कुछ सीमा के अन्दर बड़े महानगरीय शहरों (1लाख की आबादी से अधिक) एवं शहरी क्षेत्रों (0.5 लाख की आबादी से अधिक जनसंख्या वाले) में नई औद्योगिक ईकाई की स्थापना के लिए अनुमति नहीं प्रदान करने का निर्णय लिया गया।

2.3.5 औद्योगिक नीति– 1980

सन् 1980 की औद्योगिक नीति वक्तव्य द्वारा घरेलू बाजार में प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा देने, उद्योगों का तकनीकी उन्नयन एवं आधुनिकीकरण की सहमति प्रदान की गयी। उक्त नीति के कुछ सामाजिक आर्थिक उद्देश्य इस प्रकार थे–

1.स्थापित क्षमता का अधिकतम उपयोग

2.उच्च उत्पादकता

3.उच्च रोजगार के स्तर

4.क्षेत्रीय असमानता को दूर करना

5.कृषि आधार को मजबूत करना

6.निर्यातोन्मुख उद्योगों को बढ़ावा देना

7.उच्च कीमतों एवं निम्न गुणवत्ता से उपभोक्ताओं का संरक्षण।

कार्यात्मक क्षेत्रों जैसे संचालन, वित्त, विपणन, और सूचना प्रणाली के प्रबंध संवर्गों में विकास द्वारा सार्वजनिक क्षेत्रों के उपक्रमों की क्षमता को पुनर्जीवित करने के लिए नीतिगत उपायों की घोषणा की गयी। प्रतिवर्ष पांच फीसदी तक क्षमता की स्वतः विस्तार की अनुमति प्रदान की गयी। विशेष रूप से उन उद्योगों में जो आधारिक क्षेत्र में थे एवं जिन उद्योगों में लम्बी अवधि तक की निर्यात क्षमता थी उन औद्योगिक ईकाई को विशेष प्रोत्साहन दिया गया जिन्होंने औद्योगिक प्रक्रियाओं एवं प्रोद्योगिकी द्वारा ऊर्जा का अधिकतम उपयोग एवं ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोतों के दोहन को लक्ष्य बनाया था। लघु उद्योगों के विकास को बढ़ावा देने के उद्देश्य से लघु ईकाई में निवेश की सीमा 2 लाख रूपयों और सहायक ईकाईयों में 2.5 लाख रूपयों की निवेश सीमा बढ़ाई गयी। लघुतर ईकाईयों में निवेश की सीमा 2 लाख रूपयों की बढ़ायी गयी।

2.3.61980 के दशक के दौरान औद्योगिक नीतिगत उपाय

आजादी के पश्चात पहले तीन दशकों तक बुनियादी उद्योगों की स्थापना एवं देश में व्यापक बुनियादी सुविधाओं के निर्माण में मदद हेतु नीतिगत उपाय अपनाए गये। भारतीय उद्योगों को उभरती चुनौतियों से सामना करने के लिये तैयार करने हेतु नीतिगत उपायों की आवश्यकता सातवीं पंचवर्षीय योजना (1985–1990) में महसूस की गयी। उत्पादकता, गुणवत्ता बढ़ाने एवं उत्पादन की लागत कम करने के लिए तकनीकी एवं प्रबंधकीय आधुनिकीकरण हेतु अनेकों उपाय शुरू किये गये। सार्वजनिक क्षेत्रों को अनेकों प्रतिबंधों से मुक्त कर उन्हें अधिक स्वायत्ता प्रदान की गयी। 1980 के दशक के दौरान विनियमों में ढील देने की प्रक्रिया में कुछ प्रगति हुई। सन् 1988 में नकारात्मक सूची में दर्ज 26 उद्योगों को छोड़कर अन्य सभी को लाइसेंस मुक्त कर दिया गया। हालांकि छूट निवेश और व्यवसायिक सीमा के भीतर थी। 1980 के दौरान, मोटरवाहन, उद्योग, सीमेंट, सूती वस्त्र, खाद्य प्रसंस्करण एवं पालिस्टर फिलामेंट यार्न उद्योगों में आधुनिकीकरण एवं उत्पादकता का विस्तार हुआ।

देश के पिछड़े इलाकों में औद्योगिकरण को बढ़ावा देने के उद्देश्य से जून 1988 में भारत की सरकार ने विकास केन्द्र योजना (**Growth Centre Scheme**) की घोषणा की जिसके अन्तर्गत देश भर में 71 विकास केन्द्रों को स्थापित किया जाना प्रस्तावित किया गया। विकास केन्द्रों को, उद्योगों को आकर्षित करने के उद्देश्य से ऊर्जा, पानी, दूरसंचार, बैंकिंग जैसी आधारभूत सुविधाओं से युक्त किया गया।

2.4 औद्योगिक नीति – 1991

औद्योगिक नीति, 1991 के अनुसार ''सरकार, उद्यमिता को बढ़ावा देने, अनुसंधान एवं विकास में निवेश के जरिये स्वदेशी तकनीकी का विकास करने, नई प्रौद्योगिकी को लाने, विनियामक प्रणाली की समाप्ति, पूंजी बाजार का विकास करने एवं आम आदमी के हित के लिए प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा देने के लिए ठोस नीतिगत ढांचा जारी रखेगी।'' आगे कहा गया ''देश के पिछड़े क्षेत्रों में उचित प्रोत्साहन, संस्थानों और बुनियादी सुविधाओं में निवेश के माध्यम से उद्योगों के

प्रसार को सक्रिय रूप से बढ़ावा दिया जायेगा।'' उद्योग नीति–1991 का उद्देश्य, उत्पादकता में अनवरत विकास, लाभकारी रोजगार में बढ़ावा और अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा को प्राप्त करने और विश्व स्तर पर भारत को प्रमुख स्थान दिलाने के लिये मानव संसधान का अधिकतम उपयोग करना है। स्पष्ट रूप से यह नीति, भारतीय उद्योगों को नौकरशाही के नियन्त्रण से मुक्त करने हेतु केन्द्रित थी। इसके द्वारा कई दूरगामी सुधार किये गये। लाइसेंस नीति में पर्याप्त संशोधन की जरूरत महसूस की गयी ताकि उभरती घरेलू एवं वैश्विक मौकों का फायदा उत्पादकता में सुधार के द्वारा प्राप्त किया जा सके। इसी के अनुसार अधिकतर उद्योगों को लाइसेंस नीति से मुक्त कर दिया गया। सुरक्षा और सामरिक, सामाजिक और पर्यावरण मुद्दों से सम्बन्धित मुट्ठी भर उद्योग ही इनसे अलग रखे गये।

केवल 18 उद्योगों के लिये अनिवार्य अनुमति की आवश्यकता थी। इनमें, कोयला, लिग्नाइट, आसवन, मादक पेय, सिगार, सिगरेट, ड्रग्स, दवाइयाँ, सफेद वस्तुएं, खतरनाक रसायन शामिल थे। एक लाख से अधिक आबादी वाले शहरों में उद्योगों को लगाने (अनिवार्य अनुमति वाले उद्योगों के अलावा) के नियमों में ढील दी गयी। लघु क्षेत्र में आरक्षण बरकरार रखा गया। घरेलू एवं विदेशी निवेश की आश्यकता को स्वीकारते हुए 1991 की उद्योग नीति में विदेशी प्रत्यक्ष निवेश को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया। उच्च प्राथमिकता वाले उ़द्योगों में जिनमें बड़े निवेश एवं आधुनिक प्रोद्योगिकी की जरूरत थी। 51 प्रतिशत तक के प्रत्यक्ष विदेशी निवेश की अनुमति दी गयी। ट्रेडिंग कम्पनियों में विशेष रूप से जो निर्यात की गतिविधियों में लगी थी उनमें 51 प्रतिशत तक के विदेशी निवेश की अनुमति प्रदान की गयी। इन सब महत्वपूर्ण पहल से निवेश में बढ़ोत्तरी की उम्मीद बांधी गयी। भारतीय कम्पनियों में तकनीकी कुशलता लाने के उद्देश्य से उच्च प्राथमिकता वाले उद्योगों में तकनीकी संविदाओं को स्वतः अनुमोदन प्रदान किया गया एवं विदेशी तकनीकी विशेषज्ञों की भर्ती की प्रक्रिया को सुगम बनाया गया। सार्वजनिक क्षेत्र की ईकाईयों में कम उत्पादन, जरूरत से ज्यादा स्टाफ का होना, तकनीकी उच्चीकरण की कमी एवं कम रिटर्न को देखते हुए इन ईकाईयों के पुनर्गठन की दिशा में मुख्य प्रयास किये गये। सार्वजनिक क्षेत्रों की ईकाईयों के लिये संसाधान बढ़ाने एवं लोगों की भागीदारी बढ़ाने के लिये, इसके शेयरों में म्यूचुअल फंड, वित्तीय संस्थानों, आमजन एवं

कर्मचारियों की हिस्सेदारी निश्चित करने का निर्णय लिया गया। इसी प्रकार बीमार सार्वजनिक क्षेत्र की ईकाई को पुनर्जीवन प्रदान करने के उद्देश्य से उन्हें बोर्ड फॉर इण्डस्ट्रियल एण्ड फाइनेंसियल रिकन्सट्रक्शन (BIFR) को सौंपने का निर्णय लिया गया। बोर्ड को अधिक प्रबंधकीय स्वायत्ता प्रदान करने की नीति लागू की गयी।

1991 की उद्योग नीति व्यक्तव्य में यह महसूस किया गया कि एम0आर0टी0पी0 अधिनियम के जरिए बड़ी कम्पनियों के निवेश निर्णयों में सरकारी हस्तक्षेप उद्योगों के विकास के लिए हानिकारक सिद्ध हुआ है। अतः एम0आर0 टी0पी0 कम्पनियों में निवेश के निर्णय में पूर्व प्रविष्टि जाँच के नियम को समाप्त कर दिया गया। नीति का जोर अनुचित और अवरोधक व्यापारिक व्यवहार को नियन्त्रित करने पर अधिक था। विलय, समामेलन एवं अधिग्रहण से संबंधित नियन्त्रित प्रावधानों को समाप्त कर दिया गया।

2.4.1. 1991 के बाद में औद्योगिक नीतिगत उपाय

1991 के बाद औद्योगिक नीतिगत उपायों एवं सरलीकरण की प्रक्रिया की निरंतर आधार पर समीक्षा की गयी। वर्तमान में केवल 6 उद्योग अनिवार्य अनुमति (Licensing policy) के अन्तर्गत आते हैं। इस प्रकार केवल तीन उद्योग सार्वजनिक क्षेत्र के लिए आरक्षित रह गये हैं। 1991 से शुरू किए गये कुछ प्रमुख नीतिगत उपाय इस प्रकार है– 1991 के बाद से प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (FDI) को बढ़ावा देना भारत की आर्थिक नीति का अभिन्न भाग बन गया। सरकार द्वारा उदार एवं पारदर्शी विदेशी निवेश प्रक्रिया सुनिश्चित की गयी जहाँ विदेशी स्वामित्व की बिना कोई सीमा निर्धारित किए हुए स्वतः मार्ग से विदेशी निवेश को खोला गया। विशेष आर्थिक क्षेत्रों (SEZ) के लिए निर्माण गतिविधियों हेतु 100 प्रतिशत तक विदेशी प्रत्यक्ष निवेश स्वतः मार्ग (नजवउंजपब तवनजम) के अन्तर्गत खोला गया। हाल में ही 2004 में विदेशी निवेश की सीमा बढ़ाकर, निजी बैंकिंग क्षेत्र में 74 प्रतिशत तक, तेल अन्वेषण में 100 प्रतिशत तक, पेट्रोलियम उत्पाद विपणन में 100 प्रतिशत तक, पेट्रोलियम उत्पाद पाइप लाइनों में 100 प्रतिशत तक, प्राकृतिक गैस और एल एन जी पाइप लाइनों में 100 प्रतिशत तक और विज्ञान

और तकनीकी पत्रिकाओं, पिरियोडिकल्स एवं जनरल्स के प्रकाशन में 100 प्रतिशत तक कर दिया है। फरवरी 2005 में दूरसंचार क्षेत्र की कुछ सेवाओं में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश 49 प्रतिशत से बढ़ाकर 74 प्रतिशत कर दिया गया है।

लघु क्षेत्र में निर्माण हेतु वस्तुओं का आरक्षण भारत की औद्योगिक नीति का एक महत्वपूर्ण सिद्धान्त रहा है। अप्रैल 2001 के बाद से मात्रात्मक प्रतिबंध हटाने से बढ़ती हुई आयात प्रतिस्पर्धा की महसूस कर सरकार ने अनारक्षण की नीति को अपनाया एवं मार्च 1999 तक जो 821 मद लघु क्षेत्र के लिए आरक्षित थे उन्हें क्रमशः घटाते हुए मार्च 6, 2005 तक 506 मदों पर ले आयी। 2005 के केन्द्रीय बजट में 108 और मदों को आरक्षण की सूची से हटाने का प्रस्ताव रखा गया है। लघु क्षेत्र की इकाइयों में संयत्रों आदि पर निवेश की सीमा को भी सरकार द्वारा समय–समय बढ़ाया जाता रहा है। कुछ लघु क्षेत्र की ईकाई को आर्थिक स्तर पर सक्षमता दिलाने के उद्देश्य से अक्टूबर 2001 के बाद भिन्न निवेश सीमा को स्वीकार किया गया। वर्तमान में 41 आरक्षित मद है जिनमें निवेश की अनुमत सीमा 50 लाख रूपयों तक है। जबकि अन्य लघु क्षेत्र की ईकाईयों के लिये यह सीमा मात्र 10 लाख रूपयों तक ही अनुमत है। अन्य उद्योग उपक्रमों द्वारा लघु क्षेत्र की ईकाईयों में कुल हिस्सेदारी की 24 प्रतिशत हिस्सेदारी तक की अनुमति प्रदान की गयी है। इसका उद्देश्य लघु क्षेत्र को पूंजी बाजार में सक्षम बनाने एवं उनमें आधुनिकीकरण, तकनीकी उच्चीकरण, अनषंगीकरण एवं उप–संविदा (ठेका) को बढ़ावा देना है।

बाजार में प्रतिस्पर्धा पर प्रतिकूल प्रभाव वाले क्रियाकलापों को रोकने के लिए प्रतिस्पर्धा अधिनियम 2002, के अन्तर्गत 2003 में Competition Commission of India का गठन किया गया है।

क्षेत्रीय असंतुलन को कम करने के लिए, उत्तर–पूर्व के क्षेत्र में औद्योगिकरण को बढ़ावा देने के उद्देश्य से सरकार ने दिसम्बर 1997 में एक नई उत्तर–पूर्व औद्योगिक नीति की घोषणा की। यह नीति अरूणाचल प्रदेश, आसाम, मणिपुर, मेघालय, मिजोरम, नागालैण्ड एवं त्रिपुरा पर लागू होती है। इस नीति द्वारा उत्तर–पूर्व में औद्योगिक ईकाई को अनेक रियायतें प्रदान की गयी

है। उदाहरण के लिये औद्योगिक बुनियादी सुविधाओं का विकास, विभिन्न स्कीमों के अन्तर्गत सब्सिडी, 10 वर्ष की अवधि के लिए उत्पाद शुल्क एवं आयकर छूट आदि।

सार्वजनिक क्षेत्र की ईकाईयों के विनिवेश की प्रक्रिया में बड़ा रणनीतिक बदलाव आया है। दिसम्बर 2004 तक इन ईकाईयों में विनिवेश के जरिये 4.78 अरब सरकार द्वारा कमा लिए गये हैं। सामान्य नीतिगत उपायों के अलावा कुछ विशेष नीतिगत उपाय भी अपनाए गये हैं। उदाहरण के लिए विद्युत अधिनियम 2005 के जरिये ऊर्जा उत्पादन को लाइसेंस से मुक्त करके कैप्टिव ऊर्जा संयंत्रों की अनुमति प्रदान की गयी है। प्रसारण क्षेत्र में भी निजी क्षेत्र की भागीदारी हेतु सुविधाएं प्रदान की गयी हैं एवं ग्रिड क्षेत्र को भी खोल दिया गया है। प्रमुख आधारिक क्षेत्रों जैसे जैसे दूरसंचार, सड़क एवं बंदरगाहों में निजी क्षेत्र की भागीदारी को बढ़ाने के उद्देश्य से अनेकों नीतिगत उपाय किए गये हैं। सड़कों एवं पुलों के निर्माण एवं रखरखाव में 100 प्रतिशत विदेशी भागीदारी की अनुमति प्रदान की गयी है। राजमार्ग क्षेत्र में बड़ी कम्पनियों द्वारा निजी क्षेत्र के वित्त पोषण को बढ़ावा देने के उद्देश्य से एम0आर0टी0पी0 के प्रावधानों में ढील दी गयी है। जाहिर है भारत में औद्योगिक नीति के विकास की प्रक्रिया में सरकारी हस्तक्षेप व्यापक है। कई पूर्व के देशों के विपरीत जहां मजबूत औद्योगिक निजी क्षेत्र को बनाने में सरकारी हस्तक्षेप ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है, भारत ने प्रारंभिक चरण में प्रमुख उद्योगों पर राज्य नियन्त्रण का विकल्प चुना। इन उद्योगों को बढ़ावा देने के लिए सरकार ने न केवल ऊँचे शुल्क लगाए और आयात प्रतिबंध लागू किये बल्कि राष्ट्रीयकृत फर्मों को सब्सिडी प्रदान की, निवेश भी किया एवं भूमि के प्रयोग एवं कीमतों पर भी नियन्त्रण रखा। भारत में बुनियादी ढाँचा उपलब्ध कराने एवं स्थिर बड़ी आर्थिक नीतियों को बनाए रखने में सरकार की भूमिका पर किसी को संदेह नहीं है। प्रारम्भ में भारत द्वारा बन्द बाजार नीति अपनाई गई परन्तु बाद में खुले बाजार की नीति अपना कर उसने खुले व्यापार को बढ़ावा दिया।

बन्द बाजार की नीति द्वारा ऊँचे आयात शुल्क एवं आयात कोटा निर्धारित किया गया परन्तु इससे भारतीय उद्योग विदेश बाजार में प्रतिस्पर्धा नहीं कर पाये। निम्न तकनीक एवं कम गुणवत्ता वाले उत्पादन के कारण विकास रूक गया।

1948 एवं 1956 की औद्योगिक नीतियों में औद्योगिक उत्पादन में आत्मनिर्भरता को पाने की इच्छा प्रतिबिंबित होती है। सीमित विदेशी मुद्रा के साथ सरकार ने घरेलू उत्पादकता को बढ़ावा दिया। मध्य 1980 तक इस आधार नीति ने औद्योगिकरण को मार्गदर्शन दिया। सन् 1991 के बाद से आर्थिक सुधार लागू किए गये। इससे पहले औद्योगिक लाइसेंसिंग ने निवेश को नियन्त्रित करने, भारतीय उद्योग क्षेत्र के विस्तार को नियन्त्रित करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। संरक्षित वातावरण में उद्योगों के विकास ने कई विकृतियों को जन्म दिया। घरेलू बाजार को विदेशी स्पर्धा से बाहर रखा। अधिकतर भारतीय निर्माताओं ने निर्यात को अवशिष्ट संभावना के रूप में ही देखा। उत्पादन की गुणवत्ता, तकनीकी विकास ने लिए अनुसंधान एवं व्यापक अर्थव्यवस्था को पाने में कम ही ध्यान दिया गया। सन् 1991 की औद्योगिक नीति द्वारा लाइसेंसिंग प्रथा को त्यागा गया एवं विदेशी निवेश एवं तकनीकी स्थानान्तरण को बढ़ावा दिया गया एवं सार्वजनिक क्षेत्र को निजी क्षेत्र के लिए खोला गया। भारतीय उद्योगों का भविष्य में विकास निर्माण क्षेत्र में सम्पूर्ण उत्पादकता में सुधार पर निर्भर है। इसी के साथ तकनीकी उच्चीकरण, प्रचार एवं प्रयास द्वारा निर्यात हेतु बाजार की खोज, व्यापारिक समझौते एवं समर्थकारी विधिक माहौल भी भारतीय अर्थव्यवस्था की दिशा निर्धारित करने में सक्षम होगा।

2.5 निजी एवं सार्वजनिक क्षेत्र, संयुक्त उद्यम

संयुक्त क्षेत्र का सिद्धान्त (कुछ विकासशील देशों में संयुक्त उद्यम के समान) जहाँ सरकार एवं निजी उद्यमी नये उपक्रमों की स्थापना हेतु हाथ मिलाते हैं, भारत के लिए पुराना है। तत्कालीन रियासतों (बड़ौदा राज्य, त्रावनकोर एवं कोचीन और हैदराबाद आदि) ने बड़ी औद्योगिक परियोजना में जोखिम उठाते हुए हिस्सेदारी के लिए हाथ मिलाया। इसके अलावा यह एक व्यापक साझा दृष्टिकोण था कि स्वतन्त्र भारत में राज्य ने नए एवं छोटे उद्यमियों को वित्तीय एवं अन्य सहायता प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। एयर इंडिया इंटरनेशनल निजी क्षेत्र एवं राज्य द्वारा साझे उद्योग का उल्लेखनीय उदाहरण है। यह कम्पनी टाटा द्वारा 1948 में स्थापित की गयी थी। भारत सरकार ने कम्पनी में 49 प्रतिशत पूंजी शेयर प्रदान किया। बाद में सरकार ने टाटा सन्स लिमिटेड से अतिरिक्त 2 प्रतिशत शेयर प्राप्त कर इसे सरकारी कम्पनी

में परिवर्तित कर लिया। सरकार की 51 प्रतिशत हिस्सेदारी होते हुए भी एयर इंडिया टाटा के प्रबन्ध के अन्तर्गत तब तक रही जब तक 1953 में सरकार द्वारा इसका पूरी तरह से अधिग्रहण नहीं कर लिया गया। सन् 1966–67 में 12 ऐसे अन्य उपक्रम थे जिसमें प्रत्यक्ष प्रबंधकीय नियन्त्रण के बिना केन्द्र सरकार की इक्विटी पूंजी में पर्याप्त हिस्सेदारी थी। कुछ मामलों में सार्वजनिक क्षेत्रों के उद्यमों में विदेशी कम्पनियों द्वारा इक्विटी भागीदारी की भी अनुमति प्रदान की गयी। उदाहरण के तौर पर मद्रास फर्टिलाइजर्स लिमिटेड को एमको इन्टरनेशनल, संयुक्त राज्य अमेरिका, नेशन ईरानियन ऑयल कं0 (ईरान) के साथ भागीदारी में एक संयुक्त उद्यम के रूप में स्थापित किया गया है। ये दो विदेशी कम्पनियां मद्रास रिफाइरी लिमिटेड में भी भागीदार थी। कोचीन रिफाइनरी लि0 को, फिलिप्स पेट्रोलियम कं0, संयुक्त राज्य अमेरिका एवं डंकन ब्रदर्स लि0 की भागीदारी के साथ स्थापित किया गया था। लुब्रीजोल इंडिया लि0 को लुब्रीजोल कारपोरेशन एवं संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ भागीदारी में स्थापित किया गया। त्रिवेणी स्ट्रक्चर्स लिमिटेड वोएस्ट अल्पाइन आस्ट्रिया की भागीदारी में स्थपित की गयी। मारूति उद्योग लि0 जिसे सुजुकी मोटर्स कं0 लिमिटेड, जापान की संयुक्त भागीदारी में स्थापित किया गया, एक अच्छा उदाहरण पेश करता है जहां किसी विदेशी कम्पनी को भारत सरकार के साथ हाथ मिलाने के लिए आमन्त्रित किया गया। उपरोक्त सभी सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यम हैं एवं इनका प्रबंधन विदेशी भागीदारों के प्रतिनिधित्व के साथ सरकार द्वारा नामित प्रबन्धक मंडल द्वारा किया जा रहा है। 1956 की औद्योगिक नीति में यह परिकल्पना की गयी कि राज्य निजी क्षेत्र की सहायता में उस भूमिका को पूरी तरह से अदा करेगा जो उसे समय–समय पर औद्योगिक नीति एवं योजना की रूपरेखा के अन्तर्गत सौंपी जाएगी। ऐसा करते समय राज्य इन उद्योगों को वित्तीय सहायता जारी रखेगा एवं औद्योगिक एवं कृषि प्रयोजनों के लिए सहकारी तर्ज पर स्थापित उद्यमों को विशेष सहायता प्रदान की जायेगी। कुछ उपयुक्त मामलों में निजी क्षेत्र को भी विशेष सहायता राज्य द्वारा प्रदान की जा सकती है। खासकर जब इस प्रकार की सहायता राशि पर्याप्त मात्रा में हो तो सहायता शेयर पूंजी के रूप में प्रदान की जाएगी एवं यह डिबेंचर पूंजी के रूप में भी हो सकता है। सितम्बर 1960 में महाराष्ट्र सरकार द्वारा तीसरी पंचवर्षीय योजना पर एक सलाहकार समिति की नियुक्ति की गयी। जिसके अध्यक्ष श्री

आर0जी0 सरैया एवं अन्य सदस्य, टाटा, एस एम जोशी, ए0 आर0 भट्ट, आर0एम0 देशमुख और ए0बी0 वर्धमान थे। इस समिति द्वारा ''औद्योगिक विकास के लिये संयुक्त क्षेत्र उद्यम'' विषय पर एक अध्ययन दल की स्थापना की गयी। इस आध्ययन दल द्वारा प्रस्तुत किये गए प्रतिवेदन में यह यह राय व्यक्त की गई कि उद्योगों का अधिकतम विकास प्राप्त करने एवं आन्तरिक क्षेत्रों तक उद्योगों का प्रसार करने के लिये यह आवश्यक है कि एक तरफ सरकार एवं दूसरी ओर निजी क्षेत्र के पास मौजूदा संसाधनों एवं प्रबंधकीय क्षमता का सबसे अच्छा उपयोग किया जाए। संयुक्त क्षेत्र की अवधारणा का उपयोग इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए किया जा सकता है।

संयुक्त क्षेत्र योजना द्वारा यह उम्मीद की जा सकती है कि वह औद्योगिक विकास के मामले में अपेक्षाकृत पिछड़े संगठनात्मक, प्रबंधकीय एवं संयुक्त क्षेत्र के उद्योगों पर नियन्त्रण की दृष्टि से अध्ययन दल द्वारा राज्य एवं निजी उद्यमियों के मध्य सभी मामलों में आपसी विश्वास की जरूरत पर बल दिया गया। अध्ययन दल का मानना था कि–

1.संगठन का स्वरूप इस प्रकार का होना चाहिए कि उपक्रमों के नीतिगत मामलों में जनता के हित में सरकार की पर्याप्त आवाज हो सके लेकिन ऐसे मामलों में जहाँ प्रबन्धकीय भागीदार नकारा साबित हो एवं उसे बदलना आवश्यक हो जाए तो सरकार हस्तक्षेप द्वारा प्रबंधन को सीमित या असीमित समय के लिए अपने हाथों में ले सके, बिना उद्योग (विकास एवं विनियमन) अधिनियम, 1951 के प्रावधानों का सहारा लिए।

2.स्वामित्व का बंटवारा इस प्रकार होना चाहिए कि पूंजी का केन्द्रीयकरण एकल व्यक्तियों या संबद्ध समूहों के हाथों में कम से कम हो, उपयुक्त मामलों में प्रतिष्ठित देशी एवं विदेशी उद्यमियों, जहाँ जरूरी विदेशी पूंजी की आवश्यकता हो, को साथ में जोड़ना चाहिए। इस प्रकार श्री सरैया की अध्यक्षता में अध्ययन दल द्वारा संयुक्त क्षेत्र की अवधारणा को ऐसे औद्योगिक संगठन रूप में देखा गया जो राज्य (इस मामले में महाराष्ट्र) के सामान्य एवं विशेषकर पिछड़े क्षेत्रों में औद्योगिक विकास को बढ़ावा देगा। आन्ध्र प्रदेश राज्य द्वारा सबसे पहले औद्योगिक विकास निगम (**APIDC**) की स्थापना की गई। केन्द्रीय सरकार या केन्द्रीय सार्वजनिक उद्यम जिनके पास आवश्यक विशेषज्ञ या अनुभव हो वे भी राज्य सरकार या राज्य

स्तर के सार्वजनिक उद्योगों के साथ संयुक्त क्षेत्र योजना (जनभागीदारी के साथ या बिना जनभागीदारी वाली) के तहत कुछ परियोजना में शामिल हो सकते हैं।

2.5.1 सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों और/या राज्य सरकारें (जिनके साथ कोई अभिज्ञेय निजी प्रवर्तक नहीं हो लेकिन आम जनता की भागीदारी हो)

इस श्रेणी के अन्तर्गत आम जनता बड़े पैमाने पर राज्य सरकार या राज्य स्तर के सार्वजनिक उद्योगों में पूंजी निवेश कर सकती है। बहुमत शेयर (51: या अधिक) सरकार या सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों द्वारा धारण किये जा सकते हैं एवं शेयर के पब्लिक इशु के जरिए सामान्य जनता द्वारा संतुलित भागीदारी की जा सकती है। कम्पनी अधिनियम, 1956 के अनुसार इस प्रकार की कम्पनियां सरकारी कम्पनी कहलाएगी। इस प्रकार के अन्य मामले भी हो सकते हैं, जहां सरकार/सार्वजनिक उद्योग कम (अल्पमत) शेयर धारण करें एवं बाकी शेयरर्स में सामान्य जनता की भागीदारी बिना किसी अनुज्ञेय निजी प्रवर्तक के हो ।

2.5.2 सार्वजनिक उद्यम एवं सहकारी या किसी उपक्रम के कर्मचारियों के मध्य संयुक्त उद्यम

इस प्रकार के संयुक्त उद्यम में शेयर का एक भाग सहकारी संस्था द्वारा एवं बाकी हिस्सा सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यम द्वारा या सरकार द्वारा धारण किया जाता है। इसी प्रकार, शेयर का एक भाग व्यक्तिगत कर्मचारियों द्वारा या उनके संगठन द्वारा भी धारण किया जा सकता है।

2.5.3. सार्वजनिक उद्यम एवं घरेलू निजी उद्यमियों के मध्य संयुक्त क्षेत्र

इस प्रकार की श्रेणी के अन्तर्गत राज्य सरकार या राज्य सरकार के उपक्रम प्रवर्तक और विकासात्मक भूमिका अदा करते हैं। संयुक्त उद्यम योजना के तहत परियोजना हेतु लाइसेंस धारण करते हैं एवं प्रत्याशित निजी प्रवर्तक को परियोजना में हिस्सेदारी हेतु आमन्त्रित करते हैं, इसमें शेयरों का स्वरूप इस प्रकार का होता है कि राज्य स्तर की प्रवर्तक एजेंसी कम से कम 26 प्रतिशत शेयर धारण करती है, निजी प्रवर्तक 25 प्रतिशत एवं अन्य 49 प्रतिशत व्यापक

पैमाने पर जनता द्वारा धारण किये जाते हैं। दूसरी ओर निजी प्रवर्तक जिनके पास औद्योगिक लाइसेंस होता है राज्य स्तर की एजेंसियों से संयुक्त उद्यम के लिए संपर्क साध सकते हैं।

2.5.4 सार्वजनिक उद्यमों एवं विदेशी सहयोगियों के मध्य संयुक्त उद्यमः–

इस प्रकार के मामले में सार्वजनिक उद्यम, विदेशी सहयोगियों के साथ, भारतीय निजी प्रवर्तक के साथ या बिना एक संयुक्त उद्यम के प्रवर्तन हेतु शेयर पूंजी में हिस्सेदारी कर सकते हैं। सार्वजनिक क्षेत्र के वे उद्यम जो व्यक्तिगत लाइसेंस धारण करते हैं विदेशी के साथ सीधे अनुबंध भी कर सकते हैं। उदाहरणार्थ मध्य प्रदेश, इलेक्ट्रिकल्स लि0, मध्य प्रदेश औद्योगिक विकास निगम लि0 के साथ एक संयुक्त क्षेत्र की कम्पनी है, मध्य प्रदेश औद्योगिक विकास निगम लि0 एक औद्योगिक प्रसार संगठन है। इस प्रकार के अन्यउद्यम भी हैं जिसमें राज्य एवं केन्द्र सरकार व संयुक्त स्वामित्व है।

कम्पनी अधिनियम, 1956 के अनुसार, ''सरकारी कम्पनी का अर्थ इस कम्पनी से है जिसकी चुकता पूंजी का कम से कम 51 प्रतिशत केन्द्र सरकार द्वारा धारण किया गया है, या किसी रज्य सरकार या सरकारों या आंशिक रूप से केन्द्र सरकार एवं आंशिक रूप से एक या अधिक राज्य सरकारों द्वारा धारण किया गया है एवं इसके अन्तर्गत वे कम्पनी भी आती है जो सरकार की अनुश्रंगी कम्पनी है।'' अनुभव दर्शाते हैं कि कुछ राज्य स्तर के सार्वजनिक उद्यमों ने इस प्रकार के अनुबंध किए हैं। इस प्रकार के संयुक्त उ़द्यमों में, राज्य 26 प्रतिशत, विदेशी सहयोगी 25 प्रतिशत एवं बाकी शेयर सामान्य जनता द्वारा धारण किए जाते हैं। इस प्रकार के संयुक्त क्षेत्र के उद्यमों में जहाँ भरतीय प्रवर्तक भी शामिल हैं, दिशा निर्देश दर्शाते हैं कि राज्य निगमों को न्यूनतम 25 प्रतिशत, भारतीय उद्यमी को 20 प्रतिशत, विदेशी प्रवर्तक को 20 प्रतिशत एवं अन्य 35 प्रतिशत सामान्य जनता को (पब्लिक इशु) धारण करने चाहिए। यहाँ पर यह तथ्य उजागर करना भी आवश्यक है कि कई निजी क्षेत्र की कम्पनियों को, जिनमें सार्वजनिक वित्तीय संस्थानों की पर्याप्त भागीदारी हैं, संयुक्त क्षेत्र के उद्यम के रूप में नहीं माना जाता है। दूसरी ओर के कम्पनियाँ, जिनकी कुल चुकता पूंजी का 51 प्रतिशत केन्द्र सरकार राज्य सरकारों, सरकार के स्वामित्व वाले निगामें, जिनमें सार्वजनिक वित्तीय संस्थान भी शामिल हैं,

लेखा परीक्षकों की नियुक्ति हेतु सरकारी कम्पनियाँ मानी जाती हैं। कम्पनी अधिनियम, 1956 के अन्तर्गत एक सार्वजनिक वित्तीय संस्था की परिभाषा में कई परिवर्तन किये गये हैं क्योंकि काफी संस्था में संस्थाएं अधिसूचित नहीं हैं। इसके कारण इस प्रावधान की उपयोगिता सीमित हो गयी। मुख्य बिन्दु यह है कि सार्वजनिक क्षेत्र में जोखिम पूंजी में से 25प्रतिशत धारण करने बावजूद कई कम्पनियां संयुक्त क्षेत्र के ढाँचे से सदा बाहर ही रही हैं।

अगर **ILPIC** की सिफारिशों को अमल में लाया जाए तो इस प्रकार की अधिकांश कम्पनियां संयुक्त क्षेत्र से सम्बन्धित मानी जाएंगी। हालांकि इसका कार्यरूप में आना बाकी है। कुछ मामलों में विदेशी कम्पनियाँ, राज्य के साथ सीधे संयुक्त उद्यमों से जुड़ी होती हैं, उदाहरणार्थ, पंजाब आनंद लैम्प इण्डस्ट्रीज लि0 को पंजाब राज्य उद्योग विकास निगम लि0 (**PSIDC**) के साथ एक संयुक्त क्षेत्र के रूप में प्रवर्तित किया गया है एवं एन0वी0 फिलिप्स को नीदरलैण्ड द्वारा। नोबेल एक्सप्लोचेम, महाराष्ट्र राज्य उद्योग निगम लि0 (**SICON**) एवं ए वी बोफोर्स स्वीडन, डायनो इण्डस्ट्रीज नोर्वे एवं स्वीडिश फण्ड फॉर इण्डिस्ट्रिल कारपोरेशन के साथ संयुक्त उद्यम है। इस बिन्दु पर यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि 'संयुक्त क्षेत्र' शब्दावली एवं ''संयुक्त उद्यम'' में अन्तर स्पष्ट किया जाए। भारतीय नीति के संदर्भ में संयुक्त उद्यम का अर्थ, प्रथम एक ऐसा उद्यम है जिसमें भारतीय एवं विदेशी पूंजी की हिस्सेदारी सम्मिलित है। द्वितीय, भारतीय फर्म (सार्वजनिक या निजी क्षेत्र की) द्वारा किसी देश में स्थापित व्यापारिक उद्यम है जिसे विदेश में भारतीय संयुक्त उपक्रम कहा जाता है।

यह भी उल्लेख करना प्रासंगिक होगा कि लेखा परीक्षक की नियुक्ति (पुनः) के लिए एक विशेष संकल्प पारित करना चाहिए अगर न्यूनतम 25 प्रतिशत की शेयर पूंजी अकेले या संयोजन में निम्न द्वारा धारण की गयी हो।

1.एक सार्वजनिक वित्तीय संस्था या एक सरकारी कम्पनी या केन्द्रय सरकरया किसी राज्य सरकार द्वारा, या

2.किसी रियासत या राज्य अधिनियम के अन्तर्गत स्थापित कोई वित्तीय या अन्य संस्था, जिसमें राज्य सरकार द्वारा न्यूनतम 51 प्रतिशत शेयर पूजी धारण की गयी हो।

3.एक राष्ट्रीयकृत बैंक या साधारण बीमा व्यापार वाली बीमा कम्पनी।ऐसी कम्पनियां डीम्ड सरकारी कम्पनियाँ कहलाती हैं (**Deemed Government Companie**)।

2.6 नई आर्थिक नीति की उपलब्धियाँ

2.6.1 राष्ट्रीय उत्पाद में वृद्धि

नई आर्थिक नीति लागू होने से पूर्व वास्तविक राष्ट्रीय आय में वृद्धि 4.7 प्रतिशत थी। परन्तु नीति लागू होने के बाद 1993–94 में वृद्धि दर बढ़कर 5.0 प्रतिशत 1996–7 में यह बढ़कर 8.2 प्रतिशत हो गयी। हालांकि 2000–01 में वृद्धि दर 6.2 प्रतिशत आंकी गयी।

2.6.2 आयात

नई आर्थिक नीति के मद्देनजर आयात की वृद्धि दर में व्यापक उतार–चढ़ाव देखा गया। 1991–92 में आयात वृद्धि दर 22 प्रतिशत (1990–91) मुकाबले 11 प्रतिशत गिर गयी। लेकिन बाद के वर्षों में अर्थात 1992–93 में यह छलांग लगकर 32.4 हो गयी। उसके बाद 1993–94 में यह फिर 15 प्रतिशत तक गिर गयी हालांकि वित्तीय वर्ष 2001–02 में आयात वृद्धि दर 14.5 प्रतिशत देखी गयी।

2.6.3 राजकोषीय घाटा

नई आर्थिक नीति का मुख्य जोर सकल घरेलू उत्पाद (**GDP**) का 3 प्रतिशत तक की सीमा तक राजकोषीय घाटा कम करना था। 1991–92 में राजकोषीय घाट 5.9 प्रतिशत तक घटा 1992–93 में 5.2 प्रतिशत तक कम हुआ। इसमें कोई संदेह नहीं है कि नई आर्थिक नीति की शुरूआत के बाद राजकोषीय घाटा कम हुआ है लेकिन अभी भी सरकार अपने लक्ष्य से बहुत दूर है। 1995–96 में 4.7 प्रतिशत लक्ष्य की तुलना में 7.9 प्रतिशत बढ़ गया एवं 2000–01 में फिर यह 6.4 प्रतिशत पहुँच गया।

2.6.4 विदेशी मुद्रा भंडार

विदेशी मुद्रा भंडार पर नई आर्थिक नीति का सकारात्मक प्रभाव पड़ा है। 1989–90 में यह गिरकर 6,251 करोड़ रूपये रह गया था। परन्तु आर्थिक सुधारों के पश्चात यह 1994–95 में बढ़कर 58,446 करोड़ रूपयों एवं 2000–01 में 1,97204 करोड़ रूपये हो गया।

1.6.5 कृषि उत्पादन

कृषि उत्पादन पर भी नई आर्थिक नीति का सकारात्मक प्रभाव देखने को मिला। नये आर्थिक सुधारों के लागू होने से पहले कृषि उत्पादन 3 प्रतिशत था। 1991–92 में यह गिरकर 1.9 प्रतिशत रह गया। परन्तु 1992–93 में कृषि उत्पादन की वृद्धि पर बढ़कर 6.6 प्रतिशत एवं 2000–01 में 6.3 प्रतिशत थी।

1.6.6 विदेशी निवेश

नई आर्थिक नीति के उदार दृष्टिकोण के चलते विदेशी पूंजी निवेश में बढ़ोत्तरी होती गयी। 1990 में सरकार द्वारा 8123 करोड़ रूपयों के प्रत्यक्ष विदेशी निवेश मंजूरी दी गयी। 12163 करोड़ रूपयों एवं 20319 करोड़ रूपयों के प्रत्यक्ष विदेशी निवेश को मंजूरी क्रमशः 1995–96 एवं 2000–01 में प्रदान की गयी।

अभ्यास प्रश्नः–

रिक्त स्थान की पूर्ति करें :–

1.क्रय शक्ति समानता (**PPP**) में भारत विश्व की ..... सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था है।

2.स्वतन्त्रता के तुरन्त पश्चात भारतीय अर्थव्यवस्था आर्थिक विकास के ..... से प्रेरित रही।

3.योजना आयोग का गठन ..... में हुआ।

4.स्वतन्त्रता के पश्चात आर्थिक नीतियों का मुख्य उद्देश्य ..... प्राप्त करना था।

5.औद्योगिक नीति –1956 के अन्तर्गत उद्योगों को .....श्रेणियों में विभक्त किया गया था।

6.1991 के आर्थिक सुधारों से पूर्व भारत की नीति ..... पर आधारित थी।

7.1970 की नई औद्योगिक लाइसेंसिंग नीति के तहत उद्योगों को ..... में विभाजित किया गया था।

8.1991 में आर्थिक सुधारों के लागू करने के पश्चात ..... की नीति अपनायी गयी और अधिकांश उद्योगों को लाइसेंस मुक्त कर दिया गया।

9.विदेशी मुद्रा भंडार पर नई आर्थिक नीति का सर्वाधिक .....प्रभाव पड़ा है।

10.1991 से पहले संरक्षित वातावरण में उद्योगों के विकास ने कई .....को जन्म दिया।

2.7 सारांश

सन् 1947 में स्वतन्त्रता के पश्चात आम राष्ट्रीय सहमति तीव्र औद्योगिकीकरण के पक्ष में थी जो न केवल आर्थिक विकास की कुंजी थी बल्कि आर्थिक सम्प्रभुता पाने का भी रास्ता था। क्रमिक आर्थिक नीति संकल्पों एवं घोषणाओं के द्वारा भारतीय आर्थिक नीति ईजाद हुई। कमिक पंच वर्षीय योजनाओं के माध्यम से औद्योगिक विकास को प्राथमिकता प्रदान की गयी। स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व बने बाम्बे–प्लान के आधार पर, पहली आर्थिक नीति जिसकी सन् 1948 में घोषणा की गयी, का ताना बाना बुना गया। मार्च 1950 में योजना आयोग गठित हुआ एवं 1951 में औद्योगिक (विभाग और विनियमन) अधिनियम का अधिनियमन किया गया जिसका उद्देश्य लाईसेंस के माध्यम से उद्योगों के विकास को नियन्त्रित करने हेतु सरकार को आवश्यक कदम उठाने के लिये सशक्त किया गया। इस तरह 1956 की उद्योग नीति के लिये मार्ग प्रशस्त हुआ जो भारत के औद्योगिक विकास की रणनीति बनाने वाला पहला व्यापक घोषणा–पत्र था। औद्योगिक नीति– 1956 महालनोबिस के विकास मॉडल पर आधारित संकल्प था। जिसके अनुसार भारी उद्योगों को प्राथमिकता दी गयी। उक्त संकल्प का दूसरा उद्देश्य औद्योगिक विकास के जरिये क्षेत्रीय असमानताओ को दूर करना था। वास्तव में यह घोषणा पत्र भारत की मूल्य आधारित प्रणाली को दर्शाता था एवं औद्योगिक उत्पादन में आत्मनिर्भरता को प्राप्त करने हेतु केन्द्रित था। 1967 में औद्योगिक लाइसेंसिंग नीति जांच समिति (दत्त समिति) का गठन किया गया। जिसकी सिफारिशों के अनुसार, बड़े औद्योगिक घरानों को मुख्य एवं भारी औद्योगिक निवेश क्षेत्रों हेतु ही लाइसेंस प्रदान किया जाना चाहिए अतः औद्योगिक

लाइसेंसिंग नीति के पुनः स्थापन की जरूरत महसूस की गई। सरकार को आर्थिक शक्ति के केन्द्रीयकरण को प्रभावी तरीके से नियन्त्रित करने हेतु सशक्त बनाने के लिए 1969 में एकाधिकार और प्रतिबंधात्मक व्यापार व्यवहार (MRTP) अधिनियम पारित किया गया।

1970 की नई औद्योगिक लाइसेंसिंग नीति के तहत उद्योगों को चार श्रेणियों में विभाजित किया गया।

औद्योगिक गतिविधियों का बड़े औद्योगिक घरानों में केन्द्रीयकरण रोकने के उद्देश्य से 1973 की औद्योगिक नीति में छोटे एवं मध्यम उद्योगों को, जन उपभोग की वस्तुओं के उत्पादन में नई ईकाईयों की स्थापना में बड़े घरानों और विदेशी कम्पनियों को प्राथमिकता दी गयी।ओद्योगिक नीति, 1977 के द्वारा लघु, अति लघु एवं कुटीर उद्योगों को बढ़ावा दिया गया एवं ओद्योगिक क्षेत्र के विकेन्द्रीकरण पर बल दिया गया।

सन् 1980 की औद्योगिक नीति वक्तव्य द्वारा घरेलू बाजार में प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा देने, उद्योगों का तकनीकी उन्नयन एवं आधुनिकीकरण की सहमति प्रदान की गयी।1980 के दशक के दौरान विनियमों में ढील देने की प्रक्रिया में कुछ प्रगति हुई। सन् 1988 में नकारात्मक सूची में दर्ज 26 उद्योगों को छोड़कर अन्य सभी को लाइसेंस मुक्त कर दिया गया। हालांकि छूट निवेश और व्यवसायिक सीमा के भीतर थी। प्रारम्भ में भारत द्वारा बन्द बाजार नीति अपनाई गई परन्तु बाद में खुले बाजार की नीति अपना कर उसने खुले व्यापार को बढ़ावा दिया।

सन् 1991 के बाद से आर्थिक सुधार लागू किए गये। उद्योग नीति–1991 का उद्देश्य, उत्पादकता में अनवरत विकास, लाभकारी रोजगार में बढ़ावा और अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा को प्राप्त करने और विश्व स्तर पर भारत को प्रमुख स्थान दिलाने के लिये मानव संसधान का अधिकतम उपयोग करना है। स्पष्ट रूप से यह नीति, भारतीय उद्योगों को नौकरशाही के नियन्त्रण से मुक्त करने हेतु केन्द्रित थी। इसके द्वारा कई दूरगामी सुधार किये गये। वर्तमान में केवल 6 उद्योग अनिवार्य अनुमति (Licensing policy) के अन्तर्गत आते हैं। इस प्रकार केवल तीन उद्योग सार्वजनिक क्षेत्र के लिए आरक्षित रह गये हैं।

लघु क्षेत्र में निर्माण हेतु वस्तुओं का आरक्षण भारत की औद्योगिक नीति का एक महत्वपूर्ण सिद्धान्त रहा है। अप्रैल 2001 के बाद से मात्रात्मक प्रतिबंध हटाने से बढ़ती हुई आयात प्रतिस्पर्धा की महसूस कर सरकार ने अनारक्षण की नीति को अपनाया एवं मार्च 1999 तक जो 821 मद लघु क्षेत्र के लिए आरक्षित थे उन्हें क्रमशः घटाते हुए मार्च 6, 2005 तक 506 मदों पर ले आयी। वर्तमान में 41 आरक्षित मद है जिनमें निवेश की अनुमत सीमा 50 लाख रूपयों तक है। जबकि अन्य लघु क्षेत्र की ईकाईयों के लिये यह सीमा मात्र 10 लाख रूपयों तक ही अनुमत है।

बाजार में प्रतिस्पर्धा पर प्रतिकूल प्रभाव वाले क्रियाकलापों को रोकने के लिए प्रतिस्पर्धा अधिनियम 2002, के अन्तर्गत 2003 में Competition Commission of India का गठन किया गया है।

क्षेत्रीय असंतुलन को कम करने के लिए, उत्तर–पूर्व के क्षेत्र में औद्योगिकरण को बढ़ावा देने के उद्देश्य से सरकार ने दिसम्बर 1997 में एक नई उत्तर–पूर्व औद्योगिक नीति की घोषणा की। नई आर्थिक नीति लागू होने से पूर्व वास्तविक राष्ट्रीय आय में वृद्धि 4.7 प्रतिशत थी। परन्तु नीति लागू होने के बाद 1993–94 में वृद्धि दर बढ़कर 5.0 प्रतिशत 1996–7 में यह बढ़कर 8.2 प्रतिशत हो गयी। नई आर्थिक नीति के मद्देनजर आयात की वृद्धि दर में व्यापक उतार–चढ़ाव देखा गया। नई आर्थिक नीति की शुरूआत के बाद राजकोषीय घाटा कम हुआ है लेकिन अभी भी सरकार अपने लक्ष्य से बहुत दूर है। विदेशी मुद्रा भंडार पर नई आर्थिक नीति का सकारात्मक प्रभाव पड़ा है। कृषि उत्पादन पर भी नई आर्थिक नीति का सकारात्मक प्रभाव देखने को मिला। नई आर्थिक नीति के उदार दृष्टिकोण के चलते विदेशी पूंजी निवेश में बढ़ोत्तरी होती गयी।

2.8 महत्वपूर्ण शब्दावली

सकल घरेलू उत्पाद (GDP)– यह एक अर्थव्यवस्था के आर्थिक प्रदर्शन का एक बुनियादी माप है। यह एक वर्ष में एक राष्ट्र की सीमा के भीतर सभी अंतिम माल और सेवाओं का बाजार मूल्य है।

सकल घरेलू उत्पाद = उपभोग+सकल निवेश+सरकारी खर्च+(निर्यात–आयात)

क्रय शक्ति समानता (PPP):– यह एक आर्थिक सिद्धान्त है एवं इस तकनीक का इस्तेमाल मुद्राओं के सापेक्ष मूल्य का निर्धारण करने में किया जाता है।

राजकोषीय घाटा (Fiscal Deficit):– जब सरकार का कुल व्यय राजस्व से अधिक हो जाता है तब यह उत्पन्न होता है (उधार के पैसे छोड़कर)। घाटा कर्ज से अलग है, यह वार्षिक घाटे का संग्रह है।

2.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. तीसरी; 2. सोवियत माडल; 3. मार्च 1950; 4. आत्म निर्भरता; 5. तीन; 6. बन्द बाजार; 7. चार श्रेणियों; 8. खुले बाजार; 9. सकारात्मक; 10. विकृतियों ।

2.10संदर्भ ग्रन्थ

1. http://hi.wikipedia.org/wiki

2. रतन सेन, इण्डस्ट्रियल रिलेशन इन इण्डिया

1.11सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री :–

नीरू वशिष्ठ, स्टूडेन्ट गाइड टू बिजनिस ऑगनाइजेशन

2.12 निबंधात्मक प्रश्न

1. औद्योगिक नीति, 1956 का संक्षिप्त विवरण दीजिए।

2. औद्योगिक नीति – 1991 को विस्तार में समझाएं।

3. नई औद्योगिक नीति की उप्लब्धियों का विवरण दीजिए।

4. संयुक्त उद्यम से आप क्या समझते हैं?

LL.M. PART- I
PAPER –Legal Regulation of Economic Enterprises

ब्लाक–1 सरकारी विनियमन का औचित्य (The Rationale of Government regulation)

ईकाई–3 आर्थिक गतिविधियों पर नियन्त्रण, सूचनाओं का प्रकटीकरण (Regulation of Economic Activities; Disclosure of Information)

इकाई संरचना

3.1 प्रस्तावना

3.2उद्देश्य

3.3आर्थिक गतिविधियों के प्रकार

3.4भारतीय या विदेशी कंपनी के रूप में स्थापना

3.4.1एक भारतीय कंपनी के रूप में

3.4.1.1संयुक्त उद्यम

3.4.1.1.1 एक विदेशी निवेशकों के लिए संयुक्त उद्यम के लाभ

3.4.1.1.2 हानियां

3.4.1.2 पूर्ण स्वामित्व वाली सहायक कंपनियां

3.4.1.2.1लाभ

3.4.1.2.2हानि

3.4.2एक विदेशी कंपनी के रूप में

3.4.2.1 परियोजना कार्यालय

3.4.2.2 शाखा कार्यालय

3.5 प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के लिए निर्धारित प्रक्रिया

3.5.1'स्वतः प्रवृत्त मार्ग के अन्तर्गत प्रक्रिया

3.5.1.1नवीन उद्योगों में निवेश

3.5.1.2मौजूदा कंपनियों में निवेश

3.5.2सरकार के अनुमोदन के अन्तर्गत प्रक्रिया

3.5.2.1 विनियमन और प्रक्रियाएं

3.5.3 लघु उद्योग क्षेत्र में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश

3.6 भारत में संरचनात्मक निवेश

3.6.1बंदरगाह

3.6.2रेलवे

3.6.3राजमार्ग और सड़कें

3.6.4विमानपत्तन

3.6.5दूरसंचार

3.6.6ऊर्जा

3.6.7नवीकरणीय ऊर्जा

3.7 प्रकटीकरण और सूचना

3.7.1पारदर्शी / खुली सरकार का सिद्धान्त एवं सूचना का अधिकार

3.7.2सूचना का अधिकार आंदोलन

3.7.3सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005

3.8 सारांश

3.9 महत्वपूर्ण शब्दावली

3.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

3.11 संदर्भ ग्रन्थ

3.12 सहायक / उपयोगी सामग्री

3.13 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

आर्थिक गतिविधियां उत्पादन, वितरण, आदान प्रदान एवं वस्तुओं एवं सेवाों की खपत से सम्बन्धित है। इसका मुख्य उद्देश्य उपभोक्ताओं को उपलब्ध कराने की दृष्टि से वस्तुओं एवं सेवाओं का उत्पादन है। मानव गतिविधियां जो रूपयों या इससे सम्बन्धित वस्तुओं के आदान–प्रदान में लिप्त हैं आर्थिक गतिविधियां कहलाती हैं। दूसरे शब्दों में आर्थिक गतिविधयां वे प्रयास हैं जो मनुष्य द्वारा जीवन हेतु आय, रूपया या धन कमाने के लिये किये जाते हैं ताकि सीमिति एवं विरल साधनों के माध्यम से अधिकतम संतुष्टि प्राप्त की जा सके। मानव गतिविधियां जो रूपयों या इससे संबंधित नहीं होती हैं गैर आर्थिक गतिविधियां कहलाती हैं, यथा–एक मनुष्य का मंदिर जाना, एक लड़के का पढ़ाई में अपने मित्र की मदद करना आदि।

3.2 उद्देश्य

इस ईकाई को पढ़ने के पश्चात आप समझ सकेंगे–

- आर्थिक गतिविधियां
- प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के प्रति सरकारी नीतियां
- प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के लाभ तथा हानि

- भारत में विभिन्न क्षेत्रों में विदेशी निवेश
- सूचना का अधिकार

3.3आर्थिक गतिविधियों के प्रकार

1.व्यवसाय

व्यवसाय या वृत्ति एक उपजीविका है जो पेशेवर व्यक्तियों जैसे, चिकित्सकों, वकीलों, इंजीनियरों आदि द्वारा अपनायी जाती है। वे शुल्क के बदले में लोगों को विशिष्ट सेवाएं प्रदान करते हैं। पेशेवर बनने के लिए मुनष्य को विशिष्ट ज्ञान और पेशेवर योग्यता की आवश्यकता होती है। उदाहरणार्थ, चिकित्सक को दवाओं का ज्ञान, वकील को विधि में डिग्री आदि की आवश्यकता होती है।

2.नियोजन/नौकरी

नियोजन अथवा नौकरी एक प्रकार का व्यवसाय है जिसके अन्तर्गत व्यक्ति किसी दूसरे को शारीरिक अथवा मानसिक सेवा प्रदान करता है एवं बदले में वेतन अथवा मजदूरी प्राप्त करता है। व्यक्ति जो नियोजित करता है उसे नियोक्ता एवं जो व्यक्ति कार्यरत है उसे कर्मचारी अथवा कार्यकर्ता कहा जाता है।

3.व्यापार

व्यापार, लाभ कमाने के उद्देश्य से वस्तुओं एवं सेवाओं के उत्पादन एवं वितरण से सम्बन्धित आर्थिक गतिविधि को कहा जाता है। इसके अन्तर्गत वे सभी गतिविधियाँ सम्मिलित हैं जो परोक्ष या अपरोक्ष रूप से वस्तुओं एवं सेवाओं के उत्पादन एवं क्रय–विक्रय से सम्बन्धित होती है। अतः उत्पादन, वितरण, विज्ञापन, भंडारण, बीमा, बैंकिंग आदि सभी व्यापारिक गतिविधियां हैं।

पिछले दशक में भारत ने आर्थिक विकास प्राप्त करने एवं गरीबी घटाने की दशा में अनेक सुधार किए हैं। सबसे महत्वपूर्ण प्रगति सन् 1991 में प्राप्त की गई जब सरकारी बाधाएं समाप्त कर विदेशी निवेश हेतु द्वार खोले गए। विदेशी प्रत्यक्ष निवेश विकासशील देशों के लिए (भारत सहित) आर्थिक विकास एवं रोजगार सृजन के लिए महत्वपूर्ण स्रोत के रूप में उभरा है, क्योंकि यह प्रतिस्पर्धी कारोबारी माहौल बनाने, उद्योगों के विकास में, मानव पूँजी निर्मित करने में एवं अन्तराष्ट्रीय व्यापार एकीकरण में सहायक होता है।

3.4 भारतीय या विदेशी कम्पनी के रूप में स्थापना

एक विदेशी कम्पनी जो भारत में व्यापार के संचालन की योजना करती है। इसके पास एक भारतीय या विदेशी कम्पनी के रूप में स्थापना का विकल्प होता है।

3.4.1 एक भारतीय कम्पनी के रूप में

एक विदेशी कम्पनी भारत में कम्पनी अधिनियम, 1956 के अन्तर्गत संयुक्त उद्यम या पूर्ण स्वामित्व वाली सहायक कम्पनी के रूप में स्थापित होकर व्यापार का संचालन शुरू कर सकती है।

3.4.1.1.संयुक्त उद्यम

विदेशी कम्पनियां भारत में अपना संयुक्त उद्यम किसी भारतीय कम्पनी के साथ और/या आम जनता के साथ जुड़कर सूचीगत या असूचीगत कम्पनी के रूप में कार्य कर सकती है।

3.4.1.1.1 एक विदेशी निवेशक के लिये संयुक्त उद्यम के लाभ

1.भारतीय भागीदार द्वारा स्थापित वितरण और विपणन बाजार
2.भारतीय भागीदार के उपलब्ध वित्तीय संसाधन
3.भारतीय भागीदार के संपर्क साधन जो व्यापारिक गतिविधियां स्थापित करने में मददगार साबित होते हैं।
4.विदेशी बाजार में प्रवेश की यह अच्छी रणनीति मानी जाती है। विशेषकर वहां जहां वाणिज्यिक और देश सम्बन्धी जोखिम अधिक हों।
5.भिन्न प्रतिस्पर्धी परिस्थितियों में व्यापारिक गतिविधियों को यह आसान बनाता है।
6.विदेशी बाजार में प्रवेश के लिए यह कम लागत और कम संसाधन की प्रतिबद्धता का लाभ दिलाता है।

3.4.1.1.2 हानियां

1.दो भिन्न राष्ट्रीय कम्पनियां जिनकी पृष्ठभूमि, अनुभव, क्षमताएं, अलग अलग होती हैं, उनके लिए संसाधनों एवं प्रबन्धन आदि में समान लक्ष्य के जुड़ना कृत्रिम एवं असहज वातावरण का निर्माण करता है। समान अधिकारिता के अन्तर्गत कार्य करना एवं सहमत होना दिन प्रतिदिन की गतिविधियों में समस्याएं उत्पन्न करता है एवं भविष्य की योजनाओं में भी समस्याएं उत्पन्न होती हैं।
2.संयुक्त उद्यम में तकनीकी राज के भी जाहिर होने का डर बना रहता है क्योंकि यह संभव है कि मजबूत विदेशी भागीदार इस तकनीक का उपयोग भविष्य में अपने निजी लाभ के लिए कर सकता है जिससे मूल कम्पनी को भविष्य में हानि उठानी पड़ सकती है।
3.संयुक्त उद्यम में क्षेत्रीय भागीदार के साथ लाभ भी बांटना पड़ता है एवं साथ ही साथ भविष्य की विस्तार योजनाओं हेतु भी पुनः निवेश करना होता है।

3.4.1.2 पूर्ण स्वामित्व वाली सहायक कम्पनियां

विदेशी प्रत्यक्ष निवेश नीति के अन्तर्गत अनुमति मिलने पर एक विदेशी कम्पनी 100 प्रतिशत निवेश के साथ पूर्ण स्वामित्व वाली सहायक कम्पनी की स्थापना भी कर सकती है। इसके लिए कम्पनी को रजिस्ट्रार (त्व्ब्) एवं साथ ही साथ भारतीय रिजर्व बैंक में आवेदन देना पड़ता है। एक बार जब कम्पनी का भारतीय कम्पनी के रूप में विधिवत पंजीकरण एवं इनकारपोरेशन ;पदबवतचवतंजपवदद्ध हो जाता है तो उस पर वही विधि एवं नियम लागू हो जाते हैं जो कि अन्य भारतीय कम्पनियों पर लागू होते हैं।

3.4.1.2.1 लाभ

1.अपनी सहायक कम्पनियों पर प्रभावी नियंत्रण
2.सूचनाएं एवं क्षमताओं का दूसरी फर्म को प्रदान करने की लागत, कर्मियों को प्रशिक्षण की लागत से बचा जा सकता है, पूर्ण लाभ प्राप्त किया जा सकता है।
3.यह प्रसार का जोखिम कम करता है।

3.4.1.2.2हानि

जोखिम का स्तर उच्च होता है।

3.4.2 एक विदेशी कम्पनी के रूप में

विदेशी कम्पनी भारत में अपने व्यापार का संचालन सम्पर्क कार्यालय/प्रतिनिधि कार्यालय के माध्यम से भी कर सकती है। यह कार्यालय भारत में उनके प्रधान कार्यालय के सम्पर्क साधन के रूप में कार्य करता है। यह प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कोई व्यवसायिक गतिविधि नहीं कर सकता अतः कोई आय भी अर्जित नहीं कर सकता है। इसकी भूमिका संभावित बाजार तलाशने और अन्य सूचनाएं एकत्रित करने तक सीमित होती हैं। यह संभावित भारतीय ग्राहकों को कम्पनी एवं उसके उत्पादों के विषय में सूचनाएं प्रदान करता है। यह भारत से/में आयात–निर्यात को बढ़ावा दे सकता है एवं मूल कम्पनी और भारतीय कम्पनियों के मध्य तकनीकी/वित्तीय सहयोग को बढ़ावा प्रदान करता है।
इस प्रकार का संपर्क कार्यालय खोलने हेतु भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा अनुमति दी जाती है।

3.4.2.1 परियोजना कार्यालय

विदेशी कम्पनियां जो भारत में अपनी विशेष परियोजना स्थापित करने की योजना बना रही है। वे अस्थायी परियोजना कार्यालय भारत में बना सकती है। भारतीय रिजर्व बैंक, निर्दिष्ट शर्तों के अधीन विदेशी संस्थाओं को परियोजना कार्यालय स्थापित करने हेतु सामान्य अनुमति प्रदान कर सकता है। इस प्रकार के कार्यालय परियोजना के क्रियान्वयन से संबंधित क्रियाकलाओं के अतिरिक्त अन्य किसी गतिविधि का संचालन नहीं कर सकते, उस परियोजना के पूर्ण होने पर जिसके हेतु सामान्य अनुमति भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा प्रदान की गई है, परियोजना कार्यालय भारत से बाहर अतिरिक्त कार्य हेतु, परिहार कर सकती है।

3.4.2.2 शाखा कार्यालय

विदेशी कम्पनियां जो उत्पादन एवं विपणन गतिविधियों में लिप्त हैं, उन्हें वस्तुओं के आयात–निर्यात, विशेषज्ञ या परामर्श सेवाएं, अनुसंधान कार्य जिसमें मूल कंपनी लिप्त है, भारतीय कम्पनियों एवं मूल कम्पनी या विदेशी समूह की कम्पनियों, भारत में मूल कम्पनी की प्रतिनिधित्व कम्पनी और भारत में क्रय/विक्रय एजेंट के रूप में कार्यरत कम्पनी के मध्य तकनीकी और वित्तीय सहयोग बढ़ाने हेतु, सूचना प्रोद्योगिकी सेवाएं और भारत में साफ्टवेयर के विकास हेतु, मूल कम्पनी द्वारा आपूर्ति किए जाने वाले उत्पादों को तकनीकी सहायता प्रदान करने हेतु भारत में शाखा कार्यालय स्थापित करने की अनुमति प्रदत्त की जा सकती है।

एक शाखा कार्यालय को स्वयं निर्माण कार्यों को करने की अनुमति नहीं है, परन्तु उन्हें एक भारतीय निर्माता से इस विषय में अनुबन्ध करने की अनुमति है। भारतीय रिजर्व बैंक की अनुमति से स्थापित शाखा कार्यालय, रिजर्व बैंक के नियमों के अन्तर्गत शाखा का लाभ भारत से बाहर भेज सकते हैं।

एकल आधार पर स्थापित शाखा कार्यालय अलग–अलग एवं विशेष आर्थिक क्षेत्र (ैम्) तक ही सीमित होंगे एवं उन्हें विशेष आर्थिक क्षेत्र से बाहर भारत में और कहीं भी व्यापारिक गतिविधियों की अनुमति नहीं होगी। इसके अन्तर्गत भारत में मूल कम्पनी के शाखा/सहायक कार्यालय सम्मिलित है। उपरोक्त कार्यालय केवल अनुमति प्राप्त गतिविधियों को ही कार्यरूप दे सकते हैं। भारत में अपना व्यापार स्थापित करने के 30 दिनों के भीतर कम्पनी को कम्पनी रजिस्ट्रार के यहाँ रजिस्टर कराना होगा।

निम्न परिस्थितियों के अन्तर्गत, निर्माण एवं सेवा सम्बन्धी गतिविधियों में लिप्त कम्पनियों को विशेष आर्थिक क्षेत्र में अपनी शाखा या ईकाई स्थापित करने हेतु भारतीय रिजर्व बैंक से अनुमति की आवश्यकता नहीं होगी–

1.जिन क्षेत्रों में 100 प्रतिशत प्रत्यक्ष विदेशी निवेश अनुमत हैं, उनके अन्तर्गत कार्य करने वाली ईकाईयां।

2.कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत भाग XI के अन्तर्गत आने वाली इकाईयां व्यापार के समापन के समय, एकल आधार पर स्थापित, कार्यरत ईकाईयों को थ्म्ड। के अन्तर्गत आवश्यक दस्तावेजों के साथ विदेशी एक्सचेंज के एक अधिकृत डीलर के साथ संपर्क करना होगा। इस प्रकार के कार्यालय विदेशी मुद्रा प्रबंधन विनियम, 2000 के अन्तर्गत अनुमति प्राप्त गतिविधियों पर कार्य कर सकते हैं।

3.5 प्रत्यक्ष विदेशी निवेश हेतु निर्धारित प्रक्रियाएं

भारत में एक कम्पनी के नियन्त्रण या स्वामित्व के सम्बन्ध में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश हेतु दो मार्ग हैं:–

1.''स्वतः प्रवृत्त मार्ग'' के अन्तर्गत प्रक्रिया

2.'सरकारी अनुमति'' के अन्तर्गत प्रक्रिया

3.5.1. ''स्वतः प्रवृत्त मार्ग'' के अन्तर्गत प्रक्रिया

''स्वतः प्रवृत्त मार्ग'' के अन्तर्गत आने वाले क्षेत्रों/गतिविधियों में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश हेतु सरकार या भारतीय रिजर्व बैंक से पूर्व अनुमति की आवश्यकता नहीं है। निवेशक को केवल भारतीय रिजर्व बैंक के सम्बन्धित क्षेत्रीय कार्यालय को सूचित करना होता है एवं विप्रेक्षित धन की प्राप्ति के 30 दिनों के अन्दर जरूरी दस्तावेजों को उस कार्यालय में प्रस्तुत करना होता है। निवेश निर्धारित मार्गदर्शक नियमों के अनुरूप ही होना चाहिए। यह प्रक्रिया भारतीय कम्पनियों में नये निवेश पर ही लागू होती है उन पर नहीं जहाँ पूर्व शेयरधारकों से शेयर खरीदे जाते हैं।

इस प्रकार का निवेश मार्ग उन सब क्षेत्रों/क्रियाविधियों में उपलब्ध है जिनमें कोई ''सैक्टर कैप'' (Sector cap) नहीं है अर्थात जहाँ 100 प्रतिशत विदेशी स्वामित्व अनुमत है या वहाँ जहाँ ैमबजवत बंच के अन्तर्गत ''स्वतः प्रवृत्त मार्ग' द्वारा निवेश की अनुमति दी गयी है।

3.5.1.1 नवीन उद्योगों में निवेश

स्पष्ट रूप से उल्लिखित सरकारी पूर्व अनुमति के अलावा अन्य सभी वस्तुओं/ गतिविधियों में अनिवासी भारतीय एवं विदेशी कारपोरेट निकाय 100 प्रतिशत प्रत्यक्ष विदेशी निवेश स्वतः प्रदत्त मार्ग द्वारा कर सकते हैं। सार्वजनिक क्षेत्र की ईकाईयां, वे इकाईयां (निर्यातोन्मुख ईकाइयां) जो निर्यात प्रोसेसिंस क्षेत्र (EP), विशेष आर्थिक क्षेत्र (SEZ) इलेक्ट्रॉनिक हार्डवेयर टेक्नोलोजी पार्क (EHTP), साफ्टवेयर प्रोद्योगिकी पार्क (STP) में स्थित है, में निवेश स्वतः प्रदत्त मार्ग के अन्तर्गत आता है।

स्वतः प्रदत्त मार्ग के अधीन निवेश अधिसूचित सेक्टोरल (मबजवतंस) नीति और इक्विटी कैप (Equity cap) द्वारा शासित है एवं भारतीय रिजर्व बैंक उसी का अनुपालन सुनिश्चित करता है। सेक्टोरल नीति या सेक्टोरल इक्विटी कैप में कोई परिवर्तन SIA (Secretariate for industrial assistance) द्वारा औद्योगिक नीति एवं संवर्धन विभाग में अधिसूचित किया जाता है।

3.5.1.2 मौजूदा कम्पनियों में निवेश

मौजूदा कम्पनियों में स्वतः प्रदत्त मार्ग द्वारा प्रत्यक्ष विदेशी निवेश एक विस्तारित कार्यक्रम के तहत, निम्न अतिरिक्त आवश्यकताओं के साथ उपलब्ध है–

- इक्विटी स्तर में वृद्धि, मौजूदा कम्पनी के इक्विटी आधार में विस्तार के परिणामस्वरूप होनी चाहिए। अनिवासी भारतीयों/विदेशी कारपोरेट निकाय/ विदेशी निवेशकों के द्वारा शेयरों के अधिग्रहण के फलस्वरूप नहीं। निवेश हेतु रूपये स्वतः प्रदत्त मार्ग द्वारा प्रेषित होने चाहिए। अन्यथा मौजूदा भारतीय कम्पनी के बोर्ड द्वारा समर्थित विदेशी निवेश संबर्धन बोर्ड (FIPB) के माध्यम से प्रस्ताव के सरकार द्वारा अनुमोदन की आवयकता होगी।

मौजूदा कम्पनियों में बिना विस्तारित कार्यक्रम के निवेश के लिए निम्न अतिरिक्त आवश्यकता चाहिए–

- वे कम्पनियां पहले से स्वतः प्रदत्त मार्ग के अन्तर्गत उद्योगों में रत हों। (स्वतः प्रदत्त मार्ग द्वारा निवेश के तहत अतिरिक्त गतिविधियों सहित, चाहे मूल गतिविधियां सरकारी अनुमति के अन्तर्गत हेां या स्वतः प्रदत्त मार्ग के तहत)।
- इक्विटी स्तर में वृद्धि, इक्विटी आधार पर में वृद्धि से होनी चाहिए।
- विदेशी इक्विटी, विदेशी मुद्रा में होनी चाहिए।

3.5.2 सरकार के अनुमोदन के अन्तर्गतत प्रक्रिया

निवेश सम्बन्धित गतिविधियां जो स्वतः प्रदत्त मार्ग (Automatic route) द्वारा आवृत नहीं है, उनके लिये सरकारी पूर्व अनुमोदन एवं विदेशी निवेश संबर्धन बोर्ड (FIPB) द्वारा मान्य होना आवश्यक है। संयुक्त प्रस्ताव, जिसके अन्तर्गत विदेशी निवेश/विदेशी तकनीकी सहयोग आता है, उन्हें भी FIPB की संस्तुति पर अनुमोदन दिया जाता है।

अनिवासी भारतीयों एवं 100 प्रतिशत नियार्तोन्मुख ईकाईयों को छोड़कर अन्य सभी प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के मामलों को, FIPB इकाईयों, आर्थिक मामलों का विभाग (DEA), वत्त मंत्रालय में प्रस्तुत करना चाहिए। अनिवासी भारतीयों एवं 100 प्रतिशत नियार्तोन्मुख ईकाईयों

के मामले, उद्योग नीति एवं संवर्धन विभाग (Department of Industrial Policy and Promotion) esa SIA (Secretariate for Industrial Asistance) को प्रस्तुत करने चाहिए। आवेदन विदेश में भारतीय मिशन में भी प्रस्तुत किए जा सकते हैं, जो उन्हें आगे की प्रक्रिया हेतु आर्थिक मामलों के विभाग को अग्रेषित कर देता है।

3.5.2.1 विनियम एवं प्रक्रियाएं

1.औद्योगिक लाइसेंस सम्बन्धी आवश्यकताओं से मुक्त (मौजूदा इकाईयों में विस्तार सहित)
2.अनिवार्य औद्योगिक लाइसंस के अधीन; एवं
3.छोटी इकाईयों में संयत्र एवं मशीनरी की निर्धारित निवेश सीमा से अधिक और छोटी इकाइयों के लिए आरक्षित वस्तुओं का निर्माण जारी रखने हेतु या उन मामलों में जहाँ किसी वस्तु के लिए औद्योगिक लाइसेंस की छूट को वापस ले लिया गया है।

निम्नलिखित श्रेणियों में विदेशी निवेश संवर्धन बोर्ड के माध्यम से प्रत्यक्ष विदेशी निवेश/अनिवासी भारतीयों द्वारा निवेश/विदेशी औद्योगिक संस्था द्वारा निवेश के लिए सरकारी अनुमोदन आवश्यक होगा–

1.वे प्रस्ताव जिनमें औद्योगिक लाइसेंस की आवश्यकता है।
2.वे प्रस्ताव जिनमें विदेशी सहयोगी का उसी या संबद्ध क्षेत्र में पहले से ही उद्योग स्थापित या किसी से जुड़ा (भारत में) हुआ है। हालांकि यह शर्त सूचना प्रौद्योगिकी उद्योग में प्रस्तावों के लिए लागू नहीं है।
3.वे प्रस्ताव जो किसी स्थापित भारतीय कम्पनी में शेयरों के अधिग्रहण से सम्बन्धित हैं।
4.वे प्रस्ताव जो अधिसूचित सेक्टोरल नीति के बाहर आते हैं या उन क्षेत्रों के अन्तर्गत जिनमें प्रत्यक्ष विदेशी निवेश की अनुमति नहीं है, या जब भी कोई निवेशक विदेशी निवेश संवर्धन बोर्ड को आवेदन के लिए चुनता है, स्वतः प्रदतः मार्ग को नहीं।

विदेशी निवेश संवर्धन बोर्ड द्वारा अनुमति प्राप्त विदेशी निवेश हेतु अनुमोदित भारतीय कम्पनियों को आवक प्रेषण मुद्रा एवं विदेशी निवेशक को शेयर जारी करने हेतु भारतीय रिजर्व बैंक की पुनः अनुमति प्राप्त करने की आवश्यकता नहीं है। इन कम्पनियों को विदेशी निवेशकों को शेयर जारी करने के 30 दिनों के अन्दर एवं आवक धन की प्राप्ति के अन्दर 30 दिनों के भीतर भारतीय रिजर्व बैंक को सूचित एवं जरूरी दस्तावेजों को प्रस्तुत करने की आवश्यकता है।

3.5.3 लघु उद्योग क्षेत्र में प्रत्यक्ष विदेश निवेश

लघु उपक्रम वे होते हैं जिनमें संयत्र और मशीनरी में स्थाई परिसम्पत्ति में 10 लाख से अधिक निवेश नहीं होता है। लघु क्षेत्र उद्योग नीति के अन्तर्गत लघु क्षेत्र के उपक्रमों में विदेशी इक्विटी सहित दूसरी इकाईयों का शेयर 24 प्रतिशत तक ही अनुमत है। परन्तु, यदि ईकाई

अपना लघु उद्योग स्वरूप छोड़ना चाहती है तब उसके शेयरों में विदेशी निवेश की कोई उच्च सीमा नहीं है, अगर किसी लघु उद्योग में, जो लघु क्षेत्र के लिए आरक्षित मद (मदों) के निर्माण में कार्यरत है, 24 प्रतिशत से अधिक विदेशी निवेश की दशा में, उसे 50 प्रतिशत का अनिवार्य निर्यात दायित्व संबंधी औद्योगिक लाइसेंस प्राप्त करना होगा।

एक लघु उद्योग जो लघु क्षेत्र के लिए आरक्षित मद/मदों के निर्माण में लगा है अगर सामान्य (प्राकृतिक) व्यापार वृद्धि के कारण, संयत्र और मशीनरी में निवेश की लघु क्षेत्र हेतु निर्धारित सीमा को लांघ लेता है तो उसे कैरी–ऑन–बिजिनेस (Carry-on-business- COB)लाइसेंस प्राप्त करने हेतु आवेदन करने की आवश्यकता है। हालांकि यदि ईकाई अपनी उपरोक्त क्षमता को और आगे बढ़ाती है तो उसे अलग औद्योगिक लाइसेंस प्राप्त करने हेतु आवेदन की आवश्यकता है।

3.6 भारत में संरचनात्मक निवेश

भारत जैसी उभरती हुई अर्थव्यवस्था जिसमें एक अरब से अधिक लोग निवास करते हैं, बुनियादी ढाँचा, जो कि आवश्यक सेवाएं प्रदान करता है, विश्वसनीयता, आश्वासन, कम लागत उत्पादन एवं बाजार प्रतिस्पर्धा को भी दर्शाता है। देश के बुनियादी ढांचे में सार्वजनिक निवेश दीर्घ अवधि विकास की नींव डालने हेतु अपर्याप्त है। ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना के तहत, बुनियादी ढांचे में निवेश राशि 34500 करोड़ डॉलर अनुमानित की गयी है। आंकड़े दर्शाते हैं कि भारत के बड़े हिस्से में बिजली और पीने योग्य पानी का अभाव है। खस्ता हाल सड़के एवं कार्गो हैण्डलिंग, बन्दरगाहो एवं हवाई जहाजों में देरी का कारण बनते हैं। इन्हें सरकार द्वारा प्रबंधित किया जाता है। इन सबके विपरीत दूर संचार क्षेत्र में देश ने बहुत तरक्की की है। यह अन्तर इस क्षेत्र में निजी भागीदारी के कारण है जिसके विपरीत अन्य क्षेत्रों में मुख्य रूप से सार्वजनिक भागीदारी है।

सन् 1991 से भारत ने अर्थव्यवस्था को उदार बनाने वाले उपायों को अपनाया एवं विदेशी प्रत्यक्ष निवेश को प्रोत्साहित किया। भारतीय बुनियादी ढांचे में सुधार हेतु कई उपाय किये गये हैं। पारम्परिक रूप से बुनियादी ढांचे का एक बड़ा हिस्सा सरकारी स्वामित्व में है एवं प्रबंधित किया जाता है। यह महसूस करके कि अगर भारत सरकार द्वारा केवल सरकारी धन पर निर्भर रहा गया तो बुनियादी ढांचे में विकास की दर धीमी हो जायेगी, इसमें अब निजी क्षेत्र को भी शामिल कर लिया गया है। बुनियादी ढांचे में विकास एवं विपणन कार्य सुविधा समझौतों द्वारा निजी क्षेत्र को दिया जाता है। इसके द्वारा उन्हें निर्माण एवं बुनियादी ढांचा सेवा संचालित करने और उत्पन्न राजस्व प्राप्त करने का अधिकार दिया जाता है, हालांकि सम्पत्ति का स्वामित्व सरकार में ही निहित रहता है। सरकार निवेश के अन्य तरीके भी प्रस्तावित करती है। भारत में केन्द्र सरकार एवं राज्य सरकारां के मध्य शक्तियों का बंटवारा किया गया है।

कुछ क्षेत्र अनन्य रूप से केन्द्र सरकार के लिये आरक्षित हैं, जबकि कुछ क्षेत्र संयुक्त सरकार (केन्द्र एवं राज्य दोनों) के अधीन हैं। मौजूदा कानून, नीतियों एवं विनियमनों की परीक्षा दर्शाती है कि वे तदर्थ दृष्टिकोण का परिणाम है, जो केन्द्र एवं राज्य सरकारों के अतिव्यापी शक्तियों द्वारा बिगड़ गयी है। विभिन्न क्षेत्रों में विनियामक ढांचा बिना किसी समन्वय के विकसित किया गया है। कभी–कभी कानूनों का केवल एक वर्ग और/या नीति एक विशेष क्षेत्र को बिना किसी नियामक संस्था के, जो विकास और संचालन को देखे, नियन्त्रित करता है। उदाहरणार्थ, परिवहन के क्षेत्र में कोई सम्पर्णू रूप से क्षेत्रीय प्राधिकरण नहीं हैं एवं भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण ही राष्ट्रीय राजमार्गों के नियामक एवं संचालन का कार्य करता है एवं उनके विकास के लिए भी वही जिम्मेदार है। इसके अलावा 26 राज्यों में से अधिकांश के पास राज्यों के अन्तर्गत आने वाले राजमार्गों की देखरेख के लिए अपने निगम या एजेंसी है। इसे देखते हुए निवेशकों को एक एकल, स्वतन्त्र नियामक का सहारा नहीं है। इस मुद्दे को और बिगाड़ने के लिए सम्बन्धित विधि बनाने की शक्ति, प्रशासन का अधिकार एवं विवादों के निपटारे का अधिकार भी एक ही संस्था में निहित है। यह स्थिति जटिल समस्याओं को उत्पन्न करती है। संविधान के स्पष्ट एवं अनिवार्य उपबंधों के बावजूद शक्तियों को कोई बंटवारा नहीं है। कभी–कभी केन्द्र एवं राज्य सरकारों के मध्य नियामक संस्था से सम्बन्धित विवाद उत्पन्न हो जाते हैं। उदाहरणार्थ एक विवाद तब उत्पन्न हुआ जब गुजरात सरकार द्वारा गुजरात गैस (विनियमन या पारेषण, आपूर्ति व वितरण) अधिनियम, 2001 पारित किया गया। भारत के उच्चतम न्यायालय द्वारा यह निर्धारित किया गया कि प्राकृतिक गैस एवं एल0एन0जी0 के पारेषण, आपूर्ति एवं वितरण को नियंत्रित करने की अनन्य शक्ति केन्द्र के अधीन है जबकि राज्य सरकार औद्योगिक, चिकित्सीय या अन्य समान उद्देश्य के लिये गैस एवं गैसीय कार्यों हेतु विधि बना सकती है।

सन् 1991 से क्षेत्रीय आधार पर, केन्द्र या विभिन्न राज्य सरकारों के मंत्रालय द्वारा कुछ स्वतन्त्र नियामक ऐजेंसियों को स्थापित किया गया। यहाँ यह भी ध्यान देने वाली बात है कि केन्द्रीय सरकार के अन्तर्गत विभिन्न मन्त्रालय जो अलग–अलग क्षेत्रों का उत्तरदायित्व संभालते हैं वे जिस विस्तृत प्रशासनिक संस्थाओं के माध्यम से कार्य करते हैं वे नौकरशाही बाधाओं से भरपूर हैं। हालांकि बुनियादी ढांचे को आर्थिक विकास हेतु महत्वपूर्ण स्थान दिया जाता है, यह आधारिक एवं जटिल समस्याओं में जकड़ी हुई है। उदाहरणार्थ, बुनियादी ढांचे पर भारत सरकार की समिति के अनुसार इसकी कोई स्पष्ट परिभाषा नहीं निर्धारित की गयी है। हालांकि इस समिति द्वारा बुनियादी ढांचे से सम्बन्धित विभिन्न भारतीय विधियों की जांच करने के पश्चात एक औपचारिक सूची तैयार की गयी है जिसमें अन्य के साथ दूरसंचार एवं ऊर्जा के क्षेत्र को भी शामिल किया गया है। आश्चर्यजनक रूप से ही इस सूची में सामाजिक बुनियादी ढांचे के कई महत्वपूर्ण क्षेत्रों, जैसे कि शिक्षण संस्थाओं या स्वास्थ्य को, जो कि देश के समग्र विकास के लिए आवश्यक है, शामिल नहीं किया गया है।

3.6.1 बंदरगाह

भारत के व्यापक समुद्र तट में 12 बड़े एवं 187 छोटे बंदरगाह स्थित हैं। बड़े बंदरगाह, जो लगभग कुल समुद्री यातयात का 74 प्रतिशत वहन करते हैं, द्वारा पिछले वित्तीय वर्ष के दौरान, 463 लाख टन से अधिक का माल वहन किया गया, एवं यह उससे पहले वर्ष की तुलना में 9.5 प्रतिशत अधिक था।

पारम्परिक रूप से सम्पूर्ण विश्व में बंदरगाह सरकार के स्वामित्व में विकसित किये जाते हैं। उसी प्रकार अतीत में भारत सरकार द्वारा बंदरगाहों का विकास किया गया परन्तु वर्तमान में बंदरगाहों के विकास एवं संचालन हेतु निजी क्षेत्र एवं विदेशी संस्थाओं को निवेश हेतु प्रोत्साहित किया गया है। बंदरगाह समुद्र द्वारा भारत के अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार हेतु प्रवेश द्वार का कार्य करते हैं एवं 90 प्रतिशत से अधिक विदेशी व्यापार का संचालन करते हैं। भारतीय सरकार द्वारा बंदरगाह परियोजनाओं में निहित महत्व को स्वीकार किया गया, जिनमें सामान्यतः लम्बे समय तक विकास की अवधि शामिल है। उच्च लागत और बजट की कमी एवं बजट का अत्यधिक होने के कारण, सार्वजनिक–निजी भागीदारी बनाने हेतु लचीली धन योजनाओं को प्रोत्साहित किया गया। कई बड़े बंदरगाह अब अन्तर्राष्ट्रीय पार्टियों जैसे मियर्स्क, पी एण्ड ए पोर्ट्स एवं दुबई पोर्ट इंटरनेशनल, कुछ भारतीय उद्योगपति उदाहरणार्थ, अदानी समूह, छोटे बंदरगाहों के विकास में सम्मिलित हैं।

सरकार ने कुछ अवरोधों के साथ बन्दरगाहों के निजीकरण एवं विकास योजनाओं (थ्क्प्) को अनुमति प्रदान की है। इस श्रेणी में अनुमत प्रत्यक्ष विदेशी निवेश स्वचालित मार्ग ;नजवउंजपब तवनजमद्ध के अन्तर्गत अनुमति प्राप्त है; उन योजनाओं में विदेशी शेयर, 51 प्रतिशत तक अनुमत है, जो जल परिवहन को समर्थन सेवा प्रदान करते हैं, जैसे कि गोदियों (च्पमते) का संचालन एवं रखरखाव, वाहनों पर समान चढ़ाना एवं उतारना। बंदरगाहों एवं हार्बर के निर्माण एवं रखरखाव में 74 प्रतिशत तक विदेशी शेयर को अनुमति दी गयी है। इसके अलावा स्वचालित मार्ग के तहत शत प्रतिशत विदेशी प्रत्यक्ष निवेश की बन्दरगाह विकास परियोजनाओं हेतु अनुमति प्रदान की गयी है। यहाँ यह बात महत्वपूर्ण है कि इस तरह के निवेश पर 10 वर्षों तक कोई कर नहीं चुकाना होगा। अतः कई समुद्री और गैर–समुद्री (दवद.उमतपजपउम) कम्पनियां इस क्षेत्र में निवेश को आ रही हैं।

भारत सरकार, केन्द्रीय प्राधिकरण के द्वारा कुछ प्रमुख बन्दरगाहों को देखती है जबकि अन्य बन्दरगाहों की देखरेख सम्बन्धित राज्य की सरकारों द्वारा जहाँ कि वे स्थित है, की जाती है।प्रमुख बंदरगाहों हेतु प्रशुल्क प्राधिकरण का गठन 1997 में किया गया था। वह केवल प्रमुख बंदरगाहों के राजस्व सम्बन्धित मामलों को नियन्त्रित एवं संचालित करता है। छोटे बंदरगाह को नहीं।

प्रमुख पतन (बंदरगाह) ट्रस्ट के प्राधिकार के तहत प्रमुख पतन के लिए प्रशुल्क प्राधिकरण का उद्देश्य एक स्वतन्त्र निकाय स्थापित करने का है जो प्रशुल्क, माल यातायात एवं सम्पत्ति लीज दर को नियन्त्रित करे। हालांकि इस निकाय की शक्ति शुल्कों की वसूली तक सीमित हैं एवं यह इस क्षेत्र के अन्य पहलुओं को विनियमित नहीं कर सकता।

हाल ही के विकास के साथ भारत सरकार पहली बार विस्तृत राष्ट्रीय समुद्री विकास नीति तैयार कर रही है जो निजी निवेश को बढ़ावा देगी, सेवाओं की गुणवत्ता को बढ़ाएगी एवं प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा देगी। इस नीति का उद्देश्य पत्तन परियोजनाओं में ऊँचे स्तर पर निवेश को प्रोत्साहित करना भी है ताकि मध्य एवं लम्बे समय के उद्देश्यों की पूर्ति की जा सके।

3.6.2 रेलवे

भारतीय रेल एकल प्रबंधन के तहत विश्व के बड़े रेल – तन्त्रों में से एक है एवं यह 63,000 किमी से भी अधिक के रेलवे ट्रैक का प्रबंधन करता है। इसका वित्तीय विवरण इतना विशाल है कि राष्ट्रीय बजट से अलग इसका अपना अलग बजट पेश किया जाता है। सम्बन्धित नीति निर्माण एवं पूरी रेलवे प्रणाली को भारतीय रेल मंत्रालय द्वारा नियन्त्रित किया जाता है एवं यह रेलवे बोर्ड में निहित है जिसमें अध्यक्ष, वित्तीय कमिश्नर एवं प्रशुल्क के अन्य कार्यरत सदस्य, अभियान्त्रिकी, यान्त्रिकी, विद्युत एवं स्टाफ सदस्य आते हैं।

रेलवे जो अन्य परिवहन माध्यमों से सस्ता एवं सुलभ है, लम्बी दूरी की यात्रा हेतु बहुत प्रयोग किया जाता है। पिछले कुछ वर्षों के दौरान हवाई यात्रा सस्ती होने के कारण इसे प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ा है लेकिन अब ऊँची हवाई ईधन दर के कारण हाल में ही इसमें कमी आई है।

यात्री रेलगाड़ी एवं तेजगति की रेल में भारतीय रेलवे अकेली होने के कारण वर्तमान रेल ट्रैक के जाल पर अत्यधिक भार हो गया है। इसे ध्यान में रखते हुए भारत सरकार ने रेल की पटरियों को विस्तृत करने हेतु 5 बिलियन डॉलर के निवेश का निर्णय लिया है। साथ ही साथ भारतीय रेलवे विभाग ने इसकी कमियों को दूर करने एवं रेलवे की क्षमता को जरूरतों के हिसाब से बढ़ाने हेतु योजना तैयार की है। भारत सरकार द्वारा और भी ऐसे कदम उठाए गए हैं जिसके अन्तर्गत कम–खर्चों एवं ऊँची दर पर वापसी वाले निवेश आते हैं, जिसमें पत्तनों से जुड़ना, छोटी लाइन का बड़ी लाइनों में बदलाव, दूर संचार, सम्पत्ति का पुर्ननवीनीकरण एवं यात्री टर्मिनल का आधुनिकीकरण पर जोर दिया गया है। मालवाहक ट्रेनों की बढ़ती मांग के कारण रेल द्वारा आवागमन में तेजी से वृद्धि की जरूरत महसूस की गयी है। अब तक कंटेनर (माल के डिब्बे) परिवहन पर सार्वजनिक क्षेत्र का एकाधिकार था परन्तु अब इसे प्रतिस्पर्धा एवं निजी कम्पनियों के लिए खोल दिया गया है, ताकि बुनियादी ढांचे एवं तदनुसार सार्वजनिक निजी भागीदारी (PPP) को प्रोत्साहित किया जा सके। इसे देखते हुए हाल ही में रेल भूमि

विकास प्राधिकरण को सार्वजनिक निजी भागीदारी को प्रोत्साहित एवं उसकी निगरानी हेतु स्थापित किया गया है। भारतीय रेलवे ने 500 एकड़ भूमि, देशभर में रेलवे स्टेशनों, माल ढुलाई टर्मिनल एवं रेल–लिंक परियोजनाओं के विकास हेतु पेशकश की है। इसके अलावा भारतीय रेलवे ने लगभग 22 रेलवे स्टेशन चिन्हित किए है। जिनका आधुनिकीकरण सार्वजनिक निजी भागीदारी (PPP) मॉडल के तहत किया जाना है।

3.6.3 राजमार्ग एवं सड़कें

भारत में 3.3 मिलियन किमी का विशाल सड़कों का नेटवर्क है जो दुनिया में दूसरा सबसे बड़ा है। हालांकि भारत में सड़के 65 प्रतिशत माल ढुलाई एवं 80 प्रतिशत यात्री यातायात को वहन करती है लेकिन गुणवत्ता एवं सड़कों का विस्तार अपर्याप्त है। अतः विकास हेतु यह प्राथमिक क्षेत्र में आता है। इस कारण भारत सरकार प्रतिवर्ष 4 बिलियन यू एस डॉलर इसके विकास पर खर्च करती है एवं निजी एवं विदेशी निवेश को भी इस क्षेत्र में प्रोत्साहित करती है। निजी क्षेत्र की भागीदारी बढ़ रही है जो आमतौर पर निर्माण अनुबंध 'बनाओं–संचालन करो– हस्तांतरित करो' (BOT) माडल पर आधारित है जो लगभग कुल निवेश का 36 प्रतिशत है एवं प्रतिस्पर्धा द्वारा बोली या जिसमें सबसे कम कुल सरकारी निवेश शामिल हैं, पर आधारित है। प्रत्येक मामले के अनुसार, विकासकर्ता या मालिकों का उन सड़कों पर टोल (कर) एकत्रित करने की अनुमति दी जा सकती है जो राष्ट्रीय राजमार्ग विकास योजना (अब तक की सबसे बड़ी सड़क परियोजना) का हिस्सा है।

भारत का राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण (NHAI) प्रमुख सरकारी निकाय है जो देश भर में केन्द्रीय सरकार के दायरे में आने वाले सड़कों के विकास को देखता है, यही निकाय प्रतिस्पर्धा बोली के द्वारा सभी संविदाओं को तय करता है चाहे वो ठेके पर हों या ''बनाओ– संचालित करो– हस्तांतरित करो'' माडल पर आधारित हों। राजमार्गों एवं सड़कों में निवेश को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से सरकार द्वारा सभी सड़क परियोजनाओं को 10 वर्ष के लिए आय कर की छूट प्रदान की गई है। इसके साथ ही सीमान्त परियाजनाओं हेतु भारत का राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण (छभ।ए) अनुदान एवं व्यवहार्यता अंतर निधिकरण (Viability gap funding) पर भी विचार करता है। सरकार द्वारा भी मॉडल रियायत समझौते तैयार किए गये हैं।

3.6.4 विमानपत्तन

पिछले वित्त वर्ष के दौरान भारतीय हवाई अड्डों द्वारा 95 मिलियन यात्रियों एवं 1.5 मिलियन माल को वहन किया गया। जो कि 2006–2007 में 2005–2006 से 30 प्रतिशत अधिक है। माल

यातायात में पिछले वर्ष की तुलना में 11 प्रतिशत की वृद्धि देखी गयी। विशेष रूप से हवाई यातायात में 2003 एवं 2007 के मध्य प्रतिवर्ष 21.75 प्रतिशत की दर से वृद्धि हुई एवं 2007 के पहली तीन तिमाही के दौरान 37.74 प्रतिशत की रिकार्ड वृद्धि इस क्षेत्र में दर्ज की गई। एक अनुमान के अनुसार 2020 तक 30 बिलियन यू एस डॉलर इस क्षेत्र द्वारा आकर्षित किए जाने की उम्मीद है।

अतीत में भारत के विमानपत्तन का विकास एवं संचालन सरकार द्वारा किया जाता था जब तक कि उन्हें सन् 1994 में भारत के विमानपत्तन प्राधिकरण को हस्तान्तरित नहीं कर दिया गया। सन् 2003 में भारत का विमानपत्तन प्राधिकरण अधिनियम, 1994 में संशोधन कर विमानपत्तन के बुनियादी ढांचे के लगभग प्रत्येक क्षेत्र में निजी क्षेत्र को निवेश की सुविधा प्रदान कर दी गयी। विमानपत्तनों का विकास रियायती समझौतों द्वारा सार्वजनिक–निजी भागीदारी (PPP) या बनाओ–संचालन करो– हस्तांतरित करो (Built-Opperate-Tranfer-BOT) मॉडल के द्वारा किया गया है। सरकार आमतौर पर निजी क्षेत्र के साथ 26 प्रतिशत हिस्सेदारी द्वारा संयुक्त रहती है परन्तु हाल ही में कोलकत्ता एवं चेन्नई में विकसित दो परियोजनाएं पूर्ण स्वामित्व वाली हैं।

भारत में 126 विमानपत्तन है जो भारत के विमानपत्तन प्राधिकार के स्वामित्व में संचालित किए जाते हें। इनमें से पांच विमानपत्तन प्रमख़ु महानगरों में हैं जो अधिकांश यातायात वहन करते है। सरकार 25 शहरों के हवाई अड्डों में निजी कम्पनियों के निवेश पर विचार कर रही है। इसके अलावा भारत सरकार एक नई नागरिक हवाई नीति बनाने पर विचार कर रही है। जिसमें हवाई यातायात नियन्त्रण प्रणाली का निगमीकरण सम्मिलित है।

हवाई किराये को अधिक वहन करने योग्य बनाने हेतु, भारत सरकार द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय पर्यटकों के समक्ष भारत की विशाल धरोहर एवं प्राकृतिक सुंदरता को भुनाने की योजना बनायी गयी है। इसी क्रम में अगले 5 वर्षों में विमानपत्तनों के विकास हेतु लगभग 9 बिलियन यू एस डालर के निवेश की जरूरत होगी।

एक ग्रीनफील्ड (Greenfield) हवाई अड्डा या विमानपत्तन वह होता है जहां निजी कम्पनी या एक सार्वजनिक–निजी संयुक्त उद्यम; ''बनाओ–संचालित करो– हस्तान्तरित करो'' (BOT) या ''बनाओ–स्वामित्व करो– संचालित करो'' (BOO) संविदाओं के माध्यम से निर्माण कार्य करते हैं एवं नई सुविधाओं को संचालित करते हैं हालांकि इस प्रकार के ग्रीनफील्ड हवाईअड्डे सार्वजनिक या निजी क्षेत्र में केवल सरकार की पूर्व अनुमति द्वारा ही शुरू किए जा सकते हें। एक ग्रीनफील्ड हवाईअड्डे को वर्तमान हवाईअड्डे के स्थानापन्न के रूप में या समकालिक संचालन के लिए अनुमति दी जा सकती है। स्वचालित मार्ग (Automatic route) के अन्तर्गत सरकार ने ग्रीनफील्ड हवाईअड्डों के लिए 100 प्रतिशत प्रत्यक्ष विदेशी निवेश को अनुमति दी है। अन्य विमानपतनों/हवाईअड्डों के विकास हेतु 74 प्रतिशत से अधिक के निवेश हेतु

विदेशी निवेश संवर्धन बोर्ड (FIPB) के अनुमोदन की आवश्यकता है। इसे प्रोत्साहित करने के लिए विमानपत्तन परियोजनाों को 10 वर्षो के लिए 100 प्रतिशत कर मुक्त किया गया है। हाल ही की विमानपत्तन विकास परियोजनाएं अधिकांश यात्रियों पर केन्द्रित है उनमें माल यातायात पर कम ही ध्यान दिया गया है। सरकारी आंकड़ों के अनुसार हवाई माल ढुलाई में 1,020 टन (2006–2007) से बढ़कर 1,745 टन (2011–2012 तक) अनुमानित की गई है। यह वृद्धि देश में आर्थिक गतिविधियों में वृद्धि एवं खराब होने माल के क्षेत्र में वृद्धि, जिसे त्वरित एवं विश्वसनीय परिवहन की आवश्यकता पड़ती है, के कारण हैं। इन बातों को ध्यान में रखते हुए सरकार ने सभी नए ग्रीनफील्ड विमानपत्तनों के लिए यह अनिवार्य किया है कि ऐसे सभी विमानपत्तनों पर अलग से माल ढुलाई की सुविधा होनी चाहिए जिसके अन्तर्गत भंडारण एवं लदान क्षमताएं शामिल हैं।

3.6.5 दूरसंचार

सामान्य रूप से भारत के दूरसंचार क्षेत्र का संचालन भारत के दूरसंचार नियामक प्राधिकरण अधिनियम, 1997 के द्वारा किया जाता है। भारत का दूरसंचार नियामक प्राधिकरण (ज्त।ए) ही वह संस्था है जो देश में दूरसंचार एवं इंटरनेट सेवाओं को नियन्त्रित करती है। अन्य क्षेत्रों के विपरीत दूरसंचार क्षेत्र में सार्वजनिक एवं निजी दोनों क्षेत्रों की कम्पनियों की संतुलित भागीदारी दिखाई देती है। भारत सरकार द्वारा दूर संचार उपकरणों के निर्माण में 100 प्रतिशत प्रत्यक्ष विदेशी निवेश एवं कई अन्य दूरसंचार सेवाओं हेतु 74 से 100 प्रतिशत तक प्रत्यक्ष विदेशी निवेश अनुमोदित किया गया है। अधिक प्रभावी वातावरण का निर्माण करने की दृष्टि से सरकार द्वारा दूरसंचार क्षेत्र के लिए एकीकृत और एकल उगाही (स्मअल) के निर्माण हेतु एक समिति का गठन किया गया है, क्योंकि इस क्षेत्र द्वारा बहुत से अतिरिक्त कर, शुल्क और फीस वहन किए जा रहे हैं। चूंकि सरकार को इस क्षेत्र में 150 प्रतिशत वृद्धि का अनुमान है, इस क्षेत्र में निवेश के बड़े अवसर (लगभग 22 बिलियन डालर) विदेशी और/या निजी क्षेत्र को प्रस्तुत किए गये हैं।

3.6.6 ऊर्जा

भारत के पास दुनिया की पांचवी सबसे बड़ी ऊर्जा उत्पादन क्षमता है। ऊर्जा क्षेत्र में निवेश में भारी वृद्धि के बावजूद भारत अभी भी देश भर के प्रमुख ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों में बिजली की कमी का सामना कर रहा है। भारत में अधिकांश विद्युत वितरण एवं पारेषण में सार्वजनिक क्षेत्र या राज्य विद्युत बोर्ड का स्वामित्व है, हालांकि वितरण में अब निजी क्षेत्र की भागीदारी में वृद्धि हुई है। निजी क्षेत्र की भागीदारी के साथ बड़ी उत्पादन परियोजनाओं की योजना बनाई गई है। इस क्षेत्र को नियन्त्रित करने वाली प्रमुख विधियों में विद्युत अधिनियम, 2003 एवं राष्ट्रीय

विद्युत नीति, 2005 शामिल है। सभी तकनीकी एवं आर्थिक मामलों में ऊर्जा मंत्रालय को विद्युत (आपूर्ति) अधिनियम, 1948 के अधीन गठित केन्द्रीय विद्युत प्राधिकरण सहायता देता है। केन्द्रीय क्षेत्र में विद्युत के उत्पादन एवं वितरण परियोजनाओं का निर्माण एवं संचालन केन्द्रीय क्षेत्र ऊर्जा निगम को सौंपा गया है। पावर ग्रिड (च्वूमत ळतपक) सभी वर्तमान एवं भविष्य के वितरण परियोजनाएं (केन्द्रीय क्षेत्र में) एवं राष्ट्रीय ऊर्जा ग्रिड के गठन के लिए जिम्मेदार है। ग्रामीण क्षेत्रों में विद्युतीकरण के कार्यक्रम हेतु वित्तीय सहायता ग्रामीण विद्युतीकरण निगम प्रदान करता है जो ऊर्जा मंत्रालय एवं ऊर्जा वित्त निगम के अधीन है एवं ऊर्जा के क्षेत्र में परियोजनाओं हेतु अवधि–वित्त उपलब्ध कराता है। केन्द्रीय विद्युत विनियामक आयोग जो एक स्वतन्त्र विनियामक संस्था है, केन्द्रीय सार्वजनिक क्षेत्र की ईकाई के मध्य मामलों को देखती है।

भारत सरकार इस क्षेत्र में निजी निवेश आकर्षित करने हेतु उत्सुक है एवं ऊर्जा उत्पादन, वितरण एवं पारेषण में 100 प्रतिशत प्रत्यक्ष विदेशी निवेश का प्रस्ताव किया है। अन्य प्रोत्साहनों में संचालन के प्रथम 15 वर्षों में 10 वर्ष तक आयकर में छूट एवं बड़ी ऊर्जा परियोजनाओं (1,000 HW उत्पादन क्षमता से ऊपर) में पूंजीगत वस्तु के अयात पर आयात शुल्क में छूट प्रदान की है। इस क्षेत्र में उत्पादन एवं वितरण में निजी क्षेत्र की भागीदारी लगातार बढ़ती हुई दिखाई देती है क्योंकि कई निजी क्षेत्रों द्वारा वितरण लाइसेंस प्राप्त किए जा चुके हैं। इसके अतिरिक्त लगभग 1,50,000 डॅ की पनबिजली ऊर्जा क्षमता अभी तक प्राप्त की जा चुकी है एवं अगले 2–3 वर्षों में बोली द्वारा ऊर्जा वितरण के अवसरों को निजीकरण हेतु खोले जाने की उम्मीद है। इस क्षेत्र में अगले 7 वर्षों में करीब 200 बिलियन यू एस डॉलर के निवेश अवसरों का अनुमान लगाया गया है।

3.6.7 नवीकरणीय ऊर्जा (Renewable energy)

ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोतों के महत्व को स्वीकारते हुए भारत सरकार द्वारा अलग नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय स्थापित किया गया है जो ग्रामीण ऊर्जा, सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा उत्पादन, व्यर्थ वस्तुओं से ऊर्जा का विकास एवं अन्य बातों के अलावा ग्रामीण विद्युतीकरण से सम्बन्धित नीतियों का विकास कर उन्हें अमल में लाता है। मंत्रालय का व्यापक उद्देश्य नये एवं अक्षय ऊर्जा स्रोतों का विकास कर देश में विद्युत की माँग की पूर्ति करना है जिसकी परम्परागत ऊर्जा स्रोतों से पूर्ति नहीं हो पाती है। भारत सरकार द्वारा भी गावों एवं शहरों या अर्द्ध–शहरों केन्द्रों के लाभ हेतु अक्षय ऊर्जा के लिए विश्व का सबसे बड़ा कार्यक्रम शुरू करने के उद्देश्य से कई कार्यक्रमों एवं योजनाओं की शुरूआत की गई है। नवीन एवं नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय द्वारा इस क्षेत्र में अनेक निवेश के अवसरों का निर्माण किया गया है।

3.7 प्रकटीकरण एवं सूचना

सम्पूर्ण विश्व के लोकतान्त्रिक देशों में सबसे अधिक उपेक्षित अधिकार सूचना का अधिकार है। महत्वपूर्ण अधिकार होने के बावजूद भारत सहित विश्व में अधिकांश देशों में इस अधिकार को अधिक सम्मान नहीं प्रदान किया गया है। अब सूचना के अधिकार को प्रथागत अन्तर्राष्ट्रीय कानून माना जाता है। इसे कई राज्यों के संविधान में स्थापित किया गया है साथ ही साथ अनेक अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदा (Convenant) एवं संधियों में, विशेष रूप से मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा (UDHR), नागरिक एवं राजनीतिक अधिकारों पर अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदा (ICCPR) एवं मानवाधिकारों पर यूरोपियन आयोग (ECHR) एवं अन्य में इसे प्रमुख रूप से लिया गया है।

सूचना के अधिकार का आंतरिक एवं सहायक मूल्य है। इसका आंतरिक मूल्य इस बात से सिद्ध होता है कि नागरिकों को जानने (सूचना) का अधिकार है। यह एक गहरी और अधिक सार्थक लोकतन्त्र की दिशा में महत्वपूर्ण कदम है। वास्तव में भारत जैसे देश में यह विकास को प्रोत्साहित कर सकता है। अतः इसका सहायक मूल्य सिद्ध होता है। सूचना लोगों को प्रबुद्ध विकल्प देने में एवं चुने गये प्रतिनिधियों एवं अफसरों पर नजर रखने में जो उनके लिए सामूहिक रूप से कार्य करते हैं, सहायक होती है। अतः उत्तरदायित्व एवं पारदर्शित दोनों को ही मौलिक रूप से बढ़ावा मिलता है। पिछले कुछ दशकों में सूचना के अधिकार को अन्तर्राष्ट्रीय मानवाधिकार के रूप में मान्यता प्रदान की गई है एवं दुनिया भर के समाज अपारदर्शी एवं गुप्त प्रशासनिक प्रणाली से खुली एवं पारदर्शी प्रणाली की ओर बढ़ रहे हैं। स्वीडन को 200 वर्ष पहले सार्वजनिक मामलों में पारदर्शिता हेतु कानून बनाने वाले देश के रूप में माना जाता है। उदारवादी देशों में तानाशाही की तरह लोगों को उन बुनियादी सूनाओं से वंचित किया जाता है जिन्हें सार्वजनिक अधिकार क्षेत्र में होना चाहिए। मूल समस्या यह है कि वर्तमान शासन व्यवस्था में कोई जवाबदेही नहीं है। सभी मानवाधिकार जवाबदेही की मांग हेतु सूचना के मूल अधिकार पर निर्भर हैं। भारत में सामंती सामाजिक ताने–बाने ने अपने लाभ के लिए औपचारिक लोकतांत्रिक प्रणाली का शोषण किया है क्योंकि शिक्षित अपने कैरिअर एवं साम्राज्य के निर्माण में इतने व्यस्त हैं कि उन्हें सामाजिक अपर्याप्ताओं का भान ही नहीं है। अतः सूचना का अधिकार (RTI) आंदोलन को सभी का व्यापक समर्थन प्राप्त है। भारत में सूचना के अधिकार की गारंटी के लिए लड़ाई राजस्थान के अशिक्षित गांव वालों द्वारा लड़ी गयी। जब उनके साथ सरकार द्वारा मजदूरी में धोखा किया गया था जब वे 1990 के दशक के मध्य पड़े अकाल के दौरान कार्यरत थे। उनके गुस्से की चिंगारी ऐसी भड़की कि सम्पूर्ण देश में सूचना के अधिकार के आंदोलन की आग भड़क उठी सरकारी जवाबदेही की मांग आखिर अपने मुकाम पर पहुँची और भारतीय संसद को सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 पारित करना पड़ा।

3.7.1 पारदर्शी/खुली सरकार का सिद्धान्त (Concept of Open Government) एवं सूचना का अधिकार

आज के युग में प्रशासनिक विधि के क्षेत्र में दो महत्वपूर्ण विषय– सूचना का अधिकार एवं पारदर्शी या खुली सरकार माने जाते हैं। आज के समय में लोकतान्त्रिक देशों ने खुली एवं पारदर्शी सरकार को अत्यधिक महत्व देना शुरू कर दिया है। जनहित एवं राष्ट्रीय हित में कुछ सूचनाएं ऐसी होती हैं जिनका गोपनीय रखा जाना आवश्यक होता है एवं कभी–कभी महत्वपूर्ण व्यक्ति के हित में विधि गोपनीयता रखती है लेकिन गोपनीयता आवश्यकता से अधिक नहीं होनी चाहिए। एक आधुनिक लोकतन्त्र में पारदर्शी सरकार पर जोर देते हुए गोपनीयता एवं पारदर्शी/खुली सरकार के मध्य एक संतुलन होना आवश्यक है। पारदर्शी सरकार के सुझाव हेतु अनेक कारण हैंः–

मूल रूप से लोकतन्त्र का महत्वपूर्ण पहलू, लोगों द्वारा सरकार में भागीदारी है, लेकिन लोग तब तक सही भागीदारी नहीं निभा सकते जब तक कि उन्हें इस बात की सूचना न हो कि देश में क्या चल रहा है। एक आधुनिक लोकतान्त्रिक राज्य का जनता के प्रति जवाबदेही होने के नाते लोगों का यह अधिकार है कि उन्हें सरकार द्वारा अपनायी जा रही नीतियों एवं कार्यक्रमों एवं उनके कैसे और क्यों के बारे में सूचना हो। दूसरा कारक जो सरकार की पारदर्शिता को न्यायोचित ठहराता है वह यह है कि कल्याणकारी राज्य में सरकार की सक्रिय भागीदारिता होने के कारण सरकार में बड़ी मात्रा में शक्तियां निहित होती हैं जिनका प्रयोग आर्थिक हितों एवं व्यक्तियों की निजी स्वतन्त्रता को प्रभावित करने में किया जाता है। अतः यह अति आवश्यक है कि इन शक्तियों का प्रयोग जनहित में किया जाए एवं इनका अनुचित प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए। इस उद्देश्य की पूर्ण प्राप्ति तभी संभव है जब लोगों को सरकारी सूचनाओं का अधिकार हो न कि, सरकार अपनी शक्तियों का प्रयोग कैसे कर रही है इसे गोपनीयता के पर्दे में रखा जाए। चुंकि शक्ति भ्रष्टाचार की ओर अग्रसर होती है एवं आत्यान्तिक शक्ति आत्यान्तिक भ्रष्टाचार की ओर ले जाती है, अतः जहां व्यापक शक्तियां निहित होती हैं वहां यह अन्तर्निहित खतरा विद्यमान रहता है कि उन शक्तियों का प्रयोग जनहित में न होकर निजी हित या भ्रष्ट उद्देश्यों की पूर्ति के लिए हो। अतः लोगों के लिए यह आवश्यक है कि उन्हें जितना अधिक हो सके उतनी सरकार की गतिविधियों के बारे में सूचना हो, यह सरकार के खुलेपन या पारदर्शित से ही सभ्भव है जो सरकार द्वारा शक्तियों के दुरूपयोग या अन्यथा प्रयोग पर रोक लगा सकती है। भारत में अब तक पारदर्शी सरकार की ओर प्रगति धीमी रही है। हालांकि यह ध्यान देने योग्य है कि न्यायमूर्ति भगवती ने अपने ऐतिहासिक एस0पी0 गुप्ता के वाद में यह सलाह दी थी।

3.7.2 सूचना का अधिकार आंदोलन

राजस्थान में मजदूर किसान शक्ति संगठन, जो कि किसानों एवं ग्रामीण कामगारों की संस्था थी द्वारा जमीनी स्तर पर संघर्ष की शुरूआत की गई। इससे प्रेरणा पाकर बड़े स्तर पर सूचना के अधिकार की वकालत होने लगी एवं आमजन द्वारा इसकी माँग की जाने लगी। सूचना के अधिकार के संघर्ष जिसकी सन् 1994–95 में ग्रामीण मध्य राजस्थान से शुरूआत हुई वह पंचायती राज संस्था में विकास खर्चों के सार्वजनिक लेखे पर केन्द्रित थी। जब मध्य राजस्थान के गरीब ग्रामीणों द्वारा खर्चे सम्बन्धी लेखे–जोखों को हकीकत में किये गए जमीनी कार्य से विरूद्ध जांचा परखा गया एवं यह देखा गया कि कितने कामगारों द्वारा हकीकत में कार्य किया गया एवं कितनी मजदूरी हकीकत में दी गई तो उन्हें बड़े पैमाने पर विकास निधि में की गई गड़बड़ी नजर आई। इसमें अनेकों फर्जी दाखिले एवं ओवर बिलिंग की गई थी जिसमें चुने गये एवं स्थायी जन प्रतिनिधि एवं आफिसर एवं उनके साथ निजी संस्थाएं भी सम्मिलित थीं। इस भ्रष्टाचार का परिणाम स्थानीय कर्मचारियों को रोजगार की हानि एवं उन्हें कम भुगतान के रूप में सामने आया एवं इसके फलस्वरूप गरीब लोगों को जो स्वास्थ्य सेवाएं, घर एवं शिक्षा दी जानी थी, वे या तो उन्हें नहीं मिली और अगर मिली भी तो उसकी गुणवत्ता बहुत निचले स्तर की थी। किसानों एवं मजदूरों के संगठन द्वारा किए गये आंदोलन ने सरकारी दस्तावेजों में हेर–फेर एवं जीवन सम्बन्धी सुविधाओं से वंचित गरीबों के मध्य सम्बन्ध स्थापित करने का कार्य किया। सरकारी दस्तावेजों के उपयोग का अधिकार इस तरह जीवन एवं जीवनयापन के अधिकार का हिस्सा बन गया, जो सभी मानवाधिकारों में सबसे मूल अधिकार है। इस आंदोलन ने लोगों के सूचना के अधिकार को भारतीय संविधान द्वारा प्रदत्त जीवन और स्वतन्त्रता के मौलिक अधिकार में स्थापित कर दिया। यह केवल वाक एवं अभिव्यक्ति के मौलिक अधिकार के अन्तर्गत नहीं रह गया जैसा कि उच्चतम न्यायालय द्वारा एस0पी0 गुप्ता के वाद में व्याख्या की गयी थी।

यह धारणा कि सूचना का अधिकार वाक एवं अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता के अधिकार एवं जीवन के अधिकार जो कि संविधान के अधीन प्रदान किए गये हैं, के मध्य एक महत्वपूर्ण जोड़ है, ने सार्वजनक बहस को एक महत्वूपर्ण बदलाव दिया। यह इसी बदलाव का प्रतीक है कि अब सूचना के अधिकार पर किसी भी विधि के संबंध में जनता के अधिकार पर किसी भी विधि के संबंध में जनता की उम्मीदों को सूचित करता है।

3.7.3सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005

दिसम्बर 2002, में संसद द्वारा सूचना की स्वतन्त्रता अधिनियम, 2002 (Freedom of Information Act, 2002) पारित किया गया, परन्तु यह कभी लागू नहीं हो पाया क्योंकि इसके लागू होने की तिथि का सरकारी गजट में कोई उल्लेख नहीं था। तत्पश्चात 2005 में सूचना का अधिकार अधिनियम पारित किया (Right to information Act, 2005) गया एवं

यह 12 अक्टूबर 2005 से लागू हुआ, हालांकि 9 राज्य सरकारें–कर्नाटक (2000), गोवा (1997), तमिलनाडु (1997), दिल्ली (2001), महाराष्ट्र (2002), आसाम (2002) मध्य प्रदेश (2003) एवं जम्मू एवं कश्मीर (2004),राजस्थान (2000) इसे पहले ही लागू कर चुकी थी। स्वीडन द्वारा इसकी शुरूआत 1776 में की गयी एवं हमने इसे पारित करने में बहुत ढुलबुल रवैया अपनाया जबकि नेपाल जैसे छोटे देश एवं दक्षिण अफ्रीका जैसे नये देश ने भी इससे सम्बन्धित फैसले लिए। पाकिस्तान ने भी 1997 में अध्यादेश प्रस्तुत कर कोशिश की (जो लेप्स हो जाने के कारण दोबारा पुर्नजीवित नहीं हो पाया)। सूचना का अधिकार वाक एवं अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता एवं जीवन के अधिकार के समूह से उभरकर सामने आया। समुचित विधि के अभाव में उच्चतम न्यायालय द्वारा सूचना के अधिकार को उक्त अधिकारों के अन्तर्गत ही माना गया था। सूचना का अधिकार, अन्य मूल अधिकार जैसे, पर्यावरण, स्वास्थ्य, भोजन एवं जीवनयापन का अधिकार पाने हेतु केन्द्रीय बिन्दु भी है। सबसे महत्वपूर्ण सीधा बदलाव जिसे सूचना का अधिकार प्रभावित करता है वह है प्रशासन प्रणाली। नागरिकता के नजरिए से सूचना का अधिकार नागरिकों के हाथ में सबसे मुख्य अस्त्र है।

उपरोक्त सभी कारणों से, स्वतन्त्रता के बाद नागरिक एवं राजनीतिक अधिकारों के क्षेत्र में, इस अधिनियम का पारित होना सबसे बड़ी जय का घोष करता है। अगर इसके उन संदर्भों को छोड़ दें, जिन्हें आधे–अधूरे होने के कारण व्यापक आलोचना का सामना करना पड़ा, किसी को इस बात में संदेह नहीं है कि यह अधिनियम गोपनीय एवं अपारदर्शी अंधेरे युग से खुलेपन एवं पारदर्शिता के उजाले की ओर कदम है। इसके द्वारा सूचना स्वातन्त्रय अधिनियम, 2002 (2003 का 5) निरसित कर दिया गया (धारा–31)।

सरकारी गोपनीयता अधिनियम, 1923 की धारा 5 किसी भी प्रकार की सरकारी गोपनीय सूचना के संवाद, देने या प्राप्त करने को अपराध घोषित करती है। सूचना का अधिकार अधियिम की धारा 22 के अनुसार, ''इस अधिनियम के उपबंध, शासकीय गोपनीयता अधिनियम, 1923 (1923 का 9) और तत्समय प्रवृत्त किसी विधि में या इस अधिनियम से अन्यथा किसी विधि के आधार पर प्रभाव रखने वाली किसी लिखत में, उससे असंगत किसी बात के हाते हुए भी, प्रभावी होंगे।'' अधिनियम की धारा 23 न्यायालयों की अधिकारिता का वर्णन करती है। केन्द्र सरकार द्वारा स्थापित आसूचना और सुरक्षा संगठनों (दूसरी अनुसूची में विर्निदिष्ट) पर इस अधिनियम के प्रावधान लागू नहीं होते हैं। सूचना का अधिकार प्रत्येक नागरिक को यह शक्ति प्रदान करता है कि वह सरकार से निम्न की मांग कर सकता है–

1. सरकार से कोई भी प्रश्न या सूचना
2. सरकारी निर्णय की प्रति
3. सरकारी दस्तावेज का निरीक्षण
4. सरकारी कार्य का निरीक्षण
5. सरकारी कार्य के पदार्थो के नमूने

वे सभी इकाइयाँ जो संविधान या अन्य कानून या किसी सरकारी अधिसूचना के अधीन गठित है या सरकार के द्वारा नियन्त्रित या वित्त पोषित गैर सरकारी संगठन भी इस अधिनियम के अधीन आते हैं।

भारत में भ्रष्टाचार रोकने और समाप्त करने की दिशा में यह एक प्रभावी कदम है। भ्रष्टाचार उजागर करने में तो यह बहुत कारगर सिद्ध हुआ है।

चार ऐसे मानदण्ड है जिनकी कसौटी पर सूचना के अधिकार अधिनियम के प्रभाव को जांचा जा सकता है–

1.अधिनियम के उपयोग या अनुपयोग का विस्तार अर्थात संगठनों/संस्थानों की प्रकृति जिन पर यह लागू होता है या नहीं लागू होता।

2.उन सूचनाों का फैलाव एवं प्रकार जिन तक पहुँच स्थापित की जा सकती है।

3.संस्थाओं की स्वतन्त्रता जो राज्य एवं नागरिकों के मध्य उन विवादों का निर्णय करेगी जो किसी विशेष सूचना के प्रकटीकरण से सम्बन्धित होंगे।

4.जानबूझकर या बुरी नीयत के कारण सूचना के प्रकटीकरण से इंकार के खिलाफ विधि के अन्तर्गत अधिशास्ति।

जैसा कि उच्चतम न्यायालय द्वारा व्याख्या की गई है, सूचना के अधिकार का प्रवाह संविधान के अनुच्छेद 19(1) से होता है। अतः इस अधिकार पर किसी भी प्रकार के प्रतिबंध को उन्हीं आधारो ंपर न्यायोचित ठहराया जा सकता है जो अनुच्छेद 19(2) में संविधान द्वारा अनुमत अपवाद है। यह अनुच्छेद ''यथोचित प्रतिबंधों'' की ही अनुमति देता है एवं केवल स्पष्ट रूप से बनाए गये आधारों के आधार पर ही अर्थात, भारत की संप्रभुता एवं अखण्डता, राज्य की सुरक्षा, विदेशी राज्यों के साथ मैत्रीपूर्ण संबंधों, लोक व्यवस्था, शालीनता या नैतिकता या न्यायालय के अवमान के सम्बन्ध में, मानहानि या किसी अपराध को उकसाने – इसमें से किसी के आधार पर ही प्रतिबंध आरोपित किए जा सकते हैं। प्रतिबंध संवैधानिक सीमा के अन्तर्गत ही लगाए गए हैं यह साबित करने का भार सरकार पर होता है।

उपरोक्त उल्लिखित सूचना का अधिकार अधिनियम एवं सभी राज्य विधियां अनेक अपवाद समेटे हुए है, जो सूचना के अधिकार पर प्रतिबंध आरोपित करती है। उनमे ंसे अनेक अनुच्छेद 19(2) के आधार पर न्यायोचित नहीं है अतः असंवैधानिक हैं। अतः बिल के अन्दर दी गई छूटों (Exemption) को कम करना चाहिए। संविधान द्वारा प्रदत्त अधिकारों को कोई समाप्त या प्रतिबंधित नहीं कर सकता। एक अधिनियम संविधान द्वारा प्रदत्त अधिकार का केवल संचालन कर सकता है, संविधान से परे जाकर उसे सीमित नहीं कर सकता। सूचना की स्वतन्त्रता के अन्तर्गत रक्षा एवं सुरक्षा सम्बन्धित संगठनों को स्पष्ट छूट दी गयी है एवं उन्हें प्रस्तावित कानून के दायरे से बाहर रखा गया है। यहां तक कि राज्यों को भी यह विकल्प प्रदान किया गया है कि वे अपने यहां सुरक्षा एवं पुलिस संगठनों को छूट की सूची में शामिल कर सकते हैं। यह एक विडंबना ही है कि जहां एक हाथ से यह बिल किसी व्यक्ति के जीवन एवं

स्वतन्त्रता से सम्बन्धित सूचनाओं को 48 घंटों में प्रदान करता है वहीं दूसरे हाथ से यह प्रस्तावित विधि के अन्तर्गत इन संगठनों को छूट प्रदान करता है जिनके ऊपर अक्सर, जीवन के अधिकार सहित, मानवाधिकारों एवं नागरिक स्वतन्त्रताओं के हनन में आरोप लगते रहे हैं। यह राजस्थान में जमीनी स्तर पर सार्वजनिक लेखा अभियान से सीखे गये जरूरी सबक का निषेध है।

एक महत्वपूर्ण चूक सूचना के अधिकार अधिनियम में यह है जो निजी निकायों जैसे कम्पनियों, एन0जी0ओ0 आदि को सार्वजनिक क्षेत्र से सम्बन्धित जानकारी देने के दायित्व से छूट प्रदान करती है। यहाँ इस पर ध्यान दिलाना प्रासंगिक होगा कि अनुच्छेद 19(1) की भाषा ''सभी नागरिकों को यह अधिकार होगा.....'' यह स्पष्ट करती है कि यह अधिकार सभी लोगों को प्राप्त है एवं इसकी सार्वभौमिक प्रयोज्यता है। इसके विपरीत अनुच्छेद 14 नकारात्मक अधिकार प्रदान करता है एवं यह अधिकार केवल राज्य के क्रियाकलापों के विरूद्ध उपलब्ध है, इसके अनुसार ''राज्य इससे इन्कार नहीं करेगा.....'' अतः सूचना का अधिकार की उपयोगिता केवल राज्य तक सीमित नहीं है वरन यह निजी क्षेत्र सहित सार्वभौमिक रूप से पूरे विश्व के खिलाफ अधिकार प्रदान करता है। इसे पिपुल्स यूनियन फॉर डेमोक्रेटिक राइट्स बनाम भारत संघ के वाद में स्पष्ट किया गया। अन्य संवैधानिक प्रावधान जो इस प्रकार के शब्दावली का प्रयोग करते हैं वे अनुच्छेद 17, 23 एवं 24 हैं। चूंकि सूचना के अधिकार का प्रवाह अनुच्छेद 19(1) से होता है जिसका क्षेत्र इतना विस्तृत है कि वह निजी क्षेत्र को भी शामिल करता है। अतः इसे शामिल करने वाला कानून अपने दायरे से निजी क्षेत्र को विधितः बाहर नहीं कर सकता एवं यह बात एक संवैधानिक अधिकार पर अनुचित अर्थात असंवैधानिक प्रतिबंध पर भी लागू होती है। सूचना का अधिकार अधिनियम संविधान की भावनाओं के अन्तर्गत नागरिक को सशक्त बनाता है। अतः इस बात को पूरा बल मिलता है कि इसके अन्तर्गत कम से कम छूटों को शामिल किया जाना चाहिए, उससे अधिक नहीं जो अनुच्छेद 19(2) के अधीन हैं एवं सार्वजनिक क्षेत्र में कार्य कर रहे सभी निजी संगठनों को इसके अन्तर्गत लाना चाहिए।

कम्पनियों, ट्रस्टों, सोसाइटीज, एवं संगठनों को इसमें शामिल करने हेतु दूसरा तर्क यह है, राज्य सार्वजनिक क्षेत्र से अधिक से अधिक हाथ खींच रहा है जो नागरिकों के जीवन को प्रभावित करता है एवं उन्हें निजी संगठनों को सौंप रहा है। अतः यह पूर्णतः तार्किक है कि निजी संगठनों को भी पारदर्शी बनाया जाए एवं वे भी लोगों के प्रति उत्तरदायी बनें। भोपाल गैस त्रासदी इस बात की याद दिलाती है कि निजी क्षेत्र को अपारदर्शी एवं लोगों के प्रति उत्तरदायी न बनाने का नतीजा कितनी बड़ी आपदा को जन्म दे सकता है।

अभ्यास प्रश्न

1.आर्थिक गतिविधियों में सम्मिलित हैंः–

क.व्यवसाय

ख.नियोजन/नौकरी

ग.व्यापार

घ.उपरोक्त सभी

2.एक विदेशी कम्पनी जो भारत में व्यापार के संचालन की योजना बना रही है, वह भारत मेंअपना व्यापार स्थापित कर सकती है–

क.एक भारतीय कम्पनी के रूप में

ख.एक विदेशी कम्पनी के रूप में

ग.उपरोक्त दोनों

घ.उपरोक्त में कोई नहीं

3.भारत में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश निम्न मार्ग/मार्गों द्वारा लाया जा सकता है–

क.स्वतः प्रवृत्त मार्ग द्वारा

ख.सरकारी अनुमति द्वारा

ग.उपरोक्त दोनों

घ.उपरोक्त में कोई नहीं

4.निम्न क्षेत्र में विदेशी निवेश अनुमत नहीं है–

क.रेलवे

ख.दूर संचार

ग.बुनियादी ढाँचा

घ.रक्षा

5.निम्न में कौन सा कथन सही नहीं है–

क.भारत में सड़कों का नेटवर्क विश्व में दूसरे सबसे बड़े पायदान पर है।

ख.भारत द्वारा अपने लगभग सभी उद्योगों के द्वार निजी कम्पनियों हेतु खोल दिये हैं।

ग.भारत में रेलवे बजट, राष्ट्रीय बजट से अलग प्रस्तुत किया जाता है।

घ.भारत सरकार द्वारा सभी क्षेत्रों में 100 प्रतिशत प्रत्यक्ष विदेशी निवेश की अनुमति प्रदान की गई है।

सत्य/असत्य कथन–

6.सूचना स्वातन्त्रय अधिनियम, 2002, फरवरी 2003 में लागू किया गया। सत्य/असत्य

7.सूचना का अधिकार सभी मूल अधिकारों में अधिक महत्वपूर्ण है। सत्य/असत्य

8.प्रशासन की पारदर्शिता एवं जवाबदेही सूचना के अधिकार के बिना तय नहीं की जा सकती। सत्य/असत्य

9.केन्द्रीय सूचना के अधिकार अधिनियम से पूर्व ही कई राज्यों में इससे सम्बन्धित विधि प्रवृत्त थी। सत्य/असत्य

10.सूचना के अधिकार अधिनियम, 2005 के द्वारा शासकीय गोपनीयता अधिनियम 1923 का निरसन किया गया।

3.8 सारांश

मानव गतिविधियां जो रूपयों या इससे सम्बन्धित वस्तुओं के आदान–प्रदान में लिप्त हैं आर्थिक गतिविधियां कहलाती हैं। इसके अन्तर्गत व्यवसाय, नियोजन अथवा नौकरी, व्यापार आदि आते हैं। पिछले दशक में भारत ने आर्थिक विकास प्राप्त करने एवं गरीबी घटाने की दशा में अनेक सुधार किए हैं। सबसे महत्वपूर्ण प्रगति सन् 1991 में प्राप्त की गई जब सरकारी बाधाएं समाप्त कर विदेशी निवेश हेतु द्वार खोले गए। एक विदेशी कम्पनी जो भारत में व्यापार के संचालन की योजना करती है। इसके पास एक भारतीय या विदेशी कम्पनी के रूप में स्थापना का विकल्प होता है। विदेशी कम्पनी भारत में अपने व्यापार का संचालन सम्पर्क कार्यालय/प्रतिनिधि कार्यालय के माध्यम से भी कर सकती है। इस प्रकार का संपर्क कार्यालय खोलने हेतु भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा अनुमति दी जाती है।

भारत में एक कम्पनी के नियन्त्रण या स्वामित्व के सम्बन्ध में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश हेतु दो मार्ग हैं– ''स्वतः प्रवृत्त मार्ग'' एवं ''सरकारी अनुमति'' के अन्तर्गत प्रक्रिया ।''स्वतः प्रवृत्त मार्ग'' के अन्तर्गत आने वाले क्षेत्रों/गतिविधियों में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश हेतु सरकार या भारतीय रिजर्व बैंक से पूर्व अनुमति की आवश्यकता नहीं है। निवेश सम्बन्धित गतिविधियां जो स्वतः प्रदत्त मार्ग (Automatic route) द्वारा आवृत नहीं है, उनके लिये सरकारी पूर्व अनुमोदन एवं विदेशी निवेश संबर्धन बोर्ड (FIPB) द्वारा मान्य होना आवश्यक है।

लघु उपक्रम वे होते हैं जिनमें संयत्र और मशीनरी में स्थाई परिसम्पत्ति में 10 लाख से अधिक निवेश नहीं होता है। लघु क्षेत्र उद्योग नीति के अन्तर्गत लघु क्षेत्र के उपक्रमों में विदेशी इक्विटी सहित दूसरी इकाईयों का शेयर 24 प्रतिशत तक ही अनुमत है।

भारत जैसी उभरती हुई अर्थव्यवस्था जिसमें एक अरब से अधिक लोग निवास करते हैं, बुनियादी ढाँचा, जो कि आवश्यक सेवाएं प्रदान करता है, विश्वसनीयता, आश्वासन, कम लागत उत्पादन एवं बाजार प्रतिस्पर्धा को भी दर्शाता है। ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना के तहत, बुनियादी ढांचे में निवेश राशि 34500 करोड़ डॉलर अनुमानित की गयी है।

सन् 1991 से भारत ने अर्थव्यवस्था को उदार बनाने वाले उपायों को अपनाया एवं विदेशी प्रत्यक्ष निवेश को प्रोत्साहित किया। भारतीय बुनियादी ढांचे में सुधार हेतु कई उपाय किये गये

हैं। भारत में केन्द्र सरकार एवं राज्य सरकारो के मध्य शक्तियों का बंटवारा किया गया है। कुछ क्षेत्र अनन्य रूप से केन्द्र सरकार के लिये आरक्षित हैं, जबकि कुछ क्षेत्र संयुक्त सरकार (केन्द्र एवं राज्य दोनों) के अधीन हैं। परन्तु संविधान के स्पष्ट एवं अनिवार्य उपबंधों के बावजूद शक्तियों को कोई बंटवारा नहीं है। कभी–कभी केन्द्र एवं राज्य सरकारों के मध्य नियामक संस्था से सम्बन्धित विवाद उत्पन्न हो जाते हैं। इसे देखते हुए निवेशकों को एक एकल, स्वतन्त्र नियामक का सहारा नहीं है। सन् 1991 से क्षेत्रीय आधार पर, केन्द्र या विभिन्न राज्य सरकारों के मंत्रालय द्वारा कुछ स्वतन्त्र नियामक ऐजेंसियों को स्थापित किया गया। यहाँ यह भी ध्यान देने वाली बात है कि केन्द्रीय सरकार के अन्तर्गत विभिन्न मन्त्रालय जो अलग–अलग क्षेत्रों का उत्तरदायित्व संभालते हैं वे जिस विस्तृत प्रशासनिक संस्थाओं के माध्यम से कार्य करते हैं वे नौकरशाही बाधाओं से भरपूर हैं। हालांकि बुनियादी ढांचे को आर्थिक विकास हेतु महत्वपूर्ण स्थान दिया जाता है, यह आधारिक एवं जटिल समस्याओं में जकड़ी हुई है। उदाहरणार्थ, बुनियादी ढांचे पर भारत सरकार की समिति के अनुसार इसकी कोई स्पष्ट परिभाषा नहीं निर्धारित की गयी है।

भारत के व्यापक समुद्र तट में 12 बड़े एवं 187 छोटे बंदरगाह स्थित हैं। बड़े बंदरगाह, जो लगभग कुल समुद्री यातयात का 74 प्रतिशत वहन करते हैं, द्वारा पिछले वित्तीय वर्ष के दौरान, 463 लाख टन से अधिक का माल वहन किया गया, एवं यह उससे पहले वर्ष की तुलना में 9.5 प्रतिशत अधिक था। भारत सरकार, केन्द्रीय प्राधिकरण के द्वारा कुछ प्रमुख बन्दरगाहों को देखती है जबकि अन्य बन्दरगाहों की देखरेख सम्बन्धित राज्य की सरकारों द्वारा जहाँ कि वे स्थित है, की जाती है। सरकार ने कुछ अवरोधों के साथ बन्दरगाहों के निजीकरण एवं विकास योजनाओं (FDI) को अनुमति प्रदान की है। हाल ही के विकास के साथ भारत सरकार पहली बार विस्तृत राष्ट्रीय समुद्री विकास नीति तैयार कर रही है जो निजी निवेश को बढ़ावा देगी, सेवाओं की गुणवत्ता को बढ़ाएगी एवं प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा देगी। इस नीति का उद्देश्य पत्तन परियोजनाओं में ऊँचे स्तर पर निवेश को प्रोत्साहित करना भी है ताकि मध्य एवं लम्बे समय के उद्देश्यों की पूर्ति की जा सके।

भारतीय रेल एकल प्रबंधन के तहत विश्व के बड़े रेल – तन्त्रों में से एक है एवं यह 63,000 किमी से भी अधिक के रेलवे ट्रैक का प्रबंधन करता है। भारत सरकार ने रेल की पटरियों को विस्तृत करने हेतु 5 बिलियन डॉलर के निवेश का निर्णय लिया है। साथ ही साथ भारतीय रेलवे विभाग ने इसकी कमियों को दूर करने एवं रेलवे की क्षमता को जरूरतों के हिसाब से बढ़ाने हेतु योजना तैयार की है। हाल ही में रेल भूमि विकास प्राधिकरण को सार्वजनिक निजी भागीदारी को प्रोत्साहित एवं उसकी निगरानी हेतु स्थापित किया गया है।

भारत में 3.3 मिलियन किमी का विशाल सड़कों का नेटवर्क है जो दुनिया में दूसरा सबसे बड़ा है। हालांकि भारत में सड़के 65 प्रतिशत माल ढुलाई एवं 80 प्रतिशत यात्री यातायात को वहन करती है लेकिन गुणवत्ता एवं सड़कों का विस्तार अपर्याप्त है। निजी क्षेत्र की भागीदारी इस

क्षेत्र में बढ़ रही है जो आमतौर पर निर्माण अनुबंध 'बनाओं–संचालन करो– हस्तांतरित करो' (BOT) माडल पर आधारित है जो लगभग कुल निवेश का 36 प्रतिशत है एवं प्रतिस्पर्धा द्वारा बोली या जिसमें सबसे कम कुल सरकारी निवेश शामिल हैं, पर आधारित है।

अतीत में भारत के विमानपत्तन का विकास एवं संचालन सरकार द्वारा किया जाता था जब तक कि उन्हें सन् 1994 में भारत के विमानपत्तन प्राधिकरण को हस्तान्तरित नहीं कर दिया गया। सन् 2003 में भारत का विमानपत्तन प्राधिकरण अधिनियम, 1994 में संशोधन कर विमानपत्तन के बुनियादी ढांचे के लगभग प्रत्येक क्षेत्र में निजी क्षेत्र को निवेश की सुविधा प्रदान कर दी गयी। भारत में 126 विमानपत्तन है जो भारत के विमानपत्तन प्राधिकार के स्वामित्व में संचालित किए जाते हें। इनमें से पांच विमानपत्तन प्रमुख महानगरों में हैं जो अधिकांश यातायात वहन करते है। हवाई किराये को अधिक वहन करने योग्य बनाने हेतु, भारत सरकार द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय पर्यटकों के समक्ष भारत की विशाल धरोहर एवं प्राकृतिक सुंदरता को भुनाने की योजना बनायी गयी है। इसी क्रम में अगले 5 वर्षो में विमानपत्तनों के विकास हेतु लगभग 9 बिलियन यू एस डालर के निवेश की जरूरत होगी।

सामान्य रूप से भारत के दूरसंचार क्षेत्र का संचालन भारत के दूरसंचार नियामक प्राधिकरण अधिनियम, 1997 के द्वारा किया जाता है। भारत का दूरसंचार नियामक प्राधिकरण (TRAI) ही वह संस्था है जो देश में दूरसंचार एवं इंटरनेट सेवाओं को नियन्त्रित करती है। अन्य क्षेत्रों के विपरीत दूरसंचार क्षेत्र में सार्वजनिक एवं निजी दोनों क्षेत्रों की कम्पनियों की संतुलित भागीदारी दिखाई देती है। भारत सरकार द्वारा दूर संचार उपकरणों के निर्माण में 100 प्रतिशत प्रत्यक्ष विदेशी निवेश एवं कई अन्य दूरसंचार सेवाओं हेतु 74 से 100 प्रतिशत तक प्रत्यक्ष विदेशी निवेश अनुमोदित किया गया है।

भारत के पास दुनिया की पांचवी सबसे बड़ी ऊर्जा उत्पादन क्षमता है। इस क्षेत्र को नियन्त्रित करने वाली प्रमुख विधियों में विद्युत अधिनियम, 2003 एवं राष्ट्रीय विद्युत नीति, 2005 शामिल है। सभी तकनीकी एवं आर्थिक मामलों में ऊर्जा मंत्रालय को विद्युत (आपूर्ति) अधिनियम, 1948 के अधीन गठित केन्द्रीय विद्युत प्राधिकरण सहायता देता है। भारत सरकार इस क्षेत्र में निजी निवेश आकर्षित करने हेतु उत्सुक है एवं ऊर्जा उत्पादन, वितरण एवं पारेषण में 100 प्रतिशत प्रत्यक्ष विदेशी निवेश का प्रस्ताव किया है।

ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोतों के महत्व को स्वीकारते हुए भारत सरकार द्वारा अलग नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय स्थापित किया गया है जो ग्रामीण ऊर्जा, सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा उत्पादन, व्यर्थ वस्तुओं से ऊर्जा का विकास एवं अन्य बातों के अलावा ग्रामीण विद्युतीकरण से सम्बन्धित नीतियों का विकास कर उन्हें अमल में लाता है। मंत्रालय का व्यापक उद्देश्य नये एवं अक्षय ऊर्जा स्रोतों का विकास कर देश में विद्युत की माँग की पूर्ति करना है जिसकी परम्परागत ऊर्जा स्रोतों से पूर्ति नहीं हो पाती है।

सम्पूर्ण विश्व के लोकतान्त्रिक देशों में सबसे अधिक उपेक्षित अधिकार सूचना का अधिकार है। महत्वपूर्ण अधिकार होने के बावजूद भारत सहित विश्व में अधिकांश देशों में इस अधिकार को अधिक सम्मान नहीं प्रदान किया गया है। पिछले कुछ दशकों में सूचना के अधिकार को अन्तर्राष्ट्रीय मानवाधिकार के रूप में मान्यता प्रदान की गई है एवं दुनिया भर के समाज अपारदर्शी एवं गुप्त प्रशासनिक प्रणाली से खुली एवं पारदर्शी प्रणाली की ओर बढ़ रहे हैं। राजस्थान में मजदूर किसान शक्ति संगठन, जो कि किसानों एवं ग्रामीण कामगारों की संस्था थी द्वारा जमीनी स्तर पर सूचना के अधिकार आंदोलन की शुरूआत की गई। इससे प्रेरणा पाकर बड़े स्तर पर सूचना के अधिकार की वकालत होने लगी एवं आमजन द्वारा इसकी माँग की जाने लगी। दिसम्बर 2002, में संसद द्वारा सूचना की स्वतन्त्रता अधिनियम, 2002 (Freedom of Information Act, 2002) पारित किया गया, परन्तु यह कभी लागू नहीं हो पाया क्योंकि इसके लागू होने की तिथि का सरकारी गजट में कोई उल्लेख नहीं था। तत्पश्चात 2005 में सूचना का अधिकार अधिनियम पारित किया (Right to information Act, 2005) गया एवं यह 12 अक्टूबर 2005 से लागू हुआ, हालांकि 9 राज्य सरकारें–कर्नाटक (2000), गोवा (1997), तमिलनाडु (1997), दिल्ली (2001), महाराष्ट्र (2002), आसाम (2002) मध्य प्रदेश (2003) एवं जम्मू एवं कश्मीर (2004),राजस्थान (2000) इसे पहले ही लागू कर चुकी थी। वे सभी इकाइयाँ जो संविधान या अन्य कानून या किसी सरकारी अधिसूचना के अधीन गठित है या सरकार के द्वारा नियन्त्रित या वित्त पोषित गैर सरकारी संगठन भी इस अधिनियम के अधीन आते हैं। जैसा कि उच्चतम न्यायालय द्वारा व्याख्या की गई है, सूचना के अधिकार का प्रवाह संविधान के अनुच्छेद 19(1) से होता है। अतः इस अधिकार पर किसी भी प्रकार के प्रतिबंध को उन्हीं आधारो ंपर न्यायोचित ठहराया जा सकता है जो अनुच्छेद 19(2) में संविधान द्वारा अनुमत अपवाद है। यह अनुच्छेद ''यथोचित प्रतिबंधों'' की ही अनुमति देता है एवं केवल स्पष्ट रूप से बनाए गये आधारों के आधार पर ही अर्थात, भारत की संप्रभुता एवं अखण्डता, राज्य की सुरक्षा, विदेशी राज्यों के साथ मैत्रीपूर्ण संबंधों, लोक व्यवस्था, शालीनता या नैतिकता या न्यायालय के अवमान के सम्बन्ध में, मानहानि या किसी अपराध को उकसाने – इसमें से किसी के आधार पर ही प्रतिबंध आरोपित किए जा सकते हैं। प्रतिबंध संवैधानिक सीमा के अन्तर्गत ही लगाए गए हैं यह साबित करने का भार सरकार पर होता है।

सूचना का अधिकार अधिनियम एवं सभी राज्य विधियां अनेक अपवाद समेटे हुए है, जो सूचना के अधिकार पर प्रतिबंध आरोपित करती है। उनमे ंसे अनेक अनुच्छेद 19(2) के आधार पर न्यायोचित नहीं है अतः असंवैधानिक हैं। एक महत्वपूर्ण चूक सूचना के अधिकार अधिनियम में यह है जो निजी निकायों जैसे कम्पनियों, एन0जी0ओ0 आदि को सार्वजनिक क्षेत्र से सम्बन्धित जानकारी देने के दायित्व से छूट प्रदान करती है।चूंकि सूचना के अधिकार का प्रवाह अनुच्छेद

19(1) से होता है जिसका क्षेत्र इतना विस्तृत है कि वह निजी क्षेत्र को भी शामिल करता है। अतः इसे शामिल करने वाला कानून अपने दायरे से निजी क्षेत्र को विधितः बाहर नहीं कर सकता एवं राज्य भी सार्वजनिक क्षेत्र से अधिक से अधिक हाथ खींच रहा है जो नागरिकों के जीवन को प्रभावित करता है एवं उन्हें निजी संगठनों को सौंप रहा है। अतः यह पूर्णतः तार्किक है कि निजी संगठनों को भी पारदर्शी बनाया जाए एवं वे भी लोगों के प्रति उत्तरदायी बनें।

3.9 महत्वपूर्ण शब्दावली

प्रसंविदा –दो राष्ट्रों के मध्य हस्ताक्षरित लिखित समझौता।

नवीकरणीय – जिसका नवीनकरण सम्भव हो/स्वाभाविक रूप से पुनः पैदा होने वाला।

ग्रीनफील्ड – इस शब्द की उत्पत्ति सॉफ्टवेयर अभियान्त्रिकी से हुई है जिसका अर्थ है एक ऐसी परियोजना जो पूर्व में किए गये कार्यों द्वारा थोपे गये अवरोधों से मुक्त हो।

विशेष आर्थिक क्षेत्र – यह एक भौगोलिक क्षेत्र होता है जिसके अन्तर्गत आर्थिक एवं अन्य विधियां होती हैं जो देश के विधियों से अधिक खुले रूप में बाजारोन्मुख होती है। देश में लागू विधियों को इस क्षेत्र में निलंबित किया जा सकता है।

3.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर :–

1. (घ) 2. (ग) 3.(ग) 4. (ग) 5. (घ)

6. असत्य 7. सत्य8. सत्य 9. सत्य 10. असत्य

3.11 संदर्भ ग्रन्थ

1http//www.rtigateway.org.in/Documents/References/English/Report_pdf

2http://www.rtigateway.org.in/Documents/Publicaons/Guide%20(20RT)20for%20Media.pdf

3- http://rti.gov.in/rti-actinhindi.pdf

4http://hi.wikipedia.org/wiki/

3.12सहायक/उपयोगी सामग्री

सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005

3.13निबंधात्मक प्रश्न

1.'आर्थिक गतिविधियां'' शब्दावली को स्पष्ट कीजिए।

2.एक विदेशी निवेशक, संयुक्त उद्यम के साथ भारत में एक कंपनी रूप में कैसे निवेश कर सकता है?

3.वे कौन से क्षेत्र हैं, जिनमें प्रत्यक्ष विदेशी निवेश अधिकतम हुआ है?

4.क्या आप समझते हैं कि सूचना का अधिकार अधिनियम प्रशासन में पारदर्शिता एवं उत्तरदायित्व की भावना विकसित करने में सक्षम है?

LL.M. PART- I
PAPER –Legal Regulation of Economic Enterprises

ब्लाक– 1.सरकारी विनियमन का औचित्य **(The Rationale of Government regulation)**

ईकाई–4. प्रतिस्पर्धा में निष्पक्षता; उपभोक्तावाद पर जोर **(Fairness in Competition; Emphasis on Consumerism)**

इकाई संरचना

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 प्रतिस्पर्धा नीति

4.3.1 प्रतिस्पर्धा नीति के मुख्य उद्देश्य

4.3.2प्रतिस्पर्धा नीति के तत्व

4.4प्रतिस्पर्धा अधिनियम, 2002

4.4.1प्रतिस्पर्धा विरोधी समझौतों की जांच

4.4.2प्रभावी स्थिति के दुरूपयोग की जांच

4.4.3युग्म विनियमन

4.4.4 प्रतिस्पर्धा वकालत को संज्ञान में लेना, सार्वजनिक जागरूकता बनाने और प्रतिस्पर्धा मुद्दे पर प्रशिक्षण देना।

4.5उपभोक्तावाद

4.5.1उद्भव

4.5.2अवलोकन

4.5.3प्रतिकारक तर्क

4.6सारांश

4.7महत्वपूर्ण शब्दावली

4.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

4.9संदर्भ ग्रन्थ

4.10सहायक / उपयोगी सामग्री

4.11निबन्धात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

प्रतिस्पर्धा बाजार की स्थिति की सन्दर्भित करती है, जिसमें विक्रेता खरीददारी से व्यापारिक उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु स्वतंत्र रूप से लाभ, विक्री या शेयर बाजार इनको प्राप्त करने का प्रयास करते हैं। दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि प्रतिस्पर्धा द्वारा व्यापारिक उद्यमों द्वारा बाजार में प्रभुत्व के लिए लक्ष्य प्राप्त करने का प्रयोजन से कार्य करना है। यह एक बुनियाद है, जिस पर बाजार प्रणाली कार्य करती है। बाजार की अर्थव्यवस्था में प्रभावी ढंग से कार्य करने हेतु निष्पक्ष एवं स्वतंत्र प्रतिस्पर्धा की आवश्यकता होती है। इस तरह प्रतिस्पर्धा अर्थव्यवस्था में अधिकतम संसाधनों का प्रयोग कर नवाचार उत्पादकता को बढ़ावा देती है और उपभोक्ता हितों की रक्षा की गारन्टी देती है। यह गुणवत्ता में सुधार कर लागत को कम कर विकास को गति देकर राजनैतिक एवं आर्थिक लोकतंत्र को बरकरार रखता है।

4.2 उद्देश्य

प्रस्तुत ईकाई को पढ़ने के पश्चात आप समझ सकेंगे–

- प्रतिस्पर्धा नीति
- प्रतिस्पर्धा अधिनियम, 2002
- उपभोक्तावाद
- उपभोक्तावाद का विरोध

4.3 प्रतिस्पर्धा नीति

प्रतिस्पर्धा नीति बाजार में निष्पक्ष प्रतिस्पर्धा सुनिश्चित करने के लिए सरकारी नीति को सन्दर्भित करती है, जो उन कारकों और बलों को हटाने या रोकने का कार्य करती है जो विकृति पैदा करते हैं। ये वे उपाय हैं जो उद्योगों की संरचना एवं व्यवहार को सीधे प्रभावित करते हैं। इस तरह की नीति द्वारा प्रतिस्पर्धा परिणामों से बाजारोन्मुख आर्थिक साधन सुनिश्चित करने की आवश्यकता पड़ती है। यह स्वस्थ व्यापारिक वातावरण के निर्माण को बढ़ावा देता है, जो स्थिर एवं विस्तृत क्षमता को सुधारता है एवं अधिकतम उपभोक्ता एवं उत्पादनकर्ता के कल्याण को सुनिश्चित करता है।

4.3.1 प्रतिस्पर्धा नीति के मुख्य उद्देश्य

- क्रियाशील प्रतिस्पर्धा माहौल का निर्माण एवं बढ़ावा देना और अर्थव्यवस्था में संसाधनों के कुशल आवंटन को सुनिश्चित करना।
- बाजार की अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देना और उत्पादक एवं उपभोक्ता दोनों के अधिकतम कल्याण को सुनिश्चित करना।
- आर्थिक शक्ति के केन्द्रीयकरण पर नियन्त्रण और नवीनता को प्रोत्साहित करना।
- छोटे और मध्यम आकार के उद्यमों का समर्थन करने के लिए क्षेत्रीय एकीकरण को
- प्रोत्साहित करना।
- विश्व स्तर पर प्रतिस्पर्धी कम्पनियों में निवेश को बढ़ावा देना और तकनीकी क्षमताओं में
- वृद्धि करना।

4.3.2प्रतिस्पर्धा नीति के तत्व

<u>प्रतिस्पर्धा नीति के दो मुख्य तत्व इस प्रकार हैं:–</u>

1.स्थानीय और राष्ट्रीय बाजारों में प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा देने की नीति; इसमें सम्मिलित हैं– उदारीकृत व्यापारिक नीति, विदेशी प्रत्यक्ष निवेश (थ्क्प्) नीति, बौद्धिक सम्पदा अधिकारों के

संरक्षण के लिए नीतियां, वित्तीय और पूंजी बाजार की ढील के साथ–साथ उदार राजकोषीय और विनिमय दर नीति। अन्य आर्थिक नीतियों के साथ अंतर फलक संसाधनों के आवंटन के बारे में अधिक से अधिक दक्षता के साथ निष्पक्ष प्रतिस्पर्धा को प्रोत्साहित करने में मदद मिली है।

2.कृत्रिम प्रवेश बाधाओं एवं प्रतिस्पर्धा विरोधी व्यापारिक प्रथाओं/गतिविधियों को रोकने के लिए प्रतिस्पर्धा कानून बनाया जाए। एक ऐसा पूरक कानून जिसके तहत बाजार में प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा देने के प्रयासों में सुविधा हो।

1.4.प्रतिस्पर्धा अधिनियम, 2002

प्रतिस्पर्धा नीति के प्रावधानों के अनुसार भारत सरकार द्वारा प्रतिस्पर्धा अधिनियम, 2002 पारित किया गया। अधिनियम पारित कने का उद्देश्य इसके माध्यम से प्रतिस्पर्धी विरोधी प्रथाओं को निषेध कर प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा देना, एक उद्योग का बाजार पर हावी होने एवं विलय एवं अधिग्रहण द्वारा इस प्रकार की प्रवृत्ति पर नियंत्रण है। एकाधिकार और प्रतिबंधित व्यापार (MRTP) अधिनियम, 1969 को समाप्त किया गया और तदनुसार एकाधिकार और प्रतिबंधात्मक व्यापार व्यवहार आयोग, जिसे एम आर टी पी के प्रावधानों के अनुसार पूंछतांछ के लिए स्थापित किया गया था, को भी समाप्त कर दिया गया। इसके अलावा उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण के युग में यह महसूस किया गया कि मौजूदा एम आर टी पी अधिनियम में बदलाव की जरूरत है एवं एकाधिकार को समाप्त कर प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा देने की आवश्यकता महसूस की गयी। नया प्रतिस्पर्धा कानून– प्रतिस्पर्धा अधिनियम, 2002 प्रतिस्पर्धा को आधुनिक ढांचा प्रदान करता है। इस अधिनियम के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

1.प्रतिस्पर्धा पर प्रतिकूल प्रभाव व प्रथाओं को रोकने के लिए आयोग की स्थापना;

2.भारत के बाजारों में प्रतिस्पर्धा को प्रोत्साहित करना;

3.उपभोक्ता के हितों की रक्षा;

4.भारत के बाजार में प्रतिभागियों द्वारा किये गये व्यापार की स्वतन्त्रता निश्चित करना।

प्रतिस्पर्धा अधिनियम 2002 में प्रतिस्पर्धा (संशोधन) अधिनियम 2007 द्वारा संशोधन किया गया। प्रतिस्पर्धा अधिनियम के प्रावधानों को लागू करने के लिए भारत के प्रतिस्पर्धा आयोग (ब्ब्प्), एक स्वायत्त निकाय की विनियामक और अर्द्धन्यायिक शक्तियों के साथ स्थापना की गई। आयोग के क्षेत्राधिकार में निम्नलिखित शामिल हैंः–

4.4.1 प्रतिस्पर्धा विरोधी समझौतों की जांच

गैर– प्रतिस्पर्धा समझौतों को प्रतिबंधित किया गया। अधिनियम के अधीन ऐसे सभी समझौते शून्यकरणीय घोषित किये गये जो कि उद्यमियों के संघ द्वारा उत्पादन, आपूर्ति, वितरण, अधिग्रहण या माल के नियन्त्रण या सेवाओं को सीमित करते हों।

अधिनियम द्वारा अर्थव्यवस्था में क्षैतिज और उर्ध्वाधर समझौतों को, जो प्रतिस्पर्धा को सीमित करती है, चिन्हित किया गया। क्षैतिज समझौतों में उन उद्यमों के उत्पादन, सेवाऐं आदि शामिल हैं जो किसी कपटपूर्ण ढंग से एक ही स्तर पर किए गये हैंः–

1.प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से खरीद या विक्री मूल्य निर्धारित करते हैं।

2.उत्पादन, आपूर्ति बाजार, तकनीकी विकास, निवेश या सेवाओं के प्रावधान की सीमा निर्धारित करना या नियन्त्रण करना।

3.शेयर बाजार या बाजार के भौगोलिग क्षेत्र या वस्तुओं या सेवाओं के प्रकार या बाजार में ग्राहकों की संख्या आवंटन के माध्यम से या किसी अन्य समान तरीके से क्षेत्र या सेवाओं के प्रावधान।

4.प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से बोली हेराफेरी या कपटपूर्ण बोली प्रक्रिया परिणाम।

उर्ध्वाधर समझौते जो उद्यमों के उत्पादन वितरण आदि चरणों के मध्य किये गये निम्नलिखित समझौते शामिल हैं :–

1.व्यवस्था में रोक लगाना।

2.विशेष आपूर्ति समझौता।

3.विशेष वितरण समझौता।

4.सौदा करने से इंकार।

5.पुनः विक्रय कीमत रखरखाव।

समझौते का प्रतिस्पर्धा पर प्रभावी प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है, यह आयोग निर्धारित करेगा और निम्नलिखित कारकों पर विचार करेगा–

1.मौजूदा प्रतिभागियों या नये आगन्तुकों के लिए बाधाओं का निर्माण या उपस्थित प्रतिस्पर्धा को बाजार से दूर करना।

2.बाजार में प्रवेश निरोधक द्वारा प्रतिस्पर्धा प्रतिबंधित करना।

3.उपभोक्ताों को लाभ प्रदान करना।

4.उत्पादन या वस्तु वितरण या सेवा प्रावधान में सुधार।

5.तकनीकी, वैज्ञानिक और आर्थिक विकास को बढ़ावा देना।

4.4.2 प्रभावी स्थिति के दुरूपोग की जांच :–

अधिनियम के तहत किसी भी उद्यम द्वारा अपनी प्रभावी स्थिति के दुरूपयोग पर प्रतिबंध लगाया जा सकता है। प्रभावी (कवउपदंदज) स्थिति का अर्थ है, भारत के प्रासंगिक बाजार में एक उद्योग का मजबूत स्थिति में होना; प्रासंगिक बाजार में प्रचलित प्रतिस्पर्धी बलों से अलग स्वतन्त्र रूप से काम या प्रासंगिक बाजार में अपने प्रतिस्पर्धी या उपभोक्ता को अपने पक्ष में करना।

अधिनियम के अनुसार एक उद्यमी द्वारा प्रभुत्व के दुरूपयोग के अन्तर्गत निम्नलिखित कार्य सम्मिलित होंगे–

1.सीधे या परोक्ष रूप से माल और सेवाओं को खरीदने या विक्री में अनुचित या भेदभाव पूर्ण शर्त।

2.उपभोक्ता के हितों के प्रतिकूल माल या सेवाओं से सम्बन्धित तकनीकी या वैज्ञानिक विकास को सीमित करना।

3.इस प्रकार के कार्यों में रत होना जो बाजार को हानि पहुँचाए।

4.एक प्रासंगिक बाजार में प्रभाव का उपयोग दूसरे बाजार में प्रवेश हेतु करना।

आयोग उद्यमों की प्रभावी स्थिति का निर्धारण करते समय निम्नलिखित कारकों पर विचार करेगा –

1.उद्यमों के संसाधन आकार और शेयर बाजार;

2.प्रतिस्पर्धियों के महत्व और आकार;

3.प्रतिस्पर्धियों पर वाणिज्यिक लाभ सहित उद्यम की आर्थिक शक्ति;

4.उद्यमों की उपभोक्ता पर निर्भरता;

5.सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम या सरकारी कम्पनी होने के कारण या किसी विधि के परिणामस्वरूप एकाधिकार या प्रभावी स्थिति अर्जित करना;

6.प्रवेश की उच्च पूँजी लागत, नियामक बाधाएँ, तकनीकी प्रवेश बाधाएं, विपणन बाधाएं आदि प्रवेश बाधाएं;

7.खरीद शक्ति–काउन्टर बेलिंग;

8.बाजार संरचना और बाजार का आकार।

9.उद्योग का उर्ध्वाधर एकीकरण या ऐसे उद्यमों का विक्रय या सेवा जाल;

10.आयोग किसी भी प्रासंगिक कारक पर जांच हेतु विचार कर सकता है।

4.4.3 युग्म विनियमन

अधिनियम विभिन्न व्यापार संयोजनों को नियंत्रित करता है। उनके गठन को प्रतिबंधित नहीं करता। अधिनियम के तहत प्रासंगिक बाजार में कोई व्यक्ति या उद्यम अधिग्रहण, विलय या समामेलन के रूप में ऐसा संयोजन नहीं कर सकता जो एक सराहनीय प्रतिस्पर्धा पर प्रतिकूल प्रभाव डालेगा, इस तरह का संयोजन शून्य होगा। लेकिन सभी संयोजन जांच हेतु तब तक नहीं बुलाए जाते जब तक संयोजन के परिणामस्वरूप सम्पत्ति या भारतीय स्पर्धा आयोग द्वारा निर्दिष्ट सीमा से अधिक है।

एक संयोजन को विनियमित करते समय आयोग निम्नलिखित कारकों पर विचार करेगा–

1.आयात के माध्यम से वास्तविक और संभावित प्रतिस्पर्धा;

2.बाजार में प्रवेश रोधकता का स्तर;

3.बाजार में संयोजन का स्तर;

4.बाजार में प्रतिकारी शक्ति का स्तर;

5.संयोजन संभावना के लिए अधिकतम हद तक कीमत या लाभ की वृद्धि;

6.बाजार में प्रतिस्पर्धा विस्तार की संभावना बनाए रखना।

7.संयोजन उपलब्धता के विकल्प, पहले और बाद में;

8.संयोजन वाले उद्यमों (चंतजपमे वि बवदजतंबज) का व्यक्तिगत एवं संयोजित बाजार शेयर;

9.संयोजन के पश्चात बाजार प्रतिस्पर्धा या प्रभावी प्रतिस्पर्धी को समाप्त करने की संभावना;

10.बाजार में उर्ध्व एककरण की प्रकृति एवं सीमा;

11.नवाचार की सीमा और प्रकृति;

12.यदि संयोजन के लाभ, संयोजन के प्रतिकूल प्रभाव में जाए;

इस प्रकार इस अधिनियम का उद्देश्य संयोजन को समाप्त करना नहीं वरना इसके हानिकारक प्रभाव को समाप्त करना है।

4.4.4 प्रतिस्पर्धा वकालत को संज्ञान में लेना, सार्वजनिक जागरूकता बनाने और प्रतिस्पर्धा के मुद्दे पर प्रशिक्षण देना

भारत का प्रतिस्पर्धा आयोग प्रतिस्पर्धा के मुद्दों के बारे में जागरूकता निर्माण और प्रतिस्पर्धा वकालत को निम्नलिखित तरीकों से प्रोत्साहित करता है–

1.आयोग भारत और विदेशों में प्रतिस्पर्धा के मुद्दों के बारे में प्रतिस्पर्धा वकालत और जागरूकता के निर्माण से संबंधित ऐसे कार्यक्रमों एवं गतिविधियों को बढ़ावा देगा जो आयोग द्वारा उपयुक्त माना जाएगा।

2.उक्त एजेण्डे को आगे ले जाने हेतु आयोग वकालत सलाहकार समिति का गठन कर निरंतर आधार पर विशेषज्ञों एवं हितधारकों की भागीदारी एवं परामर्श प्राप्त करेगा।

3.आयोग वकालत साहित्य के विकास एवं प्रचार हेतु दृश्य व संवाद एवं अन्य सामग्री का प्रयोग करेगा, ताकि प्रतिस्पर्धा मुद्दे पर प्रतिस्पर्धा वकालत एवं जागरूकता निर्माण को बढ़ावा मिल

सके। ऐसा करने के लिए यदि आयोग आवश्यक समझते तो व्यवसायिक सेवाओं की आउटसोर्सिंग भी कर सकता है।

4.आयोग व्यापक उपयोग हेतु दोनेां प्रिन्ट मीडिया और इलेक्ट्रोनिक का प्रयोग कर सकता है। इस प्रयोजन हेतु अन्य बातों के साथ–साथ प्रेस नोट जारी कर व्यवस्था और लेखों के प्रकाशन प्रसार/समाचार, विज्ञापन और प्रतिस्पर्धा मुद्दों पर अन्य प्रचार गतिविधियों को शुरू करने में मीडिया को शामिल कर सकता है, जैसा कि वह उचित समझे।

5.आयोग हित धारक संगठनों, शैक्षिक समुदाय, क्षेत्रीय नियामकों, केन्द्र एवं राज्य सरकारों, नागरिक समाज ओर प्रतिस्पर्धा से सम्बन्धित अन्य संगठनों के साथ मिलकर प्रतिस्पर्धा पर वाद–विवाद को बढ़ावा देने एवं एक बेहतर आर्थिक निर्णय लेने को बढ़ावा देना।

6.इस प्रयोजन हेतु आयोग अध्ययन और बाजार अनुसंधान का कार्य कर सकता है।

7.आयोग शैक्षिक और व्यवसायिक संस्थानेां और उनके द्वारा निर्धारित पाठ्यक्रम में प्रतिस्पर्धा कानून और नीतियों को शामिल करने के लिए प्रोत्साहित कर सकता है।

आयोग को मजबूत बनाने और उसकी क्षमता बढ़ाने हेतु भारतीय प्रतिस्पर्धा आयोग विभिन्न क्षेत्रों में प्रतिष्ठित व्यक्तियों के साथ, एक प्रतिस्पर्धा फोरम की स्थापना करेगा, जो कि विधि, अर्थशास्त्र, वित, लोक प्रशासन, प्रबंधन और ऐसे अन्य क्षेत्रों के विशेषज्ञ होंगे। वास्तव में उपभोक्तावाद एक विचारधारा और अवधारणा के रूप में वाणिज्यिक साहित्य में सम्मिलित हो गया है। सामाजिक ताकत के रूप में इसका संक्षिप्त इतिहास है। संयुक्त राज्य अमेरिका में पहली बार 1930 में व्यापार कदाचार के विरूद्ध खुला असंतोष दिखाई दिया और 1940 तक यह प्रवृत्ति जारी रही परन्तु धीरे धीरे 1950–60 के प्रारम्भ में इसमें गिरावट आई।

उपभोक्ता अधिकारों से सम्बन्धित हित, शक्तिशाली ऑटोमोबाइल उद्योग के विरोध में राल्फ नाडर के नाम साथ अचानक उभरा। आज के समय में 1970 की कुछ घटनाओं के परिणामस्वरूप उपभोक्ता उचित दामों पर गुणवत्ता उत्पाद खरीदने वाला उपभोक्ता मात्र नहीं है, बल्कि प्रोद्योगिकी मामलों पर प्रबंधन के निर्णयों के खिलाफ उद्देश्यपूर्ण ताकत है जो सुरक्षित पर्यावरण से सम्बन्धित मामलों से भी सरोकार रखता है।

भारतीय उपभोक्ता जो न तो संगठित है और न ही कीमत और गुणवत्ता के दोनों मोर्चों पर लड़ने के लिए उसके पास संसाधन और क्षमता है। सवाल यह है कि इसका उपचार क्या है? उपभोक्ता के हितों की रक्षा के मामले में सरकार की मुख्य भूमिका सही कानूनों को बनाने और उन्हें प्रभावी ढंग से लागू करने की है। समय–समय पर सरकार द्वारा उपभोक्ता के हितों के लिए कदम उठाए गये हैं। उपभोक्ता को संरक्षण देने के अतिरिक्त मिलावटी और घटिया वस्तुओं के खिलाफ कार्यवाही करने हेतु विभिन्न कानून बनाए गए जैसे भारतीय दण्ड संहिता, 1886; भारतीय संविदा अधिनियम 1872; दीवानी प्रक्रिया संहिता, 1908, वस्तु बिक्री अधिनियम 1930, तौल और माप अधिनियम 1976 और मोटर वाहन अधिनियम 1988 आदि। लेकिन तथ्य यह है कि इसके बावजूद उपभोक्ता संरक्षण के क्षेत्र में बहुत ही कम प्राप्त किया जा सका है। उपभोक्ता के हितों को बेहतर सुरक्षा प्रदान करने हेतु संसद द्वारा उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 अधिनियमित किया गया।

अन्य बातों के साथ संसद द्वारा अधिनियमित उक्त अधिनियम से उपभोक्ता हितों को बढ़ावा एवं उनकी रक्षा करने हेतु निम्न प्रावधान भी किये गये हैं:–

1.ऐसे उत्पाद जो जीवन और सम्पत्ति के लिए खरतनाक हैं, की बिक्री के विरूद्ध संरक्षण का अधिकार।

2.अनुचित व्यापारिक क्रियाविधियों के खिलाफ उपभोक्ता संरक्षण हेतु सही गुणवत्ता, मात्रा, शक्ति, शुद्धता, मानक और कीमतों के बारे में सूचना का अधिकार।

3.जहां तक संभव हो प्रतिस्पर्धी कीमतों पर माल प्राप्त करने के आश्वासन का अधिकार।

4.उपभोक्ता हितों को सही और उचित मंचों पर सुनने का अधिकार एवं उपभोक्ता हितों को पूरी तबज्जो दिए जाने का आश्वासन।

5.अनुचित व्यापारिक व्यवहार या कदाचार एवं उपभोक्ता उत्पीड़न के विरूद्ध सुनवाई का अधिकार।

6.उपभोक्ता शिक्षा का अधिकार, जैसा कि अधिनियम की प्रस्तावना में उद्देश्य बताया गया है कि ''उपभोक्ताओं के हितों की बेहतर सुरक्षा के लिए''। इसका एक प्रमुख उद्देश्य उपभोक्ता विवादों को शीघ्र एवं सरल निवारण प्रदान करने और अर्द्धन्यायिक मशीनरी को जिला, राज्य

और केन्द्र स्तर पर स्थापित करना है। इन अर्द्धन्यायिक मशीनरी को प्राकृतिक न्याय के सिद्धान्त का पालन करना आवश्यक है एवं उन्हें उपभोक्तओं को राहत देने के लिए विशेष उपचार हेतु सशक्त किया जाएगा एवं उपभोक्ताओं को सही प्रतिकर प्रदान किया जाएगा। अधिनियम का मुख्य उद्देश्य वाणिज्यिक दृष्टिकोण से वस्तुओं के खरीदार एवं विस्तृत दृष्टिकोण के अन्तर्गत सेवा प्राप्त करने वाले (उपभोक्ता) के हितों का संरक्षण करना है।

4.5 उपभोक्तावाद

उपभोक्तावाद एक सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था है। जो कि अधिक से अधिक मात्रा में माल और सेवाओं की खरीद को प्रोत्साहित करती है। यह शब्द उपभोग की आलोचना के साथ जुड़ा हुआ है, इसकी शुरूआत थ्रोस्टन वेवलेन के साथ हुई। वेवलैन की समीक्षा का विषय, नव आकस्मिक बीसवीं सदी के आगमन पर उत्पन्न होने वाले मध्यम वर्ग था जो भूमण्डलीयकरण प्रक्रिया के माध्यम से बीसवीं सदी के अन्त तक पूरी तरह उपभोग हेतु तत्पर हो गया है। कभी कभी ''उपभोक्तावाद'' उपभोक्ता आन्दोलन, उपभोक्ता संरक्षण या उपभोक्ता सक्रियता के नाम से भी जाना जाता हैं। इसके अन्तर्गत ईमानदारी से पैकिंग और विज्ञापन, उत्पाद की विश्वसनीयता और सुरक्षा मानकों में सुधार के बारे में उपभोक्ताओं को सूचित किया जाता है। इस तरह यह एक आन्दोलन या नीतियों का समूह है जिसे उत्पादों, सेवाओं, विधियों और निर्माताओं, विक्रेताओं, खरीददारों और विज्ञापन दाताओं के मानकों को विनियमित करने के उद्देश्य से स्थापित किया गया है।

अर्थशास्त्र में उपभोक्तवाद खपत पर जोर देने के लिए आर्थिक नीतियों को संदर्भित करता है। सार रूप में यह इस विश्वास पर आधारित है कि उपभोक्ताओं को उत्पाद के चुनाव करने की स्वतन्त्रता से समाज की आर्थिक संरचना बननी चाहिए।

सन् 1915 में पहली बाद उपभोक्तावाद शब्द का प्रयोग ''उपभोक्ता के अधिकारों और हितों की वकालत'' करने के लए आक्सफोर्ड शब्दकोष में किया गया।

4.5.1 उद्भव

पश्चिमी दुनिया के साथ उपभोक्तावाद का कमजोर संबंध है, लेकिन वास्तव में यह अंतर्राष्ट्रीय घटना है। लोगों द्वारा अपनी बुनियादी जरूरतों के लिए माल व वस्तु क्रय करना उतना ही पुराना है, जितनी प्रथम सभ्यता (जैसे प्राचीन मिश्र, बेबीलोन और प्राचीन रोम)।

औद्योगिक क्रान्ति के ठीक पहले उपभोक्तावाद में एक महत्वपूर्ण मोड़ आया। 19वीं सदी में पूंजीवादी विकास और औद्योगिक क्रान्ति मूलतः पूंजी–वस्तु क्षेत्र और औद्योगिक बुनियादी ढांचे पर केन्द्रित थी। उदाहरणार्थ, इस्पात, खनन, तेल, परिवहन नेटवर्क, संचार नेटवर्क, औद्योगिक शहरों, वित्तीय केन्द्रों आदि। उस समय कृषि वस्तुएं, आवश्यक उपभोक्ता वस्तुएं और वाणिज्यिक गतिविधियां एक हद तक विकसित तो थी परन्तु अन्य क्षेत्रों की तरह नहीं, मजदूर वर्ग के लोग प्रतिदिन 16 घण्टे, प्रतिसप्ताह 6 दिन कम मजदूरी में कार्य किया करते थे। थोड़ा समय/पैसे उपभोक्ता गतिविधियों के लिए छोड़ा गया था। इसके अलावा पूंजीगत माल एवं बुनियादी ढांचा काफी टिकाऊ था जिसका उपयोग लम्बे समय तक होता था। हेनरी फोर्ड और अन्य उद्योगों के नेता समझ गये कि बड़े पैमाने पर उत्पादन हेतु बड़े पैमाने पर उपभोग भी चाहिए। इस योजना का अवलोकन करने के बाद फ्रेडरिक विनस्लों टेलर ने इस वैज्ञानिक सिद्धान्त को उन औद्योगिक संगठन पंक्ति में लागू किया। इससे उत्पादित वस्तुओं की लागत में अविश्वसनीय कमी आई। विकासशील पूंजीवाद के विपरीत उपभोक्तवाद लम्बे समय तक अधर में पड़ा रहा। सन् 1932 में अर्नेस्ट एतमों कैलींस के साथी विज्ञापन अधिकारियों ने कहा कि ''उपभोक्ता अभियान्त्रिकी को यह देखना चाहिए कि किन वस्तुओं का, जिनका उपभोग पहले किया जाता है उनका प्रयोग अब कम हो गया है।'' जबकि 1929 में घरेलू विचारक क्रिस्टीन फ्रेडरिक ने अनुभव किया कि 'यह निचले जीवन स्तर से स्वतन्त्र रूप से जीवन जीने के गतिरोध तोड़ने का माध्यम है एवं वह माध्यम है जो रचनात्मक बर्बादी का रास्ता है।''

"आकर्षक उपभोग" की पुरानी शब्दावली एवं सिद्वांत की उत्पत्ति 20वीं सदी में समाजशास्त्री और अर्थशास्त्री थ्रोस्टन बेवलैन के लेखों द्वारा हुई। यह शब्दावली आर्थिक व्यवहार के स्पष्ट अनुचित एवं उलझावपूर्ण प्रकार को उल्लिखित करती है। वेवलैन के अनुसार यह अनावश्यक उपभोग अपने स्तर को प्रदर्शित करने का एक माध्यम है एवं इसे निम्न प्रकार से समझा जा सकता है:–

''अगर हम इसे वेशभूषा के संदर्भ में देखें तो वेशभूषा में अनावश्यक खर्च केवल जीवन स्तर का प्रदर्शन मात्र है एवं अन्य जीवन की मूलभूत जरूरतों को छोड़कर लोग अच्छा दिखने एवं आराम के लिए पागल से हो जाते हैं,'' 1960 में 'आकर्षक उपभोग' संयुक्त राज्य में उपभोक्तावाद को दर्शाता था लेकिन शीघ्र यह शब्दावली मीडिया में वाद का विषय बन गयी इसे संस्कृति को बिगाड़ने वाला एवं इससे सम्बन्धित अन्य विषयों से जोड़ा जाने लगा। सन् 1920 तक अधिकांश लोगों (अमेरिकी) को किस्तों पर खरीद का अनुभव हो चुका था।

4.5.2 अवलोकन

जब से उपभोक्तावाद शुरू हुआ तब से विभिन्न व्यक्तियों एवं समूहों को वैकल्पिक जीवनस्तर (Lifestyle) भाने लगा। इन आन्दोलनों के अन्तर्गत साधारण स्तर पर सादगीपूर्ण 'जीवन', ''पर्यावरण के प्रति सजग खरीददारी एवं स्थानीय स्तर पर/''स्थानीय खरीददारी'' से उच्च स्तर पर मुक्त में जीतना या प्राप्त करना भी शामिल था। इन आन्दोलनों पर पर्यावरण अर्थशास्त्र द्वारा एक अनुशासन का निर्माण किया गया जिसने मुख्य रूप से उपभोक्ता संचालित अर्थव्यवस्था के सामाजिक एवं पर्यावरणीय प्रभाव को संबोधित किया। कई महत्वपूर्ण संदर्भों में उपभोक्तावाद का प्रयोग लोगों की उस प्रवृत्ति को उल्लिखित करने में जिसके द्वारा वे उपभोग करने वाली वस्तुओं और सर्विस को चुनते हैं, विशेषकर वे जिनके साथ वाणिज्यिक ब्रान्ड नाम जुड़े हैं एवं जिन्हें स्टेट्स–सिम्बल (Status symbolism) के रूप में माना जाता है, उदाहरणार्थ– लक्जरी कार, डिजाइनर वस्त्र या बहुमूल्य आभूषण। उपभोक्तावाद से उत्पन्न संस्कृति को उपभोक्ता–संस्कृति या बाजार–संस्कृति के नाम से भी जाना जाता है। उपभोक्तावाद चरम रूप भी ले सकता है जैसे उपभोक्ता अपना महत्वपूर्ण समय और आय को न केवल खरीददारी पर खर्च करता है वरन वह एक निश्चित फर्म या ब्राण्ड को सक्रिय सहारा भी देता है।उपभोक्तावाद के विरोधी तर्क देते हैं कि विलासिता पूर्ण और अनावश्यक उत्पाद ऐसे सामाजिक तन्त्र के रूप में कार्य कर सकते हैं जो लोगों को समान उत्पादों के प्रदर्शन के माध्यम से समान सोच वाले व्यक्तियों की पहचान की अनुमति देता है एवं सामाजिक आर्थिक स्तर एवं सामाजिक स्तरीकरण की पहचान हेतु हैसियत प्रदर्शन के प्रयोग को भी दर्शाता है।

कुछ लोगों का विश्वास है कि एक उत्पाद या ब्राण्ड के नाम के साथ सम्बन्ध समाज में स्वस्थ मानव सम्बन्धों की कमी का पर्याय है एवं उपभोक्तावाद के साथ एक सांस्कृतिक वर्चस्व का निर्माण करता है एवं आधुनिक समाज में सामाजिक नियन्त्रण की सामान्य प्रक्रिया का एक हिस्सा है। अन्य अनुसंधानकर्ताओं का तर्क है कि उपभोक्ता संस्कृति द्वारा प्रोत्साहित सामाजिक भेदों के प्रतीकों के लिए संघर्ष व्यक्तियों के मध्य स्वार्थी, शत्रुता पूर्ण सम्बन्धों का निर्माण करता है जिनसे उन क्षेत्रों में अपराधीकरण पनप सकता है जहाँ उपभोक्ता–उत्पाद कठिनाई से प्राप्त होते हैं या जहाँ व्यक्तियों को अपने अधिग्रहण की, सीमा नजर नहीं आती है अर्थात जहाँ लोग आसानी से अधिक से अधिक उपभोग के उत्पादों को प्राप्त कर सकते हैं।

उपभोक्तावाद के आलोचक यह तथ्य उजागर करते हैं कि उपभोक्तावादी समाज से पर्यावरण को अधिक हानि की संभावनाएं होती हैं। वे वैश्विक ताप (ग्लोबल वार्मिंग) को बढ़ाते हैं। एक अन्य समाज के अपेक्षा संसाधनों का बड़े पैमाने पर उपभोग करते हैं। डा0 जार्ज मेजफुड (Jorge Majfud) कहते हैं कि ''उपभोक्तावाद को कम किए बिना पर्यावरणीय प्रदूषण को कम करने की कोशिश उसी प्रकार है जिस प्रकार नशीले पदार्थों को लत को कम करे बिना नशीले पदार्थों की तस्करी पर अंकुश लगाना।''

सन् 1955 में अर्थशास्त्री विक्ट लीवों ने कहा–– ''हमारी अत्यधिक उत्पादक अर्थव्यवस्था की माँग है कि हम उपभोग को अपनी जीवन शैली बना लें अर्थात हम क्रय एवं वस्तुओं के प्रयोग को प्रथा में बदल लें अर्थात हम आत्मिक एवं अपने अहम के संतोष को उपभोग में ही तलाशें, हम वस्तुओं का उपभोग चाहें, उन्हें जलाए, बेकार फेंके, बदले एवं अस्वीकार करें वो भी अधिक तेज दर पर।''

उपभोक्तावाद के आलोचकों में सम्मिलित हैं– पोप बेनिडिक्ट XVI] जर्मनी इतिहासकार ओसवाल्ड स्पैंग्लर (जिन्होंने कहा–''अमेरिका में जीवन, संरचना में अत्यधिक आर्थिक है एवं उसमें गहराई का अभाव है''), एवं फ्रांसीसी लेखक जार्जस डूहामेल (Geoges Duhamel)। जिनके अनुसार, ''अमेरिकी भौतिकतावाद एक ऐसी अलगाववादी आग है जो फ्रांसीसी सभ्यता पर ग्रहण का खतरा बन गयी है।''

अगस्त 2009 में न्यू साइंटिस्ट पत्रिका में संवाददाता एण्डी कोग्लेन (Andy Coghlan) ने ब्रिटिश कोलाम्बिया विश्वविद्यालय के विलियम रीस (William Rees) एवं कोलेरोडे विश्वविद्यालय के एपीडेमोलोजिस्ट (Epidemologist) वारेन हर्न (Warren Hern) के हवाले से कहा कि मनुष्य जो स्वयं को एक सभ्य विचारक कहता है वह अवचेतन रूप से एक संवेग द्वारा अस्तित्व, वर्चस्व एवं विस्तार हेतु धकेला जा रहा है संवेग जिसने अब उस विचार में अभिव्यक्ति प्राप्त की है कि, न रूकने वाला आर्थिक विकास प्रत्येक वस्तु का उत्तर है एवं समय के साथ विश्व में उपस्थित असमानताओं का निवारण करेगा। अमेरिका की पारिस्थितिकी सोसायटी की वार्षिक बैठक में रीस द्वारा प्रस्तुत किए गए आंकड़ों के अनुसार, मानव समाज एक ऐसी ''वैश्विक विस्तृत शाखा'' (Global overshoot) है जो संसार के संसाधनों में चिरस्थायी से 30 प्रतिशत वस्तुओं का अधिक उपभोग करती है। वर्तमान में 85 प्रतिशत देश अपनी घरेलू '' जैव क्षमता'' से आगे निकल गये हैं एवं क्षेत्रीय वस्तुओं की कमी का प्रतिसादन उन अन्य देशों की सामग्री को समाप्त कर रहे हैं जहाँ कम उपभोग के कारण अतिरिक्त सामग्री उपलब्ध है। सभी उपभोक्तावादी–विरोधी उपभोग का विरोध नहीं करते लेकिन वे पर्यावरणीय चिरस्थायित्व (environmently sustainable) से बाहर जाकर संसाधनों के बढ़ते उपभोग के विरोध में तर्क प्रस्तुत करते हैं। जोनाथन पौरिट (Jonathan Porrit) लिखते हैं कि उपभोक्ता सामान्यतः अधिकांश उत्पादित आधुनिक वस्तुओं एवं सेवाओं के पर्यावरण पर पड़ने वाले नकारात्मक प्रभावों से अनभिज्ञ होते हैं एवं विशाल विज्ञापन उद्योग केवल खपत को बढ़ाने का कार्य करता है एवं उसे सुदृढ़ करता है। इसी तरह अन्य पारिस्थितिकी अर्थशास्त्री जैसे– हर्मन डेली, उपभोक्ता–चालित उपभोग एवं सम्पूर्ण ग्रह पर पारिस्थितिकी गिरावट के मध्य निहित संघर्ष की ओर ध्यान आकर्षित करते हैं।

4.5.2 प्रतिकारक तर्क

उपभोक्तावादी आंदोलन की सदा ही तीखी आलोचना की जाती रही है। इनमें से अधिकांश उदारवादी विचारक ही हैं। उपभोक्तावादी–विरोधी आंदोलन की उदारवादी आलोचना इस

धारणा पर आधारित है कि यह उत्कृष्टता की ओर ले जाता है। उदारवादीयों का मानना है कि किसी व्यक्ति को यह अधिकार नहीं है कि वह दूसरों के लिये यह निर्णय लें कि उनके जीवन के लिए कौन सी वस्तुएं आवश्यक हैं और कौन सी नहीं, या यह कि कोई आरामदायक या विलासितापूर्ण वस्तु व्यर्थ है, अतः वे तर्क देते हैं कि उपभोक्तावाद–विरोधी स्वर केन्द्रीय योजना या एक अधिनायकवादी समाज के अग्रदूत हैं। ट्वीटचैल ने अपनी पुस्तक लिविंग इट अप (Living it up) में व्यंग्यात्मक टिप्पणी की है कि उपभोक्तावाद विरोधी आंदोलन का तार्किक परिणाम व्यय सम्बन्धी विधि की वापसी है, जो कि प्राचीन रोम एवं मध्य युग में 16वीं शताब्दी में कार्ल मार्क्स के समय से पहले ऐतिहासिक समय में विद्यमान थे।

अभ्यास प्रश्न

हाँ या नहीं में उत्तर दीजिएः–

1.निष्पक्ष प्रतिस्पर्धा बाजार में संतुलन कायम रखती हैं। हां/नहीं

2.प्रतिस्पर्धा नीति का उद्देश्य आर्थिक शक्ति के केन्द्रीयकरण को बढ़ावा देना है। हां/नहीं

3.प्रतिस्पर्धा नीति का मुख्य उद्देश्य उत्पादक एवं उपभोक्ता दोनों का अधिकतम कल्याण सुनिश्चित करना है। हां/नहीं

4.भारत का प्रतिस्पर्धा आयोग एक स्वायत्त निकाय है, जिसे विनियामक एवं अर्द्धन्यायिक शक्तियाँ प्रदान की गयी हैं। हां/नहीं

5.प्रतिस्पर्धा अधिनियम का उद्देश्य उद्योगों के विभिन्न संयोजन के फलस्वरूप होने वाले आर्थिक केन्द्रीयकरण को रोकना है। हां/नहीं

6.प्रतिस्पर्धा आयोग प्रतिस्पर्धा अधिनियम के उद्देश्यों को प्राप्त करने हेतु सभी सम्भव उपाय करेगा। हां/नहीं

7.उपभोक्तावाद की शुरूआत उन्नीसवीं शताब्दी में बाजारोन्मुख अर्थव्यवस्था से हुई। हां/नहीं

8.''आकर्षक–उपभोग'' की अवधारणा ने बीसवीं शताब्दी में जन्म लिया। हां/नहीं

9.उपभोक्तवाद–विरोधियों के अनुसार उपभोक्तावादी संस्कृति पर्यावरण प्रदूषण को बढ़ावा देती है। हां/नहीं

10.पोप बेनेडिक्ट XVI miHkksDrokn के समर्थक हैं। हां/नहीं

4.6 सारांश

प्रतिस्पर्धा नीति बाजार में निष्पक्ष प्रतिस्पर्धा सुनिश्चित करने के लिए सरकारी नीति को सन्दर्भित करती है। ये वे उपाय हैं जो उद्योगों की संरचना एवं व्यवहार को सीधे प्रभावित करते हैं। इस तरह की नीति द्वारा प्रतिस्पर्धा परिणामों से बाजारोन्मुख आर्थिक साधन सुनिश्चित करने की आवश्यकता पड़ती है। यह स्वस्थ व्यापारिक वातावरण के निर्माण को बढ़ावा देता है, जो स्थिर एवं विस्तृत क्षमता को सुधारता है एवं अधिकतम उपभोक्ता एवं उत्पादनकर्ता के कल्याण को सुनिश्चित करता है। प्रतिस्पर्धा नीति के दो प्रमुख तत्व – स्थानीय और राष्ट्रीय बाजारों में प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा देने की नीति; एवं कृत्रिम प्रवेश बाधाओं एवं प्रतिस्पर्धा विरोधी व्यापारिक प्रथाओं/गतिविधियों को रोकने के लिए प्रतिस्पर्धा कानून बनाना है। प्रतिस्पर्धा नीति के प्रावधानों के अनुसार भारत सरकार द्वारा प्रतिस्पर्धा अधिनियम, 2002 पारित किया गया। अधिनियम पारित कने का उद्देश्य इसके माध्यम से प्रतिस्पर्धी विरोधी प्रथाओं को निषेध कर प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा देना, एक उद्योग का बाजार पर हावी होने एवं विलय एवं अधिग्रहण द्वारा इस प्रकार की प्रवृत्ति पर नियंत्रण है। इसके द्वारा एकाधिकार और प्रतिबंधित व्यापार (MRTP) अधिनियम, 1969 को समाप्त किया गया।

प्रतिस्पर्धा अधिनियम 2002 में प्रतिस्पर्धा (संशोधन) अधिनियम 2007 द्वारा संशोधन किया गया। प्रतिस्पर्धा अधिनियम के प्रावधानों को लागू करने के लिए भारत के प्रतिस्पर्धा आयोग (CCI), एक स्वायत्त निकाय की विनियामक और अर्द्धन्यायिक शक्तियों के साथ स्थापना की गई। आयोग के क्षेत्राधिकार में प्रतिस्पर्धा विरोधी समझौतों की जांच, किसी उद्यम द्वारा प्रभावी स्थिति के दुरूपोग की जांच, विभिन्न व्यापार संयोजनों को नियंत्रित करना, प्रतिस्पर्धा वकालत को संज्ञान में लेना, सार्वजनिक जागरूकता बनाने और प्रतिस्पर्धा के मुद्दे पर प्रशिक्षण देना शामिल है।

उपभोक्तावाद एक सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था है। जो अधिक से अधिक मात्रा में माल और सेवाओं की खरीद को प्रोत्साहित करती है। यह शब्द उपभोग की आलोचना के साथ जुड़ा हुआ है। इसकी शुरूआत थ्रोस्टन वेवलेन के साथ हुई। इसे उपभोक्ता आन्दोलन, उपभोक्ता संरक्षण या उपभोक्ता सक्रियता के नाम से भी जाना जाता हैं। इसके अन्तर्गत ईमानदारी से पैकिंग और विज्ञापन, उत्पाद की विश्वसनीयता और सुरक्षा मानकों में सुधार के बारे में उपभोक्ताओं को सूचित किया जाता है। अर्थशास्त्र में उपभोक्तवाद खपत पर जोर देने के लिए आर्थिक नीतियों को संदर्भित करता है। "आकर्षक उपभोग" की पुरानी शब्दावली एवं सिद्वांत की उत्पत्ति 20वीं सदी में समाजशास्त्री और अर्थशास्त्री थ्रोस्टन बेवलैन के लेखों द्वारा हुई। 1960 में 'आकर्षक उपभोग' संयुक्त राज्य में उपभोक्तावाद को दर्शाता था लेकिन शीघ्र यह शब्दावली मीडिया में वाद का विषय बन गयी इसे संस्कृति को बिगाड़ने वाला एवं इससे सम्बन्धित अन्य विषयों से जोड़ा जाने लगा।

जब से उपभोक्तावाद शुरू हुआ तब से विभिन्न व्यक्तियों एवं समूहों को वैकल्पिक जीवनस्तर (Lifestyle) भाने लगा। कई महत्वपूर्ण संदर्भो में उपभोक्तावाद का प्रयोग लोगों की उस प्रवृत्ति को उल्लिखित करने में जिसके द्वारा वे उपभोग करने वाली वस्तुओं और सर्विस को चुनते हैं, विशेषकर वे जिनके साथ वाणिज्यिक ब्रान्ड नाम जुड़े हैं एवं जिन्हें स्टेट्स–सिम्बल (Status symbolism) के रूप में माना जाता है, उदाहरणार्थ– लक्जरी कार, डिजाइनर वस्त्र या बहुमूल्य आभूषण। उपभोक्तावाद से उत्पन्न संस्कृति को उपभोक्ता–संस्कृति या बाजार–संस्कृति के नाम से भी जाना जाता है।

उपभोक्तावाद के विरोधी तर्क देते हैं कि विलासिता पूर्ण और अनावश्यक उत्पाद ऐसे सामाजिक तन्त्र के रूप में कार्य कर सकते हैं जो लोगों को समान उत्पादों के प्रदर्शन के माध्यम से समान सोच वाले व्यक्तियों की पहचान की अनुमति देता है एवं सामाजिक आर्थिक स्तर एवं सामाजिक स्तरीकरण की पहचान हेतु हैसियत प्रदर्शन के प्रयोग को भी दर्शाता है। उपभोक्तावाद के आलोचक यह तथ्य उजागर करते हैं कि उपभोक्तावादी समाज से पर्यावरण को अधिक हानि की संभावनाएं होती हैं। वे वैश्विक ताप (ग्लोबल वार्मिंग) को बढ़ाते हैं। एक

अन्य समाज के अपेक्षा संसाधनों का बड़े पैमाने पर उपभोग करते हैं। डा0 जार्ज मेजफुड (Jorge Majfud) कहते हैं कि ''उपभोक्तावाद को कम किए बिना पर्यावरणीय प्रदूषण को कम करने की कोशिश उसी प्रकार है जिस प्रकार नशीले पदार्थों को लत को कम करे बिना नशीले पदार्थों की तस्करी पर अंकुश लगाना।'' सभी उपभोक्तावादी–विरोधी उपभोग का विरोध नहीं करते लेकिन वे पर्यावरणीय चिरस्थायित्व (environmently sustainable) से बाहर जाकर संसाधनों के बढ़ते उपभोग के विरोध में तर्क प्रस्तुत करते हैं। जोनाथन पौरिट (Jonathan Porrit) लिखते हैं कि उपभोक्ता सामान्यतः अधिकांश उत्पादित आधुनिक वस्तुओं एवं सेवाओं के पर्यावरण पर पड़ने वाले नकारात्मक प्रभावों से अनभिज्ञ होते हैं एवं विशाल विज्ञापन उद्योग केवल खपत को बढ़ाने का कार्य करता है एवं उसे सुदृढ़ करता है।

उपभोक्तावादी–विरोधी आंदोलन की उदारवादी आलोचना इस धारणा पर आधारित है कि यह उत्कृष्टता की ओर ले जाता है। उदारवादीयों का मानना है कि किसी व्यक्ति को यह अधिकार नहीं है कि वह दूसरों के लिये यह निर्णय लें कि उनके जीवन के लिए कौन सी वस्तुएं आवश्यक हैं और कौन सी नहीं, या यह कि कोई आरामदायक या विलासितापूर्ण वस्तु व्यर्थ है, अतः वे तर्क देते हैं कि उपभोक्तावाद–विरोधी स्वर केन्द्रीय योजना या एक अधिनायकवादी समाज के अग्रदूत हैं।

4.7 महत्वपूर्ण शब्दावली

प्रतिस्पर्धा – एक दूसरे से आगे निकलने का संघर्ष।

उपभोक्तावाद – आरामदायक एवं विलासितापूर्ण उत्पादों को खरीदने एवं उपभोग की प्रवृत्ति।

विनियमन – नियमित करना; नियम बनाकर नियन्त्रित करना।

4.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. हाँ ; 2. नहीं ; 3. हाँ ; 4. हाँ ; 5. हाँ ; 6. हाँ ; 7. हाँ ; 8. हाँ ; 9. हाँ ; 10. नहीं ;

4.9 संदर्भ ग्रन्थः–

1.प्रतिस्पर्धा अधिनियम, 2002.

2.उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986

3.http://www.rtigateway.org.in/Documents/References/English/Reports/

12.% 20An%20article%20on%20RTI%20by%20Harsh%20Mander.pdf

4.http://www.rtigateway.org.in/Documents/Publications/Guide%20on%2

0RTI%20for%20Media.pdf

5. http://rti.gov.in/rti-actinhindi.pdf

6. http://hi.wikipedia.org/wiki/

4.10सहायक/उपयोगी सामग्री

1.दीप शर्मा, कंज्यूमर ग्रेविऐस रिड्रेसल अण्डर कंज्यूमर प्रोटेक्शन एक्ट,

2.ए ट्रीटीज ऑन कंज्यूमर प्रोटेक्शन लॉज, इण्डियन लॉ इंस्टीट्यूट।

3.वी. बालकृष्णन इराडी, कंज्यूमर प्रोटेक्शन ज्यूरिसप्रूडेंस

4.11निबन्धात्मक प्रश्नः–

1.प्रतिस्पर्धा अधिनियम, 2002 के मुख्य उद्देश्य क्या हैं?

2.उपभोक्तवाद से आप क्या समझते हैं?

3.उपभोक्ता हितों के संरक्षण हेतु सरकार द्वारा कौन से प्रावधान किए गए हैं?

LL.M. PART- I
PAPER –Legal Regulation of Economic Enterprises

ब्लाक–2 औद्योगिक विकास

ईकाई–1.औद्योगिक उपक्रमों का विकास व उसके नियम विनियम के अधीन औद्योगिक इकाईयों का प्रबन्धन एवं नियन्त्रण

इकाई संरचना

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 औद्योगिक उपक्रमों का विकास व उनके नियम विनियम के अधीन औद्योगिक इकाईयों का प्रबन्धन एवं नियन्त्रण।
  1.3.1 औद्योगिक उपक्रमों के विकास का एतिहासिक काल
    1. प्रारम्भिक काल 1850–1918
    2. प्रगतिकाल 1919–1945
    3. पूर्व प्रौढ़ता एवं स्वतंत्रयोत्तर काल 1946
  1.3.2 औद्योगिक उपक्रमों के लिए नियम एवं विनियम अधिनियम आदि का प्रभाव
  1.3.3 अहस्तक्षेप नीति का प्रभाव एवं सामाजिक न्याय
1.4 भारत में औद्योगिक क्रांति अधीन औद्योगिक इकाइयों का प्रबन्धन
  1.4.1 औद्योगिक प्रबन्ध के प्रकार एवं औद्योगिक प्रबन्ध के कार्य।
  1.4.2 औद्योगिक प्रबन्ध नियन्त्रण के ढ़ग और औद्योगिक उपक्रमों में न्याय निर्णयन
1.5 सारांश
1.6 पारिभाषिक शब्दावली
1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची
1.9 सहायक उपयोगी पाठय सामाग्री
1.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

औद्योगिक विकास का इतिहास श्रमिक वर्गों के दयनीय दशा में सुधार से सम्बन्धित क्रमिक विकास का परिणाम था। प्रथम विश्व युद्ध के बाद राष्ट्रों में औद्योगिक विकास में क्रांति की लहर छा गयी क्योंकि श्रमिकों में चेतना की लहर जगी और अधिकतम उत्पादन बढ़ाने के लिये नियोजक (उद्योगपति) प्रयत्नशील थे। मजदूरों की कार्यक्षमता को कायम रखने उनकी दशाओं का अध्ययन आवश्यक हो गया था। देश की सरकारों ने मजदूरों की दशा सुधारने के लिये महत्वपूर्ण कार्य किये क्योंकि उद्योगपतियों एवं मजदूरों के अटूट सम्बन्ध व विवाद का प्रभाव राज्य की आर्थिक नीतियों पर पड़ता था। श्रमिकों के काम की दशाओं, सेवा शर्तों, वृत्ति, अवकाश विश्राम आदि से सम्बन्धित विधिक व्यवस्था लागू करना था। नैतिक एवं मानवीय कर्त्तव्यों को सभी सभ्य देशों ने अपनाया। भारत में औद्योगिकीकरण का विकास 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध हुआ। भारतीय श्रमिक विकसित राष्ट्रों के श्रमिकों से कम कुशल नहीं थे जो व्यवस्था विदेशी श्रमिकों को प्राप्त थी यदि वही व्यवस्था भारतीय श्रमिकों को प्रदान कर दिया जाय तो विदेशी श्रमिकों से कम कुशल नहीं होगें। भारत की प्रधान तकनीक एवं काम के प्रति सम्मान विकसित करने की आवश्यकता थी। उसके साथ ही साथ शिक्षा तथा उद्योग नीति में अमूल्य परिवर्तन की आवश्यकता थी। सर्वप्रथम वाशिंगटन में 1919 में औद्योगिक सम्मेलन भारत भी सम्मिलित हुआ। औद्योगिक शांति एवं आर्थिक न्याय श्रमिकों के श्रम के बदले उचित मजदूरी प्राप्त करना, उत्पादन बढ़ाना ऐसा प्रयास किया गया। औद्योगिक विकास के इतिहास का क्रमिक विकास अत्याधिक प्राचीन है। प्रथम विश्व युद्ध के बाद औद्योगिक विकास में क्रांति की लहर सम्पूर्ण विश्व में फैल गयी। औद्योगिक विकास का मुख्य उद्देश्य औद्योगिक उपक्रमों में नियम एवं विनियम का सृजन एवं कर्मकारों एवं नियोजकों के सम्बन्ध में। सामंजस्य स्थापित करना, सद्भाव पैदा करना, अवैध हड़ताल एवं तालाबंदी को रोकना, सामूहिक सौदेबाजी को स्थान देना, पंजीकृत संघ (इकाई) या कर्मकार संघ द्वारा उठाये गये औद्योगिक विवादों का निपटारा करना, छंटनी काम पर से लौटाये जाने की दशा में कर्मकारों को अनुतोष देना है।

1.2 उद्देश्य

औद्योगिक विकास का मुख्य उद्देश्य कर्मकारों तथा नियोजकों के सम्बन्धों में सामंजस्य स्थापित करना, सद्भाव पैदा करना, अवैध हड़ताल एवं तालाबन्दी को रोकना, सामूहिक सौदेबाजी को स्थान देना, पंजीकृत यूनियन, कर्मकार समूह द्वारा उठाये गये औद्योगिक विवादों का निपटारा छँटनी, काम पर से लौटाये जाने की दशा में कर्मकारों को अनुतोष दिलाना था।

1.3 औद्योगिक उपक्रमों का विकास एवं नियम विनिमय के अधीन औद्योगिक इकाई का प्रबन्धन एवं नियन्त्रण

औद्योगिक विकास को निम्नलिखित तीन भागों में विभाजित किया गया जिसमें प्रथमकाल में नियम एवं विनियम नियोजकों के हितों की रक्षा के लिये थे; वे नियामक प्रकृति के थे। जबकि द्वितीयकाल में उद्योगों का विकास हुआ एवं उद्योगपतियों में प्रतिस्पर्द्धा की भावना में वृद्धि हुयी। जबकि तीसरे काल में विधियाँ कल्याण परक थीं और नये विधायन ने उन अधिनियमों को निरस्त कर दिया जो श्रमिकों के लिये उचित नहीं थी।

आराम्भिक काल–

औद्योगिक विकास क्रमिक गति का परिणाम है। सर्वप्रथम 1885 में इण्डिया फैटल एक्ट पारित होने के पूर्व यह धारणा थी दुर्घटना में किसी पक्ष का दायित्व नहीं होता यह एक प्रकार की घटना होती है। जबकि ैवताउमद ठतमंबी वि ब्वदजतंबज ।बज 1860 पारित हुआ जो श्रमिकों के हितों के विरूद्ध था जिसमें काम पर से हट जाने, संविदा भंग करने पर मजदूरी को दण्डित किये जाते थे। यह प्रावधान किया गया था कि इम्पलाइज एण्ड वर्कमेन्स (डिस्प्यूट) एक्ट 1887, पारित हुआ। जिसमें फैक्टरी कमीशन की सिपरिशों के परिणाम स्वरूप लंका शायरी के मिल मालिकों का विरोध सामने आया और भारत में रूई उद्योग प्रभावित होने लगा। दूसरी फैक्टरी कमीशन की नियुक्ति की गयी जिसकी सिफारिशों को ध्यान में रखते हुये थ्बजवतल ।बज 1890 में पारित हुआ जिसका मुख्य उद्देश्य श्रमिकों को अधिकतम सुविधायें प्रदान करना था जिससे उनकी कार्य क्षमता बनी रहे और काम के घण्टों को कम कर दिया गया तथा स्त्रियों एवं बच्चों के नियोजन पर प्रतिबन्ध लगाया गया एवं बच्चों के नियोजन की उम्र 7 से 9 वर्ष बढ़ाकर कर दी गयी। अवकाश नाममात्र का था बच्चों तथा स्त्रियों को साथ–साथ काम पर नियोजित किया जाता था, स्त्रियों के लिये अलग से शौचालय, स्नान गृह, विश्रामालय आदि की अलग व्यवस्था नहीं थी। इन दशाओं के अवलोकन के लिये एक जाँच पड़ताल कमेटी नियुक्त की गयी जिसका परिणाम 1901 का भारतीय खान अधिनियम था। इसका मुख्य उद्देश्य दुर्घटनाग्रस्त मजदूरों एवं उनके आश्रितों का प्रतिकर की व्यवस्था करना मुख्य था इस अधिनियम के पारित होने से श्रमिकों के जीवन में आशातीत सुधार हुआ चाहे वे खान में नियोजित हो या कारखाने में उनके काम के स्थानों एवं मशीनों को सुरक्षित रखने नियोजक का कर्त्तव्य था। कारखाना अधिनियम (संशो0) 1911 द्वारा बच्चों के नियोजन के उम्र को 15 वर्ष कर दिया गया तथा शाम 5:30 से 7:30 तक महिलाओं एवं बच्चों को कार्य करने से निषिद्ध किया गया।

प्रगति (समृद्धि) काल (1919–1945 तक) –

प्रथम विश्व युद्ध के बाद औद्योगिक विकास के क्षेत्र में अभूतपूर्व क्रांति आयी और एक देश का उद्योगपति दूसरे देश के उद्योगपतियों में प्रतिस्पर्द्धा की भावना दिखाई पड़ने लगी। बड़े–बड़े कारखाने में मशीनों ने स्थान ले लिया और औद्योगिक स्थापन अस्तित्व में आया। नियोजक एवं नियोक्ता के बीच मधुर सम्बन्ध बढ़ने लगे और सामुहिक सौदेबाजी ने व्यक्तिगत संविदाओं का स्थान ले लिया तथा संगठनों का विकास का वातावरण बना जिसके परिणाम स्वरूप श्रमिकों ने अधिकतम सुविधा एवं अपनी दशा में सुधार हेतु माँगों को लेकर हड़तालें शुरू की जिसका परिणाम यह हुआ कि सरकार ने नये नियम बनाये जैसे– कर्मकार प्रतिकर अधिनियम–1923, इण्डियन मर्चेण्ट शिपिंग अधिनियम 1923 ट्रेड यूनियन एक्ट, 1926 आदि पारित हुये। श्रमिक संघों की दशा को सुधारने हेतु 1922 में रायल कमीशन को उनकी परिस्थितियों, शर्तों एवं सुसंगत बातों पर विचार विमर्श करके सिफारिश करने का भार सौंपा गया और मजदूरी भुगतान के नियम बनाये गये। जिसमें 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों का नियोजन में निषिद्ध किया गया। नाबालिगों एवं श्रमिकों का अनिवार्य चिकित्सा परीक्षण पर जोर दिया गया तथा शारीरिक क्षमता प्रमाण पत्र न प्रस्तुत करने पर नौकरी से वर्जित किया गया। 1935 के रायल कमीशन के सिफारिश के बाद खान अधिनियम एवं मोटर वेहिकल्स एक्ट अस्तित्व में आया साथ ही साथ 1933 में चिल्ड्रेन प्लेजिंग आफ लेबर अधिनियम पारित हुआ।

खान मजदूरों को सुरक्षा करने हेतु 'दि कोल माइन्स सेप्टी एक्ट 1937 पारित हुआ जिसमें केन्द्रीय सरकार के आवश्यक आवश्यकताओं की आपूर्ति एवं सुरक्षा के साधनों को प्रदान किया तथा खानों मे काम करने वाली महिलाओं को प्रसव कालीन अवकाश प्रदान किया गया। बाद

में 1921 में खान प्रसूति प्रसुविधा अधिनियम पारित हुआ जिसमें दुग्धपान कराने एवं स्त्रियों का अलग से विश्रामालय एवं शौचालय की व्यवस्था की गयी एवं 1 दिन का साप्ताहिक अवकाश देने का अधिनियम में प्रावधान किया गया तथा नियोजकों को श्रमिकों के दुर्घटनाओ के लिये दायी ठहराया गया।

प्रौढ़ता काल –

औद्योगिक विकास के क्षेत्रों में 1946 में क्रांतिकारी परिर्वतन का नारा सम्पूर्ण विश्व में गूंज उठा। जिसमें नारा राजनैतिक, वाणिज्यक एवं औद्योगिक क्षेत्रों में अधिकतम् स्वतन्त्रता प्रदान करने से था। जिसमें न्छव्न्व चार्टर ने सभी मानव प्राणी को मूलभूत अधिकार को उपलब्ध कराने का अभूतपूर्व शंखनाद किया। 15 अगस्त 1947 को भारत स्वतन्त्र हुआ और अपना संविधान बनाया जिसमें ''समान कार्य के लिये समान वेतन'' का प्रावधान किया। इस प्रयास से औद्योगिक क्षेत्रों में भेदभाव व अत्याचार से त्रस्त मजदूर वर्गों ने संतोष की सांस ली। भारतीय संविधान का भाग 4 में उपबन्धित 'राज्य के नीति निदेशक तत्व' के अध्याय ने गरीबी आर्थिक विषमता, भेदभाव दूर करने तथा श्रमिकों के हितों को सुरक्षा प्रदान करने में राज्यों को जोर दिया। ऐसे नियम केन्द्रीय सरकार एवं राज्य सरकारें बनायें जो श्रमिकों के सामाजिक हितों को संरक्षण प्रदान कर सके। जिसके परिणाम स्वरूप 1946 में केन्द्रीय सरकार ने राज्यों के श्रममंत्रियों का एक सम्मेलन बुलाया जिसमें श्रमिकों के जीवन स्तर को ऊँचा उठाने, आवास सुरक्षा एवं कार्यदशाओं को सुधारने हेतु अधिनियम बनाने को कहा। मजदूरों की दशा सुधारने हेतु नियोजकों एवं कर्मकारों के बीच में सद्भावपूर्ण एवं मधुर सम्बन्ध बनाने में वृद्धि की जाय, और अवैध हड़ताल तालाबन्दी न की जाय छँटनी के मामले में कर्मकारों को अनुतोष प्रदान किया जाय तथा नियोजक एवं कर्मकारों के बीच औद्योगिक विवादों की जाँच हेतु समझौता मध्यथम् की स्थापना किया जाय तथा उनको महत्व प्रदान करना और पंजीकृत व्यवस्था संघों को प्रतिनिधित्व करने आदि का अधिकार प्रदान करना था।

कर्मकारों की दशा में सुधार हेतु आवास, प्रकाश, शिक्षा काम के घण्टों में कमी मनोरंजनों के साधनों का प्रबन्ध करके अन्य सभ्य एवं समृद्ध देशों के कर्मकारों की तरह आधुनिक समय में सुरक्षात्मक साधन उपलब्ध कराने, श्रमिकों को उचित मजदूरी उपलब्ध कराने आदि वातावरण पैदा करना सरकार द्वारा किया जाना चाहिये। क्योंकि मजदूर वर्गो को देश के आर्थिक ढांचे की रीढ़ एवं आर्थिक जगत का आधारशिला माना जाता है, उन्हें स्वस्थ, प्रसन्न रखकर ही राष्ट्र को सुदृढ़ बनाया जा सकता है।

औद्योगिक उपक्रमों के लिये नियम विनियम एवं अधिनियम आदि का प्रभाव –

औद्योगिक विकास हेतु संसद समय समय से अनेक नियम विनियम एवं अधिनियम आदि को बनाया। वर्तमान समय में भारतीय जनसंख्या का एक बड़ा भाग उद्योगपतियों, कर्मकारों, एवं उनके परिवारों के रूप में औद्योगिक विधि से प्रत्यक्षतः प्रभावित है, परोक्ष रूप से इनकी संख्या अधिक है। नियोक्ता एवं नियोजक के बीच सम्बन्ध संविदा की स्वतन्त्रता पर आधारित अहस्तक्षेप नीति (Laissez Fair) नियोजक एवं नियोक्ता के बीच सौहार्दपूर्ण सम्बन्धों के विषय में अपर्याप्त था। अधिनियमों एवं न्यायिक निर्णयों ने व्यक्तिगत संविदाओं के स्थान पर मानक संविदाओं (Standard form of statutory contracts) को स्थापित किया। औद्योगिक न्यायधिकरणों ने अपने निर्णयों द्वारा दोनों पक्षकारों पर बाध्यकारी एवं नये अधिकारों दायित्वों का सृजन कर सकते हैं नियोजक नये दायित्वों को स्वीकार करने के लिए बाध्य होगा भले ही वह उसे पसन्द न हो वैसे ही कर्मकार भी बाध्य होगा।

1.नियोजकों एवं श्रमिकों की स्थिति पर प्रभाव–

औद्योगिक उपक्रमों पर अधिनियमों, एवं विनियमों का विशेष प्रभाव पड़ा जिसमें भारतीय संविधान का अनु 23 एवं 24 ने मानव दुर्व्यापार बलात् श्रम, एवं बंधुआ मजदूरी प्रथा को प्रतिविद्ध क्रिया और ऐसे अपराध करने वाले व्यक्तियों को दण्डित किया जायेगा यह प्रावधान किया। जिसके लिये संसद ने बन्धित श्रम पद्धति उत्सादन अधिनियम Bonded labour system Abolition Act, 1976 पारित किया गया। जिसका मुख्य उद्देश्य नियोजकों द्वारा निश्चित मजदूरी तय करके मजदूरों को काम पर लगाया जायेगा जिससे आर्थिक समानता कायम किया जा सके। जिससे तालाबन्दी एवं हड़ताल जैसी स्थिति पैदा न हो सके क्योंकि प्रजातन्त्रीय विचारधारा ने कर्मकारों के प्रति चेतना जागृत की जिसे विश्व के सभी विकसित देशों ने स्वीकार किया जिसके निम्नलिखित सिद्धान्त इस प्रकार है :–

(क) कर्मकारों को संघ बनाने का अधिकार।

(ख) अहस्तक्षेप से (Laissez-faire) से कल्याणकारी राज्य की दिशा में परिवर्तन।

(ग) सेवा शर्तों को युक्ति युक्त बनाने के लिये सामूहिक सौदेबाजी करने का कर्मकारों का अधिकार।

(घ) त्रिपक्षीय समझौता (वार्ता) कर्मकार, नियोजक एवं सरकार के बीच प्रभाव आदि।

1.3.3 अहस्तक्षेप नीति का प्रभाव एवं सामाजिक न्याय–

औद्योगिक विधि का मुख्य उद्देश्य सरकार का अहस्तक्षेप नीति एवं सामाजिक न्याय है, जो स्वयं गतिशील एवं परिवर्तनीय है। औद्योगिक विधि उच्च आदर्शों एवं सामाजिक न्याय, विधिक न्याय को स्थानापन्न नहीं करके सामाजिक न्याय के बारे में अपना विचार व्यक्त करते समय न्यायालय, न्यायाधिकरण, विवाचक विधि को छोड़ नहीं सकते। औद्योगिक विधि समाज से उसी प्रकार सम्बन्धित है। जिस प्रकार सामान्य विधिशास्त्र पूरे समाज से सम्बन्धित है। भारत मे श्रम नीति कर्मकारों को आर्थिक लाभ पहुँचाने एवं औद्योगिक शांति को बनाये रखने को प्राथमिकता देना है। राज्य का परिवर्तन एवं कल्याणकारी कार्यक्रमों के लिये उत्प्रेरक के रूप में सामूहिक हितों को मान्यता देना है। औद्योगिक विधि न्याय न दिये जाने की स्थिति में कर्मकारों को शांतिपूर्ण ढंग से अपने विरोध को प्रकट करने के अधिकार को मान्यता देना है। नियोजक एवं नियोजित के बीच भागीदारी को बढ़ावा देता है। उत्पादकता को बढ़ावा देता है, एवं कर्मकारों की स्थिति को ऊँचा उठाना, उचित मजदूरी प्रदान कराना अधिनियम का मुख्य उद्देश्य है।

1.4 भारत में औद्योगिक क्रांति के अधीन औद्योगिक इकाईयों का प्रबन्धन एवं नियन्त्रण

भारत में औद्योगिक का अर्थ कारखाना पद्धति के विकास से है जिसमें नियोजक एवं नियोजित के बीच विभिन्न परिस्थितियों में विभिन्न प्रकार के सम्बन्ध स्थापित होते थे जिसके कुछ अपने गुण होते थे और इनमें से एक ही हितों का निहित होना, होता था। कारखाना पद्धति की स्थापना का उद्देश्य उत्पादन के कुछ निश्चित स्थानों पर एकत्रित होकर मजदूरों की संख्या में अभिवृद्धि करना, एवं गाँव में रहने वाले कर्मकारों को गाँव मे अजीविका के अभाव के कारण औद्योगिक कस्बों की ओर पलायन करने, देहाती हथकरघा के स्थान पर मशीनों द्वारा किये गये

सामान हथकरघा इसकी तुलना में सस्ते दरों से प्रदान करने से था। जिससे शिल्पकारों की स्थिति में परिवर्तन हो गया। हथकरघा पद्धति में शिल्पकार को वस्तुओं को बनाते समय एक मनोवैज्ञानिक संतोष प्राप्त होता था। मशीनीकरण ने निश्चित ही नियोजको की स्थिति में परिवर्तन करके औद्योगिक क्रांति का जन्म दिया

औद्योगिक इकाईयों का प्रबन्धन एवं नियंत्रण सरकार द्वारा अधिनियमों के माध्यम से किया जाना था और समय–समय से संसद ने औद्योगिक इकाईयों के प्रबन्ध हेतु अधिनियम बनाया जिसका मुख्य उद्देश्य नियोक्ता एवं नियोजक के बीच सामंजस्य पूर्ण स्थिति बनाये रखने एवं अधिनियम के उपबन्धों के अनुसार कृत्यों का संपादन करना था। इण्डियन फैटल एक्सीडेंट एक्ट, 1855 के द्वारा नियोजकों को दुर्घटना के लिये दायित्वधीन नहीं ठहराया। लेकिन बाद के अधिनियमों द्वारा औद्योगिक इकाईयों का प्रबन्ध किया गया 1887 का इम्प्साइज वर्कमेन्स (डिस्प्यूट) एक्ट ने कारखाना अधिनियम 1890 पारित किया। जिसमें श्रमिकों को अधिकतम सुविधायें प्रदान करना एवं 9 वर्ष से कम आयु श्रमिकों नियोजन से प्रतिषेध एवं अपराध प्रावधान किया गया। औद्योगिक क्रांति ने नये श्रम दर्शन को जन्म दिया सरकार एवं नियोक्ता ने मजदूरों के श्रम के महत्व को समझा एवं उत्पादन में उनकी क्षमता मूल्य को पहचाना और श्रम की कीमत नियत किया श्रमिकों के औद्योगिक प्रबन्धन हेतु निम्नलिखित बातों पर ध्यान दिया–

1. दुर्घटना से होने वाली मौत या अनर्हता के लिये प्रतिकर
2. मजदूरी भुगतान की समय बद्धता
3. श्रमिकों को संघ बनाने का अधिकार, श्रमिक महिलाओं को प्रसूति प्रसुविधा
4. श्रमिकों का सेवा शर्तो की नियमावली
5. औद्योगिक विवादों के निपटारे के लिये न्यायाधिकरण का गठन
6. मशीनरी लगाने एवं कच्चा माल का आयात एवं निर्यात
7. हड़ताल, तालाबन्दी, जबरी छुट्टी
8. कर्मकारों एवं उनके बच्चों के स्वास्थ, क्षेम, कल्याण सुरक्षा
9. बोनस, ग्रच्युटी, भविष्य निधि, बीमा
10. समान कार्य के लिये समान वेतन आदि का उपबन्ध

आदि औद्योगिक विधियों में प्रबन्ध किये गये है। जिसमें मैटर्निटी बेनीफिट ऐक्ट 1961, इक्वल रिम्यूनरेशन एक्ट, चाइल्ड लेबर प्रोहिबिशन एण्ड रेगुलेशन एक्ट 1986, आदि पारित किये गये थे जिसमें औद्योगिक इकाइयों के प्रबन्धन एवं नियन्त्रण के उपबन्ध निहित है।

औद्योगिक प्रबन्ध में श्रमिकों की भागीदारी एवं उनके विशेषाधिकार की उपादेयता बनाये रखना न्यायाधिकरण एवं विवाचनों का कार्य है। श्रमिकों को प्रबन्धन कार्य में सहभागिता आदि का कार्य भारतीय संविधान अनु0 43ए में उपबन्धित है–''राज्य किसी उद्योग में लगे उपक्रमों,

स्थानों या संगठनों के प्रबन्ध में कर्मकारों का भाग लेना सुनिश्चित करने के लिये उपयुक्त विधान द्वारा या किसी अन्य रीति से कदम उठायेगा।''

भारतीय अर्थव्यवस्था समाजवादी व्यवस्था में विश्वास करता है उद्योगों का स्वामित्व राज्य का है, या प्राइवेट व्यक्ति उनमें लगे कर्मकारों के लिये विद्यमान बनाने एवं प्रबन्धन में श्रमिकों को हिस्सा दिये जाने आदि का कार्य राज्य एवं नियोजन करेगा।

1.4.1 औद्योगिक प्रबन्ध के प्रकार Type of Industrial Management.

औद्योगिक विधि में प्रबन्ध के विभिन्न प्रकार उल्लिखित है जो न केवल भारत में बल्कि ब्रिटेन (U.K.) एवं संयुक्त राज्य अमेरिका (U.S.A.) में वर्तमान समय में भी लागू है जो इस प्रकार है–

(1) उत्पादन प्रबन्ध (Production Management)

उत्पादन प्रबन्ध में निम्नलिखित आवश्यकता निहित होते हैं। (क) कार्य विश्लेषण (ख) उत्पादन मार्ग का निर्धारण एवं नियोजन (ग) समय गति व थकान का अध्ययन (घ) गुण आदि पर नियन्त्रण करना।

(2) विकास प्रबन्ध (Development Management)

विकास प्रबन्ध में निम्नलिखित तत्व निहित होते हैं।
(1)कच्चे पदार्थों, मशीनों और विधियों में शोध करना तथा अनुसंधानशालाएं स्थापित करना
(2)प्रयोगात्मक संयन्त्र एवं औद्योगिक विधियों का प्रयोग करना उन्हें अपनाना
(3)उत्पादन की डिजाइन, उपभोक्ता की मांग के अनुसार उत्पादन में संयोजन करना।

(3)वित्तीय प्रबन्ध (Financial Management)

वित्तीय प्रबन्ध में निम्न प्रबन्ध किया जाता है।
(1) व्यवसायिक पूर्वानुमान (2) लेखा (3) सांख्यिकीय नियन्त्रण (4) बजटरी नियन्त्रण (5) बीमा

(4)वितरण प्रबन्ध (Distribution Management)

वितरण प्रबन्धन में सम्मिलित होने वाले त्तत्व के रूप में आते हैं– (1) विपणन (2) विज्ञापन (3)निर्यात (4) उपभोक्ता शोध (5) विक्रय प्रबन्ध आदि।

(5) विक्रय प्रबन्ध (Purchasing Management)

विक्रय प्रबन्ध मैं आते हैं–
(1) निविदा आमंत्रित करना
(2) विक्रय अनुबन्ध करना
(3) स्टोर एवं स्टाक रखने की व्यवस्था
(4) विक्रय पर नियन्त्रण स्थापित करना

(6) रखरखाव एवं यातायात प्रबन्ध (Maintenance & Transport Management)

रखरखाव प्रबन्ध में भवन की व्यवस्था, सुरक्षा आदि यन्त्र एवं उनकी देखभाल आदि आते हैं। यातायात के रूप में पैकिंग आदि की व्यवस्था करता, वेअर हाउस की व्यवस्था करना, जल, थल, वायु आदि का व्यवस्था करना एवं समन्वय स्थापित करना।

(7) कार्यालय एवं सेवावर्गीय प्रबन्ध (Office – Service Class Management)

कार्यालय प्रबन्ध में कार्यालय का प्रबन्ध और नियन्त्रण करना, वस्तुओं के उत्पादन एवं वितरण से सम्बन्धित आँकड़ों का संचय, पत्रव्यवहार करना, रिकार्ड रखना आदि आते हैं। संवर्गीय प्रबन्ध को कर्मचारियों का प्रबन्धन कहा जाता है। जिनमें निम्नलिखित तत्त्व सम्मिलित हैं–(क) कर्मचारियों का निर्वाचन एवं नियुक्त (ख) कर्मचारियों को प्रशिक्षण एवं सेवाओं का वितरण (ग) कर्मचारियों का स्थानान्तरण एवं पदोन्नति (घ) कर्मचारियों को अवकाश (डा.) स्वास्थ्य एवं कल्याणकारी योजना का संचालन सुरक्षा तथा संरक्षण (च) औद्योगिक सम्बन्धों की स्थापना।

औद्योगिक में औद्योगिक प्रबन्ध के कार्य (Function of industrial Management A Industrial law)

औद्योगिक विधि में औद्योगिक प्रबन्ध एक नया विज्ञान है जिसका निरन्तर विकास होता जा रहा है, उसी के साथ प्रबन्ध का विकास निरन्तर प्रगति करता जा रहा है औद्योगिक विधि औद्योगिक प्रबन्ध के निम्नलिखित कार्य हैं –

(1) पूर्वानुमान (Forecasting)

औद्योगिक उपक्रमों में उद्योगों से होने वाले लाभ एवं हानि के बारे में पूर्वानुमान लगाया जाता है क्योंकि किसी भी उद्योग को लगाने के पूर्व उसकी संभावनाओं का पता लगाया जाता है एवं उसके अच्छाई एवं बुराई आदि के बारे में विचार किया जाता है। उद्योगों के सम्बन्ध में बजट का अनुमान लगाया जाता है।

(2) योजना (Planning)

जब औद्योगिक उपक्रम में पूर्वानुमान का कार्य समाप्त होता है तब योजना का प्रारम्भ होती है। योजना से अभिशाप औद्योगिक उपक्रमों की नीति, उद्देश्य एवं कार्यक्रमों को निश्चित करना तथा उनकी पूर्ति हेतु कार्यविधियों का चुनाव करने से है बिना योजना उद्योग में कार्य करना अदूरदर्शिता का परिचायक है।

(3) औद्योगिक उपक्रमों मे संगठन प्रबन्ध ढांचा है–

औद्योगिक उपक्रमों में संगठन को प्रबन्ध माना जाता है। किसी योजना अथवा उद्देश्य के लिये आवश्यक कार्यों को निश्चित करना तथा उनके समूहों में क्रमबद्धता लाना जिससे उन्हें व्यक्तियों को सौंपा जा सके संगठन कहलाता है। संगठन के आधार पर ही किसी उद्योग में सफलता का निर्णय होता है मालिकों एवं कर्मचारियों को काम का उचित अवसर मिलता है लेकिन इसके साथ ही संगठन के द्वारा प्रबन्ध में होने वाले अपव्यय को भी रोका जा सकता है।

(4)संचालन (Direction)

औद्योगिक उपक्रमों में संचालन का अर्थ क्रियाओं के संचालन से होता है औद्योगिक उपक्रमों के संचालन के लिये नीतियों एवं उद्देश्यों के प्रति विश्वास पैदा करना एवं कर्मचारियों को उसके प्रति जागरूकता का विकास करना, एवं कुशल निर्देशन करना होता है। जिससे कर्मचारी सहयोग एवं सहाकारिता से काम करे।

(5) औद्योगिक उपक्रमों में नेतृत्व का होना(Leadership to be industrial unit)-

औद्योगिक उपक्रमों में कर्मचारियों के अधिकतम सहयोग तथा सहभागिता की भावना के कारण ही व्यवसाय में सफलता प्राप्त की जा सकती है। नेतृत्व पर ही औद्योगिक उपक्रमों ने सफलता एवं असफलता निर्धारित होती है। व्यवसाय के संगठन और संचालन की दृष्टि से नेतृत्व जो कार्य करता है वे निम्नलिखित इस प्रकार है– (क) आदेश का पालन करवाना (ख) कर्मचारियों को मार्गदर्शन देना आदि।

(6) कर्मचारियों की नियुक्ति (Staffing)

कार्य चाहे व्यवसायिक हो या नहीं उसका संचालन व्यक्तियों की संख्या में कमी आ जाय तो कर्मचारीयों को प्रशिक्षण व्यवस्था द्वारा नियुक्त करना होता है।

(7) अभिप्रेरण (Motivation)

अभिप्रेरण से तात्पर्य प्रेरणा शक्ति से है क्योंकि प्रबन्ध के संचालन में महत्वपूर्ण प्रेरणशक्ति होती है।

1.4.2 औद्योगिक उपक्रमों में प्रबन्ध नियन्त्रण के ढंग

औद्योगिक इकाईयों में नियन्त्रण के मुख्यतः दो ढ़ग होते हैं–

1.सामान्य नियन्त्रण (बाह्य नियन्त्रण)

(क) बजट नियन्त्रण (ख) लागत नियन्त्रण
(ग) प्रबन्धकीय लेखाकरण (घ) वित्तीय नियन्त्रण

(2) आन्तरिक नियन्त्रण–

प्रबन्ध औद्योगिक सफलता की कुँजी है। प्रबन्ध में सफलता के लिये आन्तरिक नियन्त्रण का होना अनिवार्य होता है जिसे निम्नलिखित तरीके से रखा जाता है।

(क) अनुशासन (Discipline)

औद्योगिक उपक्रमों में आन्तरिक नियन्त्रण के रूप में अनुशासन औद्योगिक उपक्रमों के प्रबन्ध का आधार है अनुशासन का निर्धारण प्रबन्ध के व्यक्तियों द्वारा किया जाता है जो अधिकारियों के निरीक्षण द्वारा या दण्ड की उचित मात्रा के आधार पर किया जाता है।

(ख) कार्य विभाजन एवं अधिकार एवं उत्तरदायित्व द्वारा (Division of work & Right duties)

नियन्त्रण का दूसरा ढंग व्यक्यिों को कार्य का बँटवारा करके उन्हें विशेषाधिकार प्रदान करना होता है जिससे वे अपने अधिकारों एवं दायित्वों का अनुपालन सही ढंग से कर सके।

(ग) निर्देशन एवं आदेशों की एकता (Unity of Direction & Command)

औद्योगिक इकाईयों के संचालन के लिये जो निर्देश अधिकारियों द्वारा प्राप्त हो वे स्पष्ट हो तथा उनमें एकता का होना नितान्त आवश्यक हो। निर्देशन से एकता के अभाव में प्रबन्ध का कुशल संचालन संभव नहीं।

निर्देशों की एकता के साथ ही साथ कर्मचारी को जो भी आदेश प्राप्त हो वे एक ही अधिकारी से हो, अनेक अधिकारियों से आदेश प्राप्त होने पर नियन्त्रण में शिथिलता आती है।

(घ) औद्योगिक उपक्रमों में नियन्त्रण हेतु केन्द्रीकरण एवं विकेन्द्रीकरण की व्यवस्था का होना अनिवार्य होता है।

1.4.3 औद्योगिक उपक्रमों में न्याय निर्णयन–

औद्योगिक उपक्रमों का अन्तिम उद्देश्य सामाजिक, आर्थिक, न्याय है। जिसके सामाजिक कल्याण, लोकहित राज्य के नीति निदेशक तथ्य मुख्य आधार है। औद्योगिक न्याय निर्णयन का मुख्य कार्य औद्योगिक विवादों का समाधान ढूढकर राज्य को सहायता देना है। औद्योगिक शांति से तात्पर्य उद्योगों में शांति एवं सद्भावना स्थापित करना, तथा श्रम एवं पूंजी के बीच सामंजस्य स्थापित करना है। आर्थिक सामंजस्य उत्पादन में बढोत्तरी करके राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को दृढ़ता प्रदान करता है। आर्थिक न्याय औद्योगिक शांति एवं सद्भाव को पुर्नस्थापित करता है। औद्योगिक न्याय निर्णयन का दायित्व राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देना है। इस लिये यह आवश्यक पंचाट श्रमनीति के प्रतिकूल है।

औद्योगिक न्याय निर्णयन के मुख्य सिद्धान्त–

(1) लोकहित को बढ़ावा देना है।

(2) औद्योगिक सामंजस्य एवं सद्भावना स्थापित करना

(3) औद्योगिक न्याय का विकास करना आदि है।

1.5 सारांश

औद्योगिक उपक्रमों का विकास एवं उसके नियम विनियम के अधीन औद्योगिक इकाई का प्रबन्धन एवं नियन्त्रण के रूप में हम कह सकते हैं कि औद्योगिक उपक्रमों का विकास का इतिहास प्रथम विश्व युद्ध के बाद हुआ तथा सम्पूर्ण विश्व में क्रांति की लहर की तरह छा गया। जिसका मुख्य कारण श्रमिकों में चेतना की लहर जगी और अधिकतम उत्पादन बढ़ाने के लिये उद्योगपति प्रत्यनशील थे। मजदूरों की कार्यक्षमता बढ़ाने एवं उद्योगपतियों एवं मजदूरों के बीच अटूट सम्बन्ध को कायम रखने के लिये आर्थिक नीतिओं का निमार्ण एवं औद्योगिक उपक्रमों का विकास करना एवं उसके लिए विधि बनाना संसद का कार्य था। संसद ने नियोजक एवं नियोक्ता के सम्बन्ध कायम करने एवं राष्ट्रों को औद्योगिककरण की दशा में प्रगति के लिये, निम्नलिखित सेवा शर्तो को अधिनियम के माध्यमों से बनाया गया जिसमें–

1. श्रमिकों के काम की दशा में सुधार एवं सेवा शर्तो को निश्चित करना।
2. वृति, अवकाश एवं विश्राम आदि से सम्बन्धित अधिनियम में प्रावधान
3. कर्मकारों के स्वास्थ्य शिक्षा पर विशेष ध्यान देना
4. नैतिक एवं मानवीय कर्त्तव्यों का अनुपालन
5. कर्मकारों एवं नियोजकों के बीच सम्बन्ध स्थापित करना
6. सामूहिक सौदेबाजी को बढ़वा देना
7. अवैध, हड़ताल, तालाबन्दी, छँटनी आदि पर रोक

8. औद्योगिक विवादों का निपटारा न्यायाधिकरणों एवं विवाचनों द्वारा
9. कर्मकारों को अनुतोष दिलाना।
10. औद्योगिक इकाई के प्रबन्ध एवं नियन्त्रण हेतु अधिनियम का सृजन आदि प्रमुख रहे।

1.6 पारिभाषिक शब्दावली

सामूहिक सौदेबाजी

सामूहिक सौदेबाजी वह व्यवस्था है जिसके अन्तर्गत कर्मकारों की मजदूरियों और नियोजन का शर्तो नियोजन सामूहिक रूप से कर्मकारों के बीच सौदेबाजी के आधार पर नियत की जा सकती है। चाहे ऐसे कर्मकारों को सामुहिक प्रतिनिधित्व उनका संघ करे या उनकी ओर से कुछ कर्मकार प्रतिनिधितत्व करें।

नियोजक एवं नियोक्ता–नियोजक से तात्पर्य कर्मकार एवं नियोक्ता से तात्पर्य उद्योगपतियों से है।

न्यायाधिकरण–औद्योगिक विवादों को निपटाने वाला न्यायालय न्यायाधिकरण कहलायेगा।

1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर –

निम्न रिक्त स्थानों पर अपने उत्तर लिखे–

प्र.1. औद्योगिक उपक्रमों के लिये संसद द्वारा बनाये गये अधिनियम कौन कौन से है? अहस्तक्षेप नीति का उस पर क्या प्रभाव है?

प्र.2. भारत में औद्योगिक क्रांति के अधीन औद्योगिक इकाइयों के प्रबन्धन की मुख्य बातें क्या है?

प्र.3.औद्योगिक विधि में औद्योगिक प्रबन्ध के कार्य को संक्षेप में समझायें?

1.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. श्रम एवं औद्योगिक विधि–सूर्य नारायण मिश्र
2. श्रमिक विधियां – डा0 इन्द्रजीत सिंह
3. औद्योगिक समाजशास्त्र – डा0 सुनील गोयल एवं संगीता गोयल
4. औद्योगिक मनोविज्ञान के मूल तत्व – प्रो0 सरयू प्रसाद चौबे
5. इन्डस्ट्रियल जुरिस्प्रडेन्स – महेश चन्द्र

1.9 सहायक उपयोगी पाठय सामग्री –

1. ए स्टडी आफ इण्डस्ट्रियल ला – जी0 एम0 कोठारी
2. इण्डस्ट्रियल रिलेशन्स – वी0 वी0 गिरि
3. लेबर प्राबलम्स इन इण्डियन इण्डस्ट्री – वी0 वी0 गिरि
4. राष्ट्रीय आयोग का प्रतिवेदन
5.

1.10 निबन्धात्मक प्रश्न

प्र.1.औद्योगिक उपक्रमों के विकास एवं नियम विनियम के अधीन इकाईयों के प्रबन्ध एवं नियन्त्रण के एतिहासिक पृष्ठभूमि को संक्षेप में समझाइये?

प्र.2. औद्योगिक विधि में औद्योगिक प्रबन्ध के प्रकार को संक्षेप में समझाये?

प्र.3.औद्योगिक उपक्रमों में औद्योगिक प्रबन्ध के नियन्त्रण पर प्रकाश डालें?

LL.M. PART- I

PAPER –Legal Regulation of Economic Enterprises

ब्लाक–2. औद्योगिक विकास

ईकाई–2. रूग्ण (बीमार) औद्योगिक उपक्रम : राष्ट्रीकरण या समापन, अनुज्ञप्ति नीति और विधिक नीति और विधिक प्रक्रिया–उदारवादी नीति का बढ़ता हुआ चलन

इकाई संरचना

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 रूग्ण औद्योगिक उपक्रम का अर्थ, परिभाषा, विशेषताये, क्षेत्र एवं महत्व

2.4 रुग्ण औद्योगिक उपक्रम का राष्ट्रीयकरण या समापन

2.4.1 क्या रूग्ण उद्योगों का राष्ट्रीयकरण आवश्यक है? या समापन

2.4.2 अनुज्ञप्ति नीति और विधिक प्रक्रिया–उदारवादी नीति का बढ़ता हुआ चलन

2.4.3 रूग्न औद्योगिक उपक्रम का भारत में राष्ट्रीयकरण की नीति की समीक्षा

2.5 सारांश

2.6 परिभाषिक शब्दावली

2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

2.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

2.9 सहायक उपयोगी पाठ्य सामाग्री

2.10 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

औद्योगिकीकरण आधुनिक युग की एक सामाजिक आर्थिक प्रक्रिया है। औद्योगिकरण का तात्पर्य मशीनों के उपभोग में अभिवृद्धि होने से लगाया जाता है। परन्तु औद्योगिकरण एक प्रक्रिया है जिसमें छोटे–छोटे उद्योगों के स्थान पर बड़ी–बड़ी मशीनों के द्वारा बड़े पैमाने पर उत्पादन किया जाता है। जहाँ औद्योगिकरण ने राष्ट्रों को उत्थान का मार्ग दिखाया तथा अर्थव्यवस्था के सुधार में महत्वपूर्ण योगदान दिया और राष्ट्रों की सामाजिक संरचना के स्वरूप को बदल दिया। जब औद्योगिकरण अपने पराकाष्टा को प्राप्त कर लिया तो उसमें धीरे–धीरे क्रमिक गति से गिरावट आने लगी चाहे वह आर्थिक क्षेत्र हो या सामाजिक या राजनीतिक जैसे आर्थिक क्षेत्र में अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के मामले में उत्पादन में अधिकता और खपत में कमी, परिवहन एवं संचार के साधन में कमी, कृषि मशीनों के यंत्रीकरण में कमी आदि, सामाजिक क्षेत्र में श्रमिकों के महत्व में कमी श्रमिकों का शोषण मजदूर संघों का जन्म आदि राजनीतिक क्षेत्र में राजनीतिक चेतना का अभाव, उपनिवेश स्थापित करने में कमी आदि ने कच्चे मालों में कमी, कल पूर्जो एवं कारखानों में कमी आदि औद्योगिक उपक्रमों ने रूग्णता को दर्शित करता है।

2.2 रूग्ण औद्योगिक उपक्रम का अर्थ, परिभाषा, विशेषताये, क्षेत्र एवं प्रभाव

अर्थ–रूग्ण औद्योगिक इकाई से तात्पर्य ऐसी प्रक्रिया है जिसमें उत्पादन दस्तारी के स्थान पर बीमार (खराब) खक्ति चालित मशीनों से किया जाता है। इस परिवर्तन के साथ–साथ कृषि, यातायात, संचार की तकनीक में परिवर्तन एवं कमी आ जाती है। इसके साथ ही व्यापार, वित्त

व्यवस्था में अवनति आ जाता है। इसी को रूग्ण औद्योगिक उपक्रम कहा जाता है। अर्थात ऐसे बीमार उद्योग जो पूँजी एवं कच्चेमाल के अभाव में नहीं चल सकते।

परिभाषा–रूग्ण औद्योगिक इकाई को निम्नलिखित विद्वानों इस प्रकार परिभाषित किया है।

क्लाक्रकेर–"बीमार औद्योगिक इकाई (उद्योग) वह है जहाँ कच्चे माल के अभाव में या पूँजी के अभाव में या मशीनों के अभाव में अपनी उत्पादकता के प्रति अक्षम हो।"

मिरडल–"रूग्ण उद्योग वह है जो आवश्यक वस्तुओं के संदाय के अभाव में अपनी कार्यक्षमता में अक्षम हो।"

डा0 पी0एस0 गोर–"रूग्ण औद्योगिक इकाई वह कहलाती है जो तकनीकी खराबी के कारण एवं कच्चे माल की कमी एवं पूँजी की कमी तथा संसाधनों के अभाव में लम्बे समय से बन्द है।"

<u>रूग्ण औद्योगिक उपक्रम की विशेषतायें–</u>

1.रूग्ण औद्योगिक इकाई में कच्चे माल की कमी एवं वस्तुओं की उत्पादकता में अक्षम

2.रूग्ण औद्योगिक इकाई में पूँजी का अभाव

3.रूग्ण औद्योगिक इकाई में श्रमशक्ति का अभाव

4.रूग्ण औद्योगिक इकाई में मशीनरी एवं कलपूर्जो का न होना

5.रूग्ण औद्योगिक इकाई में सरकार की नीतियों के विपरीत ऐसे कारखाने का होना

6.प्राकृतिक अपदाये या अन्य भौगोलिक परिस्थितियों जिससे कम्पनी कार्य करने में असमर्थ है।

7.उत्पादन एवं वस्तुओं की खपत में कमी होना तथा लागत मूल्य में वृद्धि आदि।

रूग्ण औद्योगिक उपक्रम के क्षेत्र

रूग्ण औद्योगिक उपक्रम निम्नलिखित क्षेत्र पर प्रभाव इस प्रकार है–

आर्थिक क्षेत्र		सामाजिक क्षेत्र		राजनीतिक क्षेत्र	
1.	रोजगार में कमी	1.	जनसंख्या वृद्धि एवं भरण पोषण में कमी	1.	राजनीतिक एवं संसदीय सुधार में कमी
2.	उद्योग के हस्तान्तरण में धन का अपव्यय	2.	श्रमिकों का शोषण	2.	औद्योगिक क्रान्ति का परिणाम अपने भयावह स्थिति में
3.	कृषि के यंत्रीकरण में कमी	3.	पारिवारिक जीवन में ह्रास	3.	राजनीतिक चेतना शक्ति पर प्रभाव
4.	व्यापार में सहायक संस्थाओ के सम्बन्ध में अभाव	4.	तेजी एवं मंदी का प्रादुर्भाव		
5.	स्वामित्व एवं प्रबन्ध तंत्र में अस्थिरता	5.	संयुक्त परिवार की अवधारणा में विघटन		
6.	परिवहन एवं संचार के साधनों में कमी	6.	सामाजिक चेतना की वृद्धि में कमी		
7.	अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की मात्रा में कमी	7.	अस्वास्थ्यकर वातावरण का जन्म		
8.	राष्ट्रीय आधारभूत आर्थिक ढाँचे में कमी				

आर्थिक क्षेत्र पर प्रभाव

1.रोजगार में कमी–

औद्योगिक रूग्णता रोजगार में कमी को प्रदर्शित करता है। उसका प्रभाव उद्योगो, यातायात, बैंको, बीमा कम्पनियों, व्यापार आदि के विकास में बाधा पहुँचाता है। बड़े पैमाने पर उत्पादन एवं लागत की वृद्धि होने के बाद भी यदि पर्याप्त लाभ न हो तो कम्पनी अपनी रुग्णता की अवस्था में आ जाती है जिसके कारण रोजगार में कमी आ जाती है।

2.उद्योगों के हस्तान्तरण में धन का अपव्यय–

उद्योगों में रूग्णता आने से उसका हस्तान्तरण अन्य स्थानों पर धन के अभाव के कारण नहीं किया जा सकता क्योंकि धन का अपव्यय होता है जो राष्ट्र की आर्थिक प्रगति में बाधा है।

3.कृषि के यन्त्रीकरण में कमी–

औद्योगिक इकाई में रूग्णता ने कृषि के यन्त्रीकरण को प्रभावित करती है क्योंकि कम्पनियां पर्याप्त मात्रा में कल पूर्जो एवं मशीनरी आदि का उत्पादन बन्द कर देती है।

4.व्यापार में सहायक संस्थाओं के सम्बन्ध में अभाव–

औद्योगिक रूग्णता से व्यापार में सहयोग करने वाली संस्थाये भी बन्द होने के कगार पर पहुँच जाती है जिससे उसमें लगे श्रमिकों को नियोजक द्वारा निकाल दिया जाता है।

5.स्वामित्व एवं प्रबन्धतंत्र में अस्थिरता–

औद्योगिक इकाई के रूग्ण होने पर स्वामित्व एवं प्रबन्धतंत्र में अस्थिरता बढ़ जाती है जिससे काम कर रहे लोगों के जीवन में भी अस्थिरता का आ जाती है उससे उनके परिवार वाले भी प्रभावित होते है।

6.परिवहन एवं संचार के साधनों पर प्रभाव–

औद्योगिक उपक्रमों के रूग्णता की स्थिति में परिवहन एवं संचार के साधन ठप हो जाते है जिससे उन्हें जो लाभ प्राप्त होता था वे भी बन्द हो जाते हैं।

7.अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की मात्रा में कमी–

औद्योगिक रूग्णता ने अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के सम्बन्ध को या तो कम कर देती या बन्द कर देती है क्योंकि उससे दोनों प्रक्रिया का होना स्वाभाविक है।

8.राष्ट्रीय आधारभूत आर्थिक ढांचे का प्रभाव–

औद्योगिक रूग्णता ने निश्चित की आर्थिक आधारभूत ढांचे के स्वरूप में परिवर्तन ला देता है एवं राष्ट्र आर्थिक दृष्टि से कमजोर हो जाता है।

सामाजिक क्षेत्र पर प्रभाव

1.जनसंख्या वृद्धि एवं भरण पोषण में कमी–

जनसंख्या वृद्धि पर अंकुश न होने के कारण औद्योगिक उपक्रमों को रूग्ण होना निश्चित ही भरण पोषण में कमी से प्रदर्शित करता है क्योंकि रोजगार के साधनों में कमी आ जायेगी जो

लोगों के जीवन की दिनचर्या को प्रभावित करेगी। जिससे आर्थिक सामाजिक क्षेत्र प्रभावित होगा।

2.श्रमिकों का शोषण–

औद्योगिक रूग्णता श्रमिकों के शोषण में अभिवृद्धि करती है क्योंकि उद्योग बन्द होगे एवं श्रमिकों की संख्या में अभिवृद्धि होगी, उसका फायदा अन्य व्यक्ति उठायेगा कम पैसे में अधिक काम करने के लिए बाध्य करेगा। अहस्तक्षेप नीति से सरकार का हस्तक्षेप कम होगा तथा पूँजीपतियों द्वारा शोषण अधिक होगा।

3.पारिवारिक जीवन मे ह्रास–

औद्योगिक रूग्णता से पारिवारिक जीवन में ह्रास आता है लोगों की मनोभावनाये कुंठित हो जाती है क्योंकि धन का अभाव रहता है जिससे लोग अच्छे कार्यो के प्रति अपने विचार को नहीं बना पाते हैं।

4.तेजी एवं मंदी का प्रादुर्भाव–

औद्योगिक रूग्णता ने समाज के आर्थिक व्यवस्था में उच्चावचन आने लगते है। कभी तेजी काल तो कभी मंदी काल आकर समाज के आर्थिक संतुलन को अस्त व्यस्त करते है।

5.संयुक्त परिवार की अवधारणा में विघटन–

औद्योगिक रूग्णता ने संयुक्त परिवार को विघटन में सहायक है क्योंकि अधिक से अधिक व्यक्ति शहरीकरण की ओर अपने को पलायन किया वहाँ रोजगार खोजा और वहाँ स्वयं अकेले न रहकर अपनी पत्नी एवं बच्चों के साथ रहने के लिये अपनो को उचित बनाया।

6.सामाजिक चेतना की वृद्धि में कमी–

औद्योगिक रूग्णता ने वर्ग संघर्ष जैसी स्थिति पैदा कर दी क्योंकि लोगों में सामाजिक चेतना जागृति हुयी जिससे वे एक स्थान से दूसरे स्थान पर पलायन करने लगे। वहाँ नियोजक द्वारा एवं श्रमिक की कार्यकुशलता औने–पौने भाव में नापी जाने लगी क्योंकि उसका मुख्य कारण श्रमिकों की अधिकता थी वहाँ श्रमिकों की सामाजिक चेतना कुंठित होगी।

7.अस्वास्थ्यकर वातावरण का जन्म–

औद्योगिक रूग्णता ने श्रमिकों के जीवन को अस्वास्थ्यकर बना दिया क्योंकि श्रमिकों की श्रमशक्ति में वृद्धि हुयी जबकि श्रमवेतन में कमी आयी।

राजनीतिक क्षेत्र पर प्रभाव

1.राजनीति एवं संसदीय सुधार में कमी –

औद्योगिक रूग्णता ने ऐसे उद्योगपतियों, अभिजात वर्गो, जमींदारों, ताल्लुकदारो जिनका औद्योगिक क्रान्ति के समय प्रभुत्व था उनके विचार को प्रभावित की तथा ऐसे लोग जो राजनीति के द्वारा संसदीय सुधार के रूप में अधिनियम बनाकर नियम, विनियम बनाकर ऐसी समस्या को कम करना चाहिये था वे भी अपने को ऐसा करने में सहज कमजोर समझने लगे।

2.औद्योगिक क्रान्ति का परिणाम अपने में भयावह स्थिति–

औद्योगिक रूग्णता ने औद्योगि क्रान्ति के परिणाम एवं उद्देश्यों को असफल बनाने में सहायक सिद्ध हुआ। औद्योगिक क्रान्ति ने राष्ट्र को समृद्धि बनाने में सहायक होता लेकिन औद्योगिक रूग्णता ने उद्योगों को बन्द कर राष्ट्र के समक्ष भयावह स्थिति पैदा कर दिया, जिससे राष्ट्र का रीढ़ का जाने वाला आर्थिक ढाचे टूट गया।

3.राजनीति चेतना शक्ति का प्रभाव–

जहाँ औद्योगिक क्रान्ति ने राजनीतिक चेतना में क्रान्ति लाया वही औद्योगिक रूग्णता ने राजनीतिक चेतना को शिथिल कर दिया। औद्योगिक उपक्रम में रूग्णता ने न केवल आर्थिक ढाँचे को प्रभावित किया बल्कि, कर्मकारों के उत्साह, कुशलता एवं श्रमशक्ति को भी पंगु बना दिया।

महत्व

औद्योगिक रूग्णता ने राष्ट्र को आर्थिक सुपरपावर बने से रोक देता है क्योंकि कोई राष्ट्र तब तक सुपरपावर नही बन सकता जब तक वह हर क्षेत्र में चाहे वह आर्थिक संसाधन, सामाजिक संसाधन राजनीतिक संसाधन एवं अन्य सभी क्षेत्रों में नये ऊँचाई को प्राप्त नही करता। इसलिये रूग्णता से निजात पाने के लिये सभी कमियों को पूरा कर औद्योगिक क्रान्ति लायी जाय। वह तभी संभव है–जब औद्योगिकरण ने राष्ट्र को आर्थिक प्रगति, कृषि का विवेकपूर्ण पुनर्गठन, देश के आर्थिक साधनों का विदोहन व तीव्र आर्थिक विकाश, अधिकाधिक रोजगार, करदान क्षमता में वृद्धि, जनसंख्या में नियंत्रण एवं नियम, पूंजी निर्माण की दर में वृद्धि, सामरिक महत्व आदि क्षेत्र में आत्मनिर्भरता प्रदान करता है।

2.3 रुग्ण औद्योगिक उपक्रम का राष्ट्रीयकरण या समापन

रूग्ण औद्योगिकरण इकाई किसी देश की अर्थव्यवस्था की समृद्धिकरण का प्रतीक नहीं होता। किसी देश की अर्थव्यवस्था में सरकार अहस्तक्षेप की अन्तिम विधि राष्टीयकरण है। राष्ट्रीयकरण का आशय उत्पत्ति के साधनों पर सरकार के स्वामित्व से होता है।

उद्योगो का राष्ट्रीयकरण की परिभाषा

आक्सफोर्ड शब्दकोष–"राष्ट्रीयकरण का आशय भूमि, सम्पत्ति एवं उद्योगो को राष्ट्र के नियंत्रण में लेने से है।" अर्थात् जब किसी उद्योग का स्वामित्व और प्रबन्ध सरकार अपने हाथों में ले लेती है तो ऐसी प्रक्रिया में राष्ट्रीयकरण व राष्ट्रीयकृत उद्योगों को 'राजकीय उपक्रम' कहा जाता है।

प्रो0 हेन्सन–"राष्ट्रीयकरण का अर्थ सामान्य तथा सम्पूर्ण उद्योग को राज्य द्वारा अधिगृहित करने में लगाया जाता है ताकि यह समाज के स्वामित्व में हो और समाज के लिये ही इसका प्रबन्ध एवं नियंत्रण हो तथा सार्वजनिक स्वामित्व से आशय कठोर भाषा में सम्पत्ति पर समाज के स्वामित्व से है चाहे वह औद्योगिक हो अथवा नहीं, चाहे वह एक उद्योग से पूर्ण रूप से ग्रहण करता है अथवा उसके एक भाग को।

श्री आर0एच0 टाइनी–उद्योगों का राष्ट्रीयकरण अन्तर्राष्ट्रीय क्षति के आधार पर किया गया सम्पत्ति का हस्तान्तरण है जो स्वयं में साध्य न होकर एक साधन है। इसका उद्देश्य उन सेवाओं की व्यापक आपूर्ति करता है जिन पर जनता का सामान्य कल्याण निर्भर करता है। राष्ट्रीयकरण साम्यवादी अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत संभव है। भारत जैसे मिश्रित अर्थिव्यवस्था वाले

देश में तो राष्ट्रीयकरण का द्वितीय स्वरूप ही दृष्टिगत हो सकती है। भारत में उद्योगों का राष्ट्रीयकरण और सार्वजनिक उपक्रमों से लगभग समान अर्थ का बोध होता है। राष्ट्रीयकरण से आशय किसी भी ऐसे उद्योग को सरकारी स्वामित्व में ले लेने से लगाया जाता हैं जो अब तक निजी खेत्र था जबकि सार्वजनिक उपक्रम शब्द राष्ट्रीयकृत उद्योगों तथा सरकार द्वारा स्वयं स्थापित किये गये उपक्रमों को संबोधित करता है।

2.4.1क्या उद्योगों का राष्ट्रीयकरण आवश्यक है?

रूग्ण उद्योगो का राष्ट्रीयकरण आवश्यक होता है जिसके निम्नलिखित कारण इस प्रकार है–

1.समाजवादी व्यवस्था की स्थापना–औद्योगिकरण नीति कुछ विशिष्ट उद्योगपतियों का अधिकार न होकर सम्पूर्ण राष्ट्र का अधिकार होता है। समाजवादी समाज की स्थापना में सहायता मिलती है। जनता अधिकारियों के शोषण को बच जाती है। भारत में द्वितीय पंचवर्षीय योजना में समाजवादी ढंग के समाज को राष्ट्रीय लक्ष्य के रूप में अपनाने और आयोजित तेज विकाश की आवश्यकता को पूरा करने के लिए अनिवार्य है।

2.संतुलित क्षेत्रीय विकाश–राष्ट्रीयकरण द्वारा देश के सभी भागों में औद्योगिक विकास संभव है। क्योंकि सरकार अपने सरकारी उपक्रमों को उन क्षेत्र में स्थापित करती है जो अल्प विकसित है। जहाँ स्थानीय साधन पर्याप्त नहीं है भारत में बहुत से ऐसे पिछड़े क्षेत्रों के विकास के लिये वहां बड़े बड़े कारखाना स्थापित किये गये है।

3.सीमित पूंजी का अधिकतम उपयोग–अर्द्धविकसित देशों में पूंजी का अभाव रहता है। अतः सीमित पूंजी का अधिकतम और उचित उपयोग करने की दृष्टि से उद्योग के राष्ट्रीयकरण की आवश्यकता है।

4.उपभोक्ताओं एवं श्रमिक हितों की रक्षा–उद्योगो के राष्ट्रीयकरण हो जाने से उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा होती है। क्योंकि इन्हें उचित मूल्यों में वस्तुये उपलब्ध होती है। उद्योग के राष्ट्रीयकरण से श्रमिकों का शोषण समाप्त हो जाता है।

5.आर्थिक स्थायित्व एवं आर्थिक विकास–उद्योगों का राष्ट्रीयकरण करके मांग और पूर्ति में सन्तुलन स्थापित किया जा सकता है और इस प्रकार व्यापारिक जगत में आने वाली तेजी व मंदी को कुछ सीमा तक नियन्त्रित किया जा सकता है।

6.अधिक वित्तीय साधन–योजना के वित्तीय साधनों की उपलब्धि में राष्ट्रीयकृत उद्योगो का महत्वपूर्ण योगदान होता है। इन उद्योगों से जो लाभ प्राप्त होता है उसका उपयोग आर्थिक विकास के लिये किया जा सकता है। निजी क्षेत्र की तुलना में सरकार कम व्याज पर देश व विदेश से अधिक मात्रा में पूंजी प्राप्त करने में सफल होती है।

7.आर्थिक असमानता को कम करना–नियोजन का महत्वपूर्ण प्रयोग आर्थिक असमानताओं को कम करना व दूर करना होता है। जिसके लिये राष्ट्रीयकरण महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है।

8.उत्पादन लागत में कमी–राष्ट्रीयकरण उद्योग में अनेक तान्त्रिक व बड़े पैमाने के उत्पादन के लाभ प्राप्त होते है तथा प्रतिस्पर्धा व विज्ञापन पर होने वाले विनाशकारी तथा दोहरे व्यय समाप्त हो जाते हैं। जिसमें उत्पादन लागत में कमी आती है।

9.औद्योगिक क्षमता में वृद्धि–राष्ट्रीयकरण से औद्योगिक क्षमता में वृद्धि होती है इसलिए उद्योगों का राष्ट्रीयकरण किया जाता है एवं स्वचालन की योजना लागू की जाती है। राष्ट्रीयकरण से उन इकाई को समाप्त कर दिया जाता है जो अनुपयोगी एवं अनुत्पादन होती है।

10.सार्वजनिक कल्याण–सार्वजनिक कल्याण की दृष्टि से राष्ट्रीयकरण आवश्यक है।

समापन (Winding up)

1.प्रजातांत्रिक दोष–रूग्ण उद्योग का समापन किया जा सकता है क्योंकि प्रजातान्त्रिक व्यवस्था में जनता के प्रतिनिधि द्वारा राज्य चलाया जाता है। प्रजातान्त्रिक व्यवस्था में राष्ट्रीयकरण के दोष इस प्रकार है–

(i)जनतान्त्रिक ढंग से चुने गये प्रतिनिधि इतने दक्ष नहीं होते कि वह रूग्ण उद्योगों के प्रबन्धतंत्र को ठीक कर सके तो अच्छा होगा रूग्ण उद्योगो का समापन।

(ii) रूग्ण उद्योगों की समापन सरकारी की नीतियों पर आधारित होता है यदि सरकारी की नीतियां उग्र है तो समापन को अच्छा मानेगी लेकिन नीतियाँ उधार है तो वह रूग्ण उद्योगों का समापन अच्छा नहीं मानेगी।

2.दोषपूर्ण कार्यपद्धति–राष्ट्रीयकृत उद्योगों का नियन्त्रण और संचालन सरकारी यन्त्र के द्वारा होता है जबकि इनके प्रबन्ध में कुशलता का अभाव होता है। इसका मुख्य कारण उद्योगों के प्रबन्ध संचालन में लालफीता शाही का होना है। सरकारी कार्यों में कई छोटे बड़े अधिकारी होते है जब तक अधिकारियों की स्वीकृति नहीं मिल जाती तब तक फाइले मेजों पर गुजरती रहती है शीघ्रता से निर्णय लेने की प्रक्रिया चक्रव्यूह में फँस जाती है दम तोड़ देती है राष्ट्रीय उद्योगों में वह लोच नहीं होता जो व्यवसायिक संस्थाओं की सफलता के लिये आवश्यक है।

3.औद्योगिक कार्य क्षमता में ह्रास–राष्ट्रीयकरण से औद्योगिक कार्य क्षमता का ह्रास होता है। इसका मुख्य कारण व्यक्तिगत रूचि का अभाव है। निजी व्यक्तियों के कार्यों में अपनी उत्सुकता रहती है। किन्तु राज्य का अधिकारी कार्य को अपना समझ कर नहीं करता अतः उसमें उत्सुकता होनी जितना चाहिये उतनी नवी होती और कार्य धीरे–धीरे होते रहते है। सभी कर्मचारी अपने दायित्वों की अपेक्षा औपचारिकताओं की ओर ध्यान देते है उनका उद्योग के लाभ हानि से कोई सम्बन्ध नहीं होता जिसका परिणाम यह होता है एक ओर प्रतिव्यक्ति उत्पादन छूटता है और दूसरी ओर लागत में वृद्धि होती है।

4.प्रबन्धकों द्वारा भ्रष्टाचार–राष्ट्रीयकृत उद्योगों में राज्य का हस्तक्षेप होता है। परन्तु इनका कार्य तो मनुष्य द्वारा चलाया जायेगा चाहे वे मनुष्य चुनाव जीत कर ही क्यों न आये हो। ऐसे मनुष्य जिनके हाथों में उद्योगो का प्रबन्ध सौपा गया है अपने स्वार्थो को प्राथमिकता देते है अर्थात बहती गंगा में हाथ धोने की चेष्टा करते है। राष्ट्रीयकृत उद्योगों में व्यक्ति और दल की नीतियों को अधिक महत्व दिय जाता है। प्रबन्धक समाज के कुछ अहम व्यक्तियों को खुश

करने के लिए उनके ही विचारों पर चलते है। वे उद्योगों की उन्नति एवं अवनति की अधिक चिंता नही करते है। वे स्वतंत्र रूप से ऐसे कार्य नहीं करते जो उद्योग एवं राष्ट्र के लिए हितकर हो।

5.उपभोक्ताओं के हितों की क्षति–राष्ट्रीयकरण से उपभोक्ताओं के हितों को ठेस पहुँचती है। पहले तो उनके चुनाव की स्वतंत्रता का हनन होता है क्योंकि उन्हें विभिन्न प्रकार की उत्पादित वस्तु उपलब्ध न होकर कुछ निश्चित किस्म के वस्तुओं को खरीदने के लिये बाध्य होना पड़ता है। प्रबन्ध की अयोग्यता और उत्पादन सम्बन्धी दोषों का दुष्परिणाम उपभोक्ताओं को भी वहन करन पड़ता है।

6.व्यक्तिगत पूँजी का भय–राष्ट्रीकरण के कारण औद्योगिकरण के कार्यो में शिथिलता आने की संभावना रहती है क्योंकि राष्ट्रीयकरण के भय से एक तो देश के उद्योगपति अपनी पूँजी विदेशों में विनियोजित करने लगते है और दूसरे विदेशी पूँजी का विनियोजन भी स्वदेश में कम हो जाता है।

7.जनता के हितों की सुरक्षा में कमी– राज्य का प्रमुख कार्य शासन व्यवस्था को बनाये रखना होता है यदि राज्य उद्योगों की स्थापना करना शुरू कर दे तो शासन व्यवस्था में उदारता आना स्वाभाविक है।

8.प्रतिस्पर्धा का अन्त–व्यक्तिगत उद्योगों में प्रतिस्पर्धा के महत्व को दिया जाता है जबकि राष्ट्रीयकरण हो जाने से सभी उद्योग सरकारी नियन्त्रण में आ जाते हैं उनमें किसी प्रकार की प्रतिस्पर्धा नही रह जाती है इसलिए उद्योगों का राष्ट्रीयकरण न हो।

2.4.3 अनुज्ञप्ति नीति एवं विधिक प्रक्रिया : उदारवादी नीति का बढ़ता हुआ चलन

रूग्ण उद्योगो के राष्ट्रीयकरण करना क्या उचित है या समापन दोनों के विषय में जो तक्र दिये जाते है उसे यह निष्कर्ष निकलता है राष्ट्रीयकरण से कर्मचारियों की कार्यकुशलता और कार्य क्षमता में कमी आती है और उपभोक्ताओं के हितों को ठेस पहुँचती है इस आधार पर रूग्ण उद्योगों को पूर्णरूप से राष्ट्रीयकरण किया जाय उसके लिये अनुज्ञप्ति नीति एवं विधिक प्रक्रिया का होना अनिवार्य होगा। अनुज्ञप्ति नीति एवं विधिक प्रक्रिया इस प्रकार है–

1.अनुज्ञप्ति नीति सुरक्ष से सम्बन्धित विधिक प्रक्रिया पर आधारित हो और उसे निजी स्वामित्व पर नहीं चलाया जाना चाहिये।

2.अनुज्ञप्ति नीति सामाजिक कल्याण की दृष्टि से अथवा आर्थिक नियोजन की दृष्टि से सम्बन्धित हो।

3.अनुज्ञप्ति नीति जनहित में उपयोगी हो जैसे रेल डाक, तार, पानी, विद्युत आदि जिसे विधिक प्रक्रिया के द्वारा चलाया जाय।

4.अनुज्ञप्ति नीति के तहत ऐसे उद्योग जो पूँजीपतियों द्वारा चलाये जाने है राज्य द्वारा निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने विधिक प्रक्रिया के अनुसार हो।

<u>उदारवादी नीति का बढ़ता हुआ चलन</u>

उदारवादी नीति का बढ़ता हुआ चलन भारत में राष्ट्रीयकरण की नीति पर आधारित है उसे अध्ययन की दृष्टि से हम इस प्रकार देखते है–

1.स्वतंत्रता के पूर्व उदारवादी नीति का बढ़ता हुआ चलन

2.स्वतंत्रता के बाद उदारवादी नीति का बढ़ता हुआ चलन

1.स्वतंत्रता के पूर्व उदारवादी नीति का बढ़ता हुआ चलन के रूप में 1948 की औद्योगिक नीति में यह प्रावधान किया गया था कि राज्य को उद्योग के विकास में अधिकाधिक सक्रिय भूमिका अदा करना चाहिये। लेकिन तत्कालीन परिस्थितियों में राज्य के पास इतने साधन नहीं थे कि वह औद्योगिक क्षेत्र में यथोचित वांछनीय सीमा तक भाग ले सके। इसलिये वह निश्चिय किया गया कि राज्य राष्ट्रीय आय में पर्याप्त वृद्धि करने के लिये कुछ समय तक अपनी कार्यवाहियों को उस क्षेत्र में बढ़ाये जिसमें वह अभी तक कार्य करता आ रहा है। इसके साथ ही नये उद्योगो की स्थापना को भी अपने कार्यक्षेत्र में ले। इस प्रकार के अदम्य साहस से उद्योगो के राष्ट्रीयकरण को कुछ समय के लिये स्थगित कर दिया गया परन्तु इस अवधि में राज्य को प्राइवेट क्षेत्र में समुचित नियन्त्रण द्वारा उनका नियमित संचालन करना था।

2.स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद की अवधि में भारत लोकतंत्रात्मक गणराज्य बना। भारतीय संविधान की प्रस्तावना में यह स्वीकार किया गया कि सभी नागरिकों को न्याय, स्वतंत्रता समता के अवसवर उपलब्ध कराये जायेगे यद्यपि भारत सरकार ने देश के उद्योगों को सम्बनध में राष्ट्रीयकरण की नीति का अलग से घोषणा कभी भी नही की लेकिन 1948, 1956, 1975 की औद्योगिक नीतियां उदारीकरण पर जोर डाली।

प्रथम पंचवर्षीय योजना में 1948 की औद्योगिक नीति के सिद्धान्तों को आधार माना गया और यह कहा गया कि सरकारी क्षेत्र को ऐसे उद्योग का विकास अपने हाथों में लेना चाहिये जो

उचित हो, जिसमें निजी उद्योग आगे आने, आवश्यक साधन लगाने, जोखिम लेने के लिये तैयार नहीं है। इसलिये सार्वजनिक क्षेत्र में उद्योग सम्मिलित किये जाय जिनसे पूंजी एवं आधारभूत वस्तुओं का उत्पादन बढ़ाया जा सके।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना में औद्योगिक नीति के प्रस्ताव में उत्पादन में निरन्तर वृद्धि एवं समान वितरण को अधिक महत्व दिया गया तथा राज्य के औद्योगिक विकास में क्रियाशील भाग लेने की सिफारिश की गयी। समाजवादी अर्थव्यवस्था को मंजूरी प्रदान की गयी राज्य को ऐसे क्षेत्र में विकास कार्य शुरू नहीं करना चाहिये जिस क्षेत्र में प्रवेश करने को वह तत्पर न हो बल्कि अर्थव्यवस्था को पूंजी विनियोग के प्रारूप को रुप देने की प्रधान भूमिका सरकार को निभानी चाहिए।

तृतीय पंचवर्षीय योजना–इस पंचवर्षीय योजना में उद्योग खोलने तक्र को अधिक दृढ़ता के समय रखा गय और कहा गया कि आर्थिक शक्ति केन्द्रीयकरण और एकाधिकार की प्रवृत्तियों को नियन्त्रित करने के लिये जो निर्णायक अस्त्र है वह है सरकारी क्षेत्र का द्रूतगति से विस्तार इससे दो लक्ष्यों की पूर्ति होती है एक ओर आर्थिक संरचना में मूलभूत कमियां दूर करने में सहायक होगी दूसरी और धन और बड़ी आयों को निजी क्षेत्र के लोगो के हाथों में एकत्रित होने से रोकेगा।

फरवरी 1980 की नयी औद्योगिक नीति छठवी पंचवर्षीय योजना के मूलभूत लक्ष्यों जैसे–विकाश, सामाजिक न्याय और आत्मनिर्भरता के अनुरूप हो। इस नीति में सार्वजनिक क्षेत्र को अधिकाधिक सम्पन्न बनाने का सुझाव है।

इस प्रकार भारत सरकार की नीतियाँ सार्वजनिक क्षेत्र का विस्तार करने की है। हमारा लक्ष्य एक प्रजातन्त्रात्मक समाजवादी समाज का निर्माण करना है। इसी लक्ष्य को ध्यान में रखकर उद्योगों का राष्ट्रीयकरण किया गया वे इस प्रकार है–

1.डाक तार विभाग तो शुरू से ही राष्ट्रीयकृत व्यवसाय रहा।

2.स्वतंत्रता के बाद सम्पूर्ण रेल उद्योग का राष्ट्रीयकरण किया गया।

3.जनहित में वायु परिवहन, सड़क मार्गो का राष्ट्रीयकरण किया गया।

4.1956 में व्यवसाय करने वाली समस्त बीमा कम्पनियों का राष्ट्रीयकरण किया गया।

5.1956 में आयात निर्यात व्यापार को राष्ट्रीयकरण के उद्देश्य से राजकीय व्यापार निगम की स्थापना की गयी।

6.19 जुलाई 1969 को 14 भरतीय व्यापारिक बैंको, जिनकी जमा पूँजी 50 करोड़ से अधिक थी उनका राष्ट्रीयकरण किया गया, 15 अप्रैल 1980 व्यक्तिगत 6 बैंको का राष्ट्रीयकरण।

7.1969–70 में सूती वस्त्र निगम, कागज, निगम की स्थापना एवं राष्ट्रीयकरण किया गया।

8.1972–73 में कोयलाखानों का राष्ट्रीयकरण।

9.तेल क्षेत्र में व्यवसाय का धीरे–धीरे पूरा राष्ट्रीयकरण किया गया प्ब्ब् भारतीय तेल कारपोरेशन, उ0प्र0 बिहार की रूग्ण चीनी मिलों का भी अधिग्रहण कर चीनी निगमों की स्थापना की गयी।

2.4.3 रूग्ण औद्योगिक उपक्रम का भारत में राष्ट्रीयकरण नीति की समीक्षा

भारत की अर्थव्यवस्था एक समाजवादी अर्थव्यवस्था के रूप में स्थापित की गयी। समाजवादी व्यवस्था की स्थापना के लिये एकाधिकार पर नियन्त्रण के लिये आर्थिक विषमता को दूर करने

के लिये श्रमिकों एवं उपभोक्ताओं की रक्षा के लिये संतुलित क्षेत्रीय विकास के लिये उद्योगो का राष्ट्रीयकरण आवश्यक है। राष्ट्रीयकरण निःसंदेह अच्छा है लेकिन भारत जैसे अर्द्ध विकसित देश में जहाँ पूँजी निर्माण कम हो, साहस की कमी हो, संस्थागत बाधाये हो, राजनीतिक स्थिरता की समस्या हो, तथा कुशल एवं योग्य ईमानदार प्रशासनिक सेवाओं का अभाव हो वहां निजी क्षेत्र की भूमिका को भुलाया नहीं जा सकता। राष्ट्रहित में उद्योगों का राष्ट्रीयकरण तो ठीक है लेकिन राजनीतिक स्वार्थो की पूर्ति के लिये ढोंग के रूप में उद्योगों का राष्ट्रीकरण करने से देश की तीव्र आर्थिक विकास के मार्ग में बाधा पहुँचेगी। प्रजातान्त्रिक समाजवाद स्थापित करने की घोषण करते समय सरकार ने राष्ट्रीयकरण रूपी अस्त्र का प्रयोग किया है और उद्योग के क्षेत्र में सरकार का प्रवेश बढ़ता जा रहा था लेकिन सार्वजनिक उद्योग की प्रगति संतोषजनक नहीं थी। सार्वजनिक क्षेत्र न तो विनियोजित पूंजी पर उत्पादकता पैदा कर सका और न ही देश में आय की असमानता एवं आर्थिक सत्ता की केन्द्रीयकरण की प्रवृत्ति को रोक सका। उद्योगो के राष्ट्रीयकरण या सार्वजनिक क्षेत्र का विस्तार से उतना भय नहीं जितना भय उन नीतियों से है जिनके द्वारा राष्ट्रीयकृत उद्योगो को अकुशलता से चलाया जाता है।

अतः इस समय आवश्यकता इस बात की है कि सरकार राष्ट्रीयकरण को स्पष्ट नीति घोषित करे जो निजी और सार्वजनिक क्षेत्र को समान महत्व प्रदान करते हुये देश के तीव्र औद्योगिक में सहायक हो।

2.5 सारांश

रूग्ण औद्योगिक उपक्रम का राष्ट्रीयकरण एवं समापन अनुज्ञप्ति नीति और विधिक प्रक्रिया उदारवादी नीति का बढ़ता हुआ चलन ने राष्ट्र को समृद्धिशाली बनाने में सहायक सिद्ध हुआ। क्योंकि भारत में समाजवादी अर्थव्यवस्था की स्थापना की गयी जिससे राज्य का औद्योगिक मामलों में कम से कम अहस्तक्षेप नीति के प्रावधानों के तहत कार्य करें। क्योंकि समाजवादी व्यवस्था की स्थापना एकाधिकार के नियन्त्रण को कम करने एवं आर्थिक विषमता को दूर करने, श्रमिकों एवं उपभोक्ताओं की रक्षा, संतुलित क्षेत्रीय विकास आदि के लिये उद्योगों का राष्ट्रीयकरण आवश्यक है। क्योंकि भारत एक अर्द्धविकसित देश है जहाँ पूँजी निर्माण कम हो, राजनीतिक स्थिरता हो, कुशल योग्य एवं ईमानदार प्रशासक का अभाव हो, वहाँ निजी क्षेत्रों की भूमिका के योगदान को भुलाया नहीं जा सकता है। क्योंकि रूग्ण औद्योगिक उपक्रम के विकास के लिये राष्ट्रीयकरण आवश्यक होता है।

2.6 परिभाषित शब्दावली

1.औद्योगिक रूग्णता–औद्योगिक रूग्णता से तात्पर्य बीमार उद्योग जो पूँजी, कच्चे माल, श्रमशक्ति आदि के अभाव में बन्द है।

2.समाजवादी अर्थव्यवस्था–समाजवादी अर्थव्यवस्था में लोकतन्त्रात्मक समाजवाद की स्थापना से है। समाजवाद से तात्पर्य न्यायालय को राष्ट्रीयकरण और राज्यस्वामित्व को अधिक प्रभाव देना चाहिए किन्तु जब तक निजी कारखाने और सम्पत्ति को मान्यता है हमारी आर्थिक ढाँचे का बहुत बड़ा भाग इससे शासित होता है। समाजवाद का अर्थ कमजोर वर्ग के कर्मकारों के जीवन

स्तर को ऊँचा करना, और जन्म से मृत्यु तक सामाजिक सुरक्षा की गारन्टी देना है। अर्थात आर्थिक समानता एवं आय के समान वितरण से है।

3.अस्थिरता–स्थायित्व का अभाव

2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

प्र.1.रूग्ण औद्योगिक इकाई की विशेषताओं को संक्षेप में समझाइये?

प्र.2.रूग्ण औद्योगिक उपक्रम क्षेत्र पर प्रभाव को संक्षेप में समझाइये?

प्र.3.रूग्ण औद्योगिक इकाई का अर्थ एवं परिभाषा को संक्षेप में समझाइये?

2.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1.J.S. Rousec - Social Control

2. जे0एच0 स्मिथ – इण्डस्ट्रियल सोसालोजी

3.मूरे – इण्डस्ट्रियल रिलेशन एण्ड सोशल आर्डर

2.9 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

1.सिंह श्री इन्द्रजीत–श्रमिक विधियाँ

2.मिश्र सूर्य नारायण–औद्योगिक श्रमिक विधियाँ

3.उपाध्याय प्रो0 जय जय राम–औद्योगिक श्रमिक विधियाँ

2.10 निबन्धात्मक प्रश्न

प्र.1.रूग्ण उद्योगों के राष्ट्रीयकरण से आप क्या समझते है? इनका राष्ट्रीयकरण एवं समापन पर अपना तर्क प्रस्तुत कीजिए?

प्र.2.रूग्ण उद्योगो के राष्ट्रीयकरण के सम्बन्ध में भारत सरकार की नीतियों की आलोचनात्मक परीक्षण करे।

प्र.3.रूग्ण उद्योगो के राष्ट्रीयकरण की उदारवादी नीति पर प्रकाश डाले।

LL.M. PART- I

PAPER –Legal Regulation of Economic Enterprises

ब्लाक–2 औद्योगिक विकास

ईकाई–3.आवश्यक वस्तुओं नियम विनियम : विकास के संकेत एवं सामाजिक दुर्घटनाा **(Deregulation of essential commodities : Development sign of social mishap.)**

इकाई संरचना

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 आवश्यक वस्तु अधि0 ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

3.3.1 आवश्यक वस्तु अधिनियम 1955 के अधीन 'आवश्यक वस्तु' अर्थ अभिप्रेरित है

3.3.2 आवश्यक वस्तु में सम्मिलित है

3.3.3 आवश्यक वस्तु में सम्मिलित नहीं है।

3.4 आवश्यक वस्तु अधिनियम की प्रयोज्यता एवं अप्रयोज्यता

3.4.1विकास के संकेत

3.4.2 सामाजिक दुर्घटना

3.5 सारांश

3.6 संदर्भ ग्रन्थ सूची

3.9 सहायक उपयोगी पाठ्य सामाग्री

3.10 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

भारत एक लोकतंत्रात्मक देश है और इसे कृषि प्रधान राष्ट्र माना जाता है क्योंकि 70ः जनसंख्या गाँव में रहती है और उनका मुख्य व्यवसाय कृषि है। स्वतंत्रता के बाद औद्योगिकरण एवं शहरीकरण ने लोगों को पलायन की ओर अग्रसरित किया और जब ग्रामीण शहर की ओर पलायन किये और शहर में आये तो शहरों में भी समस्या रहने एवं खाने की उत्पन्न हो गयी क्योकि आवश्यक वस्तुओं का प्रदाय कैसे किया जाय मुख्य समस्या उत्पन्न हुयी तो संविधान लागू होने के पाँच वर्ष बाद सरकार के समक्ष यह समस्या उत्पन्न हुयी।

<u>आवश्यक वस्तु नियम–विनियम (Deregulation)</u>

बनाने का सरकार का मुख्य उद्देश्य शहर में रहने वाले ऐसी सभी लोगों को आवश्यक वस्तु प्रदान किया जाय वह उसके समक्ष एक चुनौती थी। यदि सरकार आवश्यक वस्तु प्रदान करने में सफल रही तो वह उसका विकास का संकेत होगा लेकिन आवश्यक वस्तुओं के प्रदाय में यदि गुणवत्ता की कमी रही तो वह उसका सामाजिक दुर्घटना माना जायेगा यही दो मुद्दे सरकार के समक्ष थे। सरकार इसका समाधान करने के लिये आवश्यक वस्तु अधिनियम 1955 पारित की। जिसका उद्देश्य सभी व्यक्तियों को आवश्यक वस्तुओं को जो गुणवत्तापूर्ण प्रदान करना है। भारतीय संविधान के अनु0 369 में आवश्यक वस्तुओं के उत्पादन वितरण के सम्बन्ध में संसद को सशक्त किया गया है। जिसमें संसद को आवश्यक वस्तुओं का उत्पादन, आपूर्ति, वितरण को नियन्त्रित करना आदि के लिये उपबन्ध बनाना मुख्य विषय था। आवश्यक वस्तु अधिनियम 1955 (अधि0 संख्या 10) के नाम पारित हुआ जो सम्पूर्ण भारत में 1 अप्रैल 1955 से

प्रवर्तनीय है। आवश्यक वस्तु संशोधन अधिनियम 2003 (संशो0 37) एवं आवश्यक वस्तु (संशोधन) अधि0 2006 पारित किया गया। आवश्यक वस्तु (संशोधन) अधि0 2006 पारित किया गया। आवश्यक वस्तु (विशेष उपबन्ध) अधि0 1981 पारित किया गया जिसमें आवश्यक वस्तुओं की जमाखोरी और कालाबाजरी तथा मुनाफाखोरी करने वाले व्यक्तियों से और कीमतों के दर वृद्धि से अधिक प्रभावी तौर पर निपटने के लिये उसे सम्बन्धित या आनुषांगिक विषयों के लिये आवश्यक वस्तु 1953 में अस्थायी अवधि के लिए संशोधन के रूप में कुछ विशेष उपबन्ध करने के लिए अधि0 बनाये गये जिससे उ0प्र0 अनुसूचित वस्तु वितरण अधि0 2004 प्रमुख है।

3.2 उद्देश्य

आवश्यक वस्तु अधिनियम का मुख्य उद्देश्य आवश्यक वस्तुओं को भारत में रहने वाले ऐसे सभी व्यक्तियों का प्रदान करना जो गुणवत्तापूर्ण हो। संसद ने भारतीय संविधान अनुच्छेद 369 में राज्य सूची के कुछ विषयों को जो समवर्ती सूची के विषय है उन पर विधि बनाने का अधिकार प्राप्त है। वह आवश्यक वस्तु नियम विनियम द्वारा आवश्यक वस्तुओं के उत्पादन, आपूर्ति, वितरण, व्यापार, वाणिज्य के सम्बन्ध में विधि बनाने का अधिकार प्राप्त होगा। आवश्यक वस्तुओं के क्षेणी में आती है–

1.कोयला, टेक्सटाइल, आयरन, स्टील, पेपर इत्यादि संघ के नियन्त्रण के अधीन उद्योगो के उत्पाद होगे।

2.खाद्य पदार्थ, मवेशी चारा, इत्यादि ऐसे उद्योगो के उत्पाद नहीं होगे।

जैसे कि लोकहित अपेक्षित है कि 26 जनवरी 1955 के बाद वही वैधानिक शक्तियाँ जो संविधान के अनु0 369 के अधीन थी केन्द्र सरकार के पास वही जारी रहनी चाहिये। संविधान की सातवी अनुसूची में प्रविष्टि 33 के आवश्यक संशोधन के लिए उपलब्ध करने वाला बिल गत वर्ष संसद के दोनों सदनों ने पारित किया यह संशोधन अपेक्षित संख्या में राज्य द्वारा समर्थन देने के कारण अब विधि बन गया। जिसमें वस्तुओं के उत्पादन, आपूर्ति और वितरण, वस्तुओं के व्यापार और वाणिज्य को विनियमित करने की शक्ति है। समवर्ती सूची में प्रविष्टि 33 के अन्दर आने वाले सभी आवश्यक वस्तुओं के सम्बन्ध में नियन्त्रण के लिये उपबन्ध करने वाली ऐसी केन्द्रीय विधियां लम्बित रहने पर राज्य सरकारों ने अध्यादेश घोषित किया और ऐसी समाग्रियों के सम्बन्ध में नियन्त्रण जारी रखने के लिये खुली विधिक कार्यवाही की जिन्हें अध्यादेश में शामिल नहीं किया जा सकता इस उद्देश्य से कार्य किया।

आवश्यक वस्तु (विशेष उपबन्ध) अधिनियम 1981 एवं उ0प्र0 वस्तु वितरण अधि0 2004 का मुख्य उद्देश्य राज्य सरकार की राय में खाद्यान्नों और अन्य आवश्यक वस्तुओं का संभारण बनाये रखने और उसका साम्यिक वितरण यथोचित मूल्यों पर उसकी प्राप्यता सुनिश्चित करने के लिये ऐसा करना आवश्यक है। अब भारत सरकार उपभोक्ता मामलों, खाद्य एवं सार्वजनिक वितरण मामले अन्य सभी ऐसे अधिकारी अपने कर्तव्यो को सुनिश्चित करे जिससे आवश्यक वस्तुओं की उचित कीमतों पर उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिये ऐसी वस्तुओं की जमाखोरी और कालाबाजारी तथा उनमें मुनाफाखोरी पर प्रतिबन्ध आवश्यक हो। इस अधि0 का मुख्य उद्देश्य ऐसे रिक्तियों पर नियन्त्रण कायम रखना जो आवश्यक वस्तुओं के उचित कीमतों अत्यधिक कीमतों पर वस्तु बेच रहे है उस पर नियन्त्रण कायम करना है।

3.3 आवश्यक वस्तु अधिनियम का ऐतिहासिक परिपेक्ष्य

आवश्यक वस्तु अधिनियम का संक्षिप्त इतिहास का अवलोकन यदि किया जाय तो उससे यह सुनिश्चित होता है कि अब भारत भी एक आर्थिक सशक्त राष्ट्र का दर्ज प्राप्त कर लिया है क्योंकि भारत अपने सभी क्षेत्रों में प्रगति एवं समृद्धि मार्ग पर अग्रसर है, चाहे वह सामाजिक क्षेत्र हो या राजनीतिक क्षेत्र हो या आर्थिक क्षेत्र या अन्य क्षेत्रों में भी विश्व आइने में वह एक समृद्धिशाली राष्ट्र का दर्जा प्राप्त किया है। अधिनियम लागू होने से पूर्व भारत की आर्थिक प्रगति नगण्य थी क्योंकि उसके पास खाद्यान्न उत्पादन दर इतना कम था कि लोग भोजन के अभाव में कुपपेषण का शिकार हो जाते थे और भयंकर बीमारियों ने जनमानस को इस प्रकार प्रभावित किया था कि लगता था 1970 का अकाल एवं बीमारियो इस धरा पर मानव जाति पर प्रश्न चिन्ह लगा देगा लेकिन उत्तरोत्तर भारत का विकास हुआ और आधुनिकीकरण ने भारत को सभी क्षेत्रों में संवृद्धिशाली बनाया जिसमें कृषि क्षेत्रों तो विशेषकर है। जहाँ भारत में खाद्यान्न अभाव था वहाँ खाद्यान्न अधिकता ने भारत को आर्थिक क्षेत्र में एक सशक्त राष्ट्र बनाया लेकिन सशक्त राष्ट्र बनाने के बाद भ्रष्टाचार, जमाखोरी, मुनाफाखोरी आदि पर नियन्त्रण कायम करने के लिये संसद ने आवश्यक वस्तु अधि0 1955 पारित किया और आवश्यक वस्तु (विशेष उपबन्ध) अधि0 1981 पारित किया तथा उ0प्र0 अनुसूचित वस्तु वितरण आदेश अधिनियम 2004 पारित किया गया। अधिनियम का वर्तमान स्वरूप जहाँ राष्ट्र को विकास का संकेत प्रदर्शित कर रहा है जिसमें (1) शहरीकरण, जिसमें गाँव एवं शहर में असंतुलन (2) भीड़ (जनसैलाब), (3) प्रदूषण पर रोक (4) आवासीय भवनों में वृद्धि एवं अनियमितता का

विनियोजिकरण बाजारीकरण, (5) भ्रष्टाचार पर नियन्त्रण, (6) अति उपभोक्तावाद, (7) कृषि खाद्यान्न में अभिवृद्धि, (8) यन्त्रीकरण, (9) उर्वरकीकरण, (10) आयात–निर्यात, (11) खाद्यान्न में आत्मनिर्भरता आदि ने अधिनियम के विकास के संकेत को प्रदर्शित करता है वहीं सामाजिक दुर्घटना के रूप में (1) खाद्य अपमिश्रण, (2) रोगियो से झूठी बीमारियों बताकर अधिकाधिक धन का अर्जन (3) पुलिस भ्रष्टाचार, (4) मुनाफाखोरी, (5) जमाखोरी, (6) अपरिष्कर खाद्यान्नों का वितरण, (7) अनियंत्रित बाजारी मूल्य व्यवस्था, (8) दवाइयों की गुणवत्ता में कमी आदि ने सामाजिक दुर्घटना का परिचायक है उन सब पर नियन्त्रण बनाने के लिये संसद यह पारित करके भ्रष्टाचार पर नियन्त्रण बनाने एवं लोककल्याणकारी राज्य की स्थापना के उद्देश्य को पूरा किया।

आवश्यक वस्तु अधिनियम में 'आवश्यक वस्तु' का अर्थ एवं अभिप्रत है–

अधिनियम में 'आवश्यक वस्तु का अर्थ कतिपय ऐसे वस्तुओं का उत्पादन प्रदाय और वितरण तथा उनके व्यापार वाणिज्य के नियन्त्रण के लिये जनसाधारण के हित में उपबन्ध करने के लिये से है। अर्थात आवश्यक वस्तुओं का उत्पादन, आपूर्ति और वितरण और वाणिज्य के सम्बन्ध में राज्य द्वारा ऐसी विधियों को बताने से है जो संविधान का सातवीं अनुसूची में प्रविष्टि 33 में उपबन्धित है जिसमें (1) गेहूँ, (2) चावल, (3) दाल (4) चीनी (5) खाद्य तेल (6) मिट्टी का तेल (Kerosine oil) (7) साफ्ट कोक (Soft Coke) नियंत्रित वस्तु ब्वदजतवससमत बसवजी आदि आते है।

परिभाषा–

''आवश्यक वस्तु'' अभिप्रेत है–

(क) आवश्यक वस्तु अधि0 (संशोधित 2006) निम्नलिखित वस्तु वर्गों में आते हैं–

(i) पशुओं का चारा जिसके अन्तर्गत खली और अन्य चारे भी हैं,

(ii)कोयला, जिसके अन्तर्गत कोक और अन्य व्युत्पतियाँ भी हैं,

(iii) मोटर गाड़ियों के संघटक भाग और उपसाधन,

(iv) सूती और ऊनी वस्तु

(क)औषधि स्पष्टीकरण– औषधि का अर्थ वही है जो औषधि और प्रसाधन सामग्री अधि0 1940 की धारा 3(ख) में है।

(v)खाद्य पदार्थ जिसके अन्तर्गत खाद्य तिलहन और तेल भी है।

(vi)खाद्य पदार्थ जिनके अन्तर्गत लोहे और इस्पात के विनिर्मित उत्पाद भी हैं।

(vii) कागज जिसके अन्तर्गत अखबारी कागज पेपर बोर्ड और गता भी है,

(viii) पैट्रोलियम और पेट्रोलियम उत्पाद,

(ix)कच्ची कपास, चाहे ओटी हुयी हो या ओटी हुई न हो और बिनौला।

(x)कच्चा पटसन

(xi)कोई अन्य वस्तु वर्ग जिसे केन्द्रीय सरकारख अधिसूचित द्वारा अधि0 के प्रयोजनों के लिये आवश्यक वस्तु घोषित करे, जो किसी वस्तु हो जिसके बारे में संसद को संविधान की सप्तम् अनुसूचि 3 की प्रविष्टि 33 के आधार पर विधियाँ बनाने की शक्ति है।

निणर्य

(1)खाद्य पदार्थ का तात्पर्य केवल अंतिम उत्पाद से है इसमें कच्चा पदार्थ भी शामिल है जो पुनः संस्करण अपेक्षा करता है। के0 जनाघन पिल्लई ब0 भारत संघ ख।प्ट 1981ै ब 1985,

(2)पकाया गया खाद्य पदार्थ जिसका प्रयोग पशुओं के लिये यम मानव जीवन बचाने के लिये जीवन को बनाये रखने से है खाद्य पदार्थ है– वेलकम होटल ब0 स्टेट आफ ए0 पी0

(3)रघू सीड्स एवं फार्म्स ब0 भारत संघ ।प्ट 19945.ब–संसद फलों एवं सब्जियों के बीच को आवश्यक वस्तु घोषित करते हुये अधिसूचना जारी कर सकती है।

संविधान अनुसूची 7 में प्रविष्टि विकास की सूची–

(1) किसी विधि द्वारा किसी उद्योग का संघ द्वारा नियन्त्रण जो लोकहित में अपेक्षित है। उद्योग के उत्पादों को आयात करेगा

(2) खाद्य पदार्थ जिसमें खाद्य तेल या तिलहन है

(3) पशुओं के चारे खली आदि

(4) कच्ची कपास बिनौले आदि

(5) कच्चे जूट

1.3.2 आवश्यक वस्तुओं में सम्मिलित नहीं है

(क)सूती वस्त्रों – (आवश्यक वस्तु (संशो0) अधि0 2006)

(ख)चाय एक खाद्य पदार्थ नहीं है। यह न तो शरीर को पोषित करता और न ही क्षमता को बढ़ाता या सवंर्धित करता है।

3.3.3 आवश्यक वस्तु अधि0 अपराधों का संज्ञान लेने वाले अधिकारी एवं दण्ड

केन्द्रीय सरकार एवं राज्य सरकार के या उनके अधिकारियों एवं प्राधिकारियों को अधि0 यह शक्ति प्रदान करता है वे अपने कर्त्तव्यों का प्रत्यायोजन भी कर सकते हैं लेकिन केन्द्रीय सरकार एवं राज्य सरकार के अधीन ऐसे अधिकारी होगे, 'कलेक्टर', इनके अधीन अपर कलेक्टर और अन्य अधिकारीगण तथा उपखण्ड अधिकारी होगा। उपरोक्त अधिकारी कलेक्टर के अधीन शक्तियों का प्रयोग करेगा। कलेक्टर खाद्यानों की दशा में उसके साम्यिक वितरण और उसकी उचित कीमत पर उपलब्धता के लिये उनका विक्रय उचित दर दुकानों के माध्यम से जनता को उस कीमत पर किये जाने का आदेश देगा जो यथा स्थिति केन्द्रीय सरकार एवं राज्य सरकार द्वारा ऐसे खाद्यानों के फुटकर विक्रय के लिये नियत की गयी है दण्ड का प्रावधान धारा 7 में उपबन्धित कोई भी व्यक्ति द्वारा धारा 3 के अधीन किये गये आदेशों के उल्लघंन में 1 वर्ष तक का कारावास से दण्डनीय होगा। किसी अन्य दशा में तीन मास का

कारावास किन्तु वह सात वर्ष से अधिक नहीं होगा। अधि0 के अधीन बात होते हुए इस धारा संज्ञेय एक अजमानतीय होगा।

विशेष न्यायालय का गठन (धारा 12– ।)

आवश्यक वस्तु (विशेष उपबन्ध) अधि0, 1981 (संशो0) राज्य सरकार इस अधि0 के अधीन अपराधों के त्वरित विचारण को प्रदान करने के लिए राजपत्र की अधिसूचना द्वारा ऐसे क्षेत्र या क्षेत्रों के लिये विशेष न्यायालय गठित करेगा। विशेष न्यायालय में एक न्यायाधीश होगा जिसे राज्य सरकार द्वारा किये गये अनुरोध पर उच्च–न्यायालय द्वारा नियुक्त किया जायेगा वही व्यक्ति अर्ह होगा जो (1) उच्च न्यायालय के न्यायाधीश होने की अर्हता रखता हो (2) वह कम से कम 1 वर्ष की अवधि के लिये सेशन न्यायाधीश या अपर सेशन न्यायाधीश रहा हो। राज्य सरकार द्वारा विशेष न्यायालय के रूप में सशक्त प्रथम वर्ग न्यायाधीश मजिस्ट्रेट द्वारा महानगर मजि0 द्वारा किया जायेगा। केन्द्रीय सरकार शासकीय राजपत्र में अधिसूचना द्वारा ऐसे आदेशों को इस धारा के संक्षिप्त विचारण के लिये विनिर्दिष्ट कर सकता है जो 'आवश्यक वस्तु' नहीं है। विशेष न्यायालय द्वारा विचारणीय ऐसे अपराध द्वारा विचारशील थे जिसे श्रम न्यायालय द्वारा विनिर्दिष्ट किया जाय। द0 प्र0 सं0 की धारा 167(2) के अधीन इस अधिनियम के अधीन अपराधी को किसी मजिस्ट्रेट के पास भेजा जा सकता है। वहाँ यदि ऐसा मजिस्ट्रेट न्यायिक मजिस्ट्रेट है तो 7 दिन की अवधि तक ऐसे व्यक्ति को अभिरक्षा में रख सकता है। संक्षेपतः विचारित किसी मामले में सिद्ध दोष व्यक्ति द्वारा इस दशा में कोई भी अपील नहीं हो सकेगी।

1.मजिस्ट्रेट एक मास से अनधिक के कारावास, 2 हजार रुपये को कोई दण्डादेश पारित किया है लेकिन मर्यादा से अधिक दण्डादेश दिया है तो अपील होगी।

2.विशेष विचारण से सम्बन्धित कोई भी मामला मजिस्ट्रेट के यहाँ लम्बित है तो जो विशेष आदेश के उल्लंघन से सम्बन्धित है तो ऐसे मामलों का संक्षिप्त विचारण किया जा सकता है।

सिविल न्यायालय द्वारा व्यादेश –

किसी आदेश के अधीन केन्द्रीय सरकार या राज्य सरकार किसी लोक अधिकारी या किसी लोक प्राधिकारी द्वारा पदीय हैसियत में किये गये शर्तों के लिये के बाबत सरकार या लोक प्राधिकारी के विरूद्ध सिविल न्यायालय तब तक व्यादेश नही देगा या अनुतोष का आदेश नहीं देगा जब तक उसकी सूचना सरकार या अधिकारी का दे दी गयी हो।

आदेशों के बारे में उपधारणा –

जब कोई आदेश धारा के अधीन प्रदत्त शक्ति के प्रयोग में प्राधिकारी द्वारा किया गया है हस्ताक्षरित है तो न्यायालय यह उपधारणा करेगा कि ऐसे आदेश में भारतीय साक्ष्य अधि0 1872 के अर्थ में है।

3.4 अधिनियम की प्रयोज्यता एवं अप्रयोज्यता

आवश्यक वस्तु अधि0 की प्रयोज्यता एवं अप्रयोज्यता अधिनियम के अवलोकन से प्रगट होता है जो मुख्यतः दो प्रकार है

(1) यदि सकारात्मक दृष्टि से देखें तो अधिनियम के विकास के संकेत प्रगट होते हैं।

(2) लेकिन वास्तविकता की दृष्टि से देखें तो अधिनियम के नकारात्मक पक्ष प्रगट होता है जो इस प्रकार है–

3.4.1 विकास के संकेत (अधिनियम का योगदान)

आवश्यक वस्तु अधि0 की प्रयोज्यता के रूप में अधि0 के विकास के संकेत अधि0 के महत्व को प्रगट करती है। संसद ने यह अधि0 बनाकर अधि. के उद्देश्य को प्राप्त कर लिया।

1.जनसंख्या अधिकता (जन सैलाब) में आवश्यक वस्तुओं की उपादेयता–

भारत में जनसंख्या की अधिकता और सभी को आवश्यक वस्तु अधि0 के उपबन्धों द्वारा खाद्य पदार्थों की गुणवत्ता बनाये रहने एवं समान वितरण मूल्य का निर्धारण केन्द्र सरकार करती है। सरकारों का दायित्व है कि ऐसे वस्तुओं का वितरण जो आवश्यक पदार्थों के रूप है उसको किसी भी प्रकार से अश्रेष्कर न होने दे। जनसंख्या वृद्धि को ध्यान में रखकर आवश्यक वस्तुओं का वितरण वस्तुओं की पौष्टिकता का ध्यान में रखकर करे क्योंकि स्वस्थ्य जनता, स्वस्थ्य राज्य का निर्माण करती है। अधि0 का उद्देश्य यह है कि वह ऐसे सभी वस्तुओं का जाँच परख कर ऐसे सारे खाद्यान्न पदार्थों को बाजार में लायें और वस्तुओं की गुणवत्ता को प्रयोगशाला में जाँच परख कर वितरण के लिये बाजार में कीमत निश्चित करके उतारे क्योंकि तभी अधि0 का उपादेयता बनी रहेगी और यही विकास का संकेत है।

2.शहरीकरण में आवश्यक वस्तु की गुणवत्ता जरूरी :–

आधुनिकीकरण ने शहरीकरण को बढ़ावा दिया और अधिक लागों का शहर में आना एक निश्चित ही समस्या कारण बना क्योंकि मुख्य समस्या खाद्य पदार्थों, पेय पदार्थों एवं अन्य आवश्यक वस्तुओं की थी जिसे लोगों तक पहुँचाना सरकार का कर्त्तव्य था। सरकार ने अपने दायित्वों को ध्यान में रखकर अधि0 के प्रावधानों के द्वारा सभी लागों को पौष्टिक आहार एवं शुद्ध तेल एवं पानी को प्रदान करना राज्य का दायित्व था जिसे वह प्रदान करके अपने अधि0 का लगभग पाप्त किया।

3.पर्यावरण प्रदूषण को कम करने के लिए अधिनियम की उपयोगिता

अधि0 पर्यावरण प्रदूषण को कम करने एवं पर्यावरण का सतत् पोषणीय विकास का प्राप्त करने का उद्देश्य था। क्यों सरकार या अधिकारियों एवं प्राधिकारियों का यह दायित्व था कि वह किसी भी प्रकार से खाद्य पदार्थों, पेय पदार्थों पेट्रोलियम, आदि पदार्थों की गुणवत्ता बनाये रखना, किसी भी प्रकार से पर्यावरण प्रदूषण को रोकने का दायित्व राज्य का था जिसे वह अधि0 के माध्यम से प्राप्त करने में काफी हद तक सफल रहा।

4.आवासीय भवनों में अभिवृद्धि की अनियमितता को विनियोजित करना

औद्योगिकरण एवं शहरीकरण ने आवासीय भवनों में वृद्धि की जो अनियमितता द्वारा अधिक धन कमाने के उद्देश्य से बनाये गये। मकान मालिक अधिक दामों में मकान को किराये पर उठाते थे जिनमें सुविधाओं का अभाव रहता था लेकिन धन कमाने के उद्देश्य से गाँव आये लोग ऐसे मकानों का मजबूरी रहने के लिये लेते थे। लेकिन अधि0 ने ऐसे मकानों की अनियमितता

एवं सुविधाओं की कमी को पूरा करने के लिये कलेक्टर के माध्यम से किराये अधि0 द्वारा विनियोजित कर कम दामों में मकान को किराये पर उठाने का आदेश किया। जो अधि0 के विकास के संकेत हैं।

5.वर्तमान बाजारीकरण व्यवस्था में आवश्यक वस्तु अधि0 की उपयोगिता–

आवश्यक वस्तु अधि0 ने बाजारी व्यवस्था पर पूर्ण नियन्त्रित किया। बाजार में विक्रय हेतु जो भी वस्तु लाये गये उस पर मूल्य को निर्धारित करके विक्रय के लिये रखा गया जिसमें उसकी गुणवत्ता बनाये रखा गया तथा उसकी सूची समाचार पत्रों में, टेलीविजन में प्रसारण द्वारा किया जात है। यदि अधि0 का धाराओं के उल्लघंन करने को व्यक्ति दण्ड का पात्र होता था। यह नियन्त्रण विपणन अधिकारी, उप जिला मजिस्टेट, जिला मजिस्ट्रेट, राज्य एवं केन्द्र सरकार अपने अधिकारियों एवं पदाधिकारियों के द्वारा करती थी।

6.भ्रष्टाचार पर नियन्त्रण लगाने एवं नियम विनियम बनाने के लिये अधि0 की प्रयोज्यता–

आवश्यक वस्तु अधि0 मुनाफाखोरी, कालाबाजारी, खाद्य अपमिश्रण आदि पर नियन्त्रण लगाने एवं नियम विनियम को बनाये रखने में अपनी प्रयोज्यता को बनाये रखा जिससे किसी प्रकार से भ्रष्टाचार का महौल न बन पाये, राज्य एवं उनके अधिकारियों एवं प्राधिकारियों ने मूल्य नियन्त्रण पर पूर्ण रूप से नियन्त्रण लगाया जिससे निश्चित दर पर वस्तुओं का विक्रय किया जाय।

7.अति उपभोक्तावाद पर अंकुश लगाने में अधिनियम का सार्थकता–

अतिभोक्तावाद पर पूर्ण अंकुश लगाने एवं नियन्त्रण कायम करने में अधि0 पूर्ण रूप से सफल रहा क्योंकि वस्तुओं के उपयोग पर पूर्ण नियन्त्रण बनाये रखने एवं उसकी उपादेयता विनष्ट न होने तथा उपभोक्ता अपनी मन मर्जी के द्वारा ऐसे वस्तुओं का प्रयोग नहीं कर सकता जो जनहित के प्रतिकूल हो। उसे केवल उन्हीं वस्तुओं का उपयोग का अधिकार होगा जो अधि0 के उपक्रमों के प्रावधानों एवं उद्देश्यों के अधीन हो। ऐसे कृत्यों में अधि0 पूर्णरूप से अपनी सार्थकता प्राप्त करने बेग सफल रहा।

8.सतत् विकास की अवधारणा की वर्तमान परिवेश में उपादेयता–

आवश्यक वस्तु अधि0 की मूल अवधारणा सतत् विकास की है राज्य सरकार/केन्द्र सरकार ऐसे नियम एवं विनियम विनियोजित करे जिससे जनकल्याण को बढ़ावा मिल सके और अधि0 वर्तमान परिवेश में उपादेयता प्राप्त कर सके।

9.अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में आयात निर्यात के मानकों को सुदृढ़ करने एवं गुणवत्ता युक्त खाद्यान्न पदार्थों का विवरण –

राज्य का दायित्व होगा कि वर्त्तमान अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में आयात के मानकों को सुदृढ़ करने एवं उनको गुणवत्ता युक्त बनाने तथा खाद्यान्न का वितरण समता के तौर पर उदार बनाने जिससे आयात निर्यात की समस्या राष्ट्रों के बीच उत्पन्न न हो सके। आयात निर्यात के लिये एक मानक तय कर लिया जाय और मानकों के अनुरूप वस्तुओं का निर्यात आयात किया जाय। जिससे भविष्य में वितरण का समस्या उत्पन्न न हो।

10.अपेयकर असंतुलित खाद्य पदार्थों के वितरण पर रोक –

आवश्यक वस्तु अधि0 के द्वारा राज्य का दायित्व होगा कि वह अपेयकर असंतुलित खाद्य पदार्थों के वितरण पर पूर्ण रोक लगाता है तथा ऐसे वस्तुओं का विक्रय करने वाले के विरूद्ध न्यायालय संक्षिप्त विचारण द्वारा मामले को निष्पादित करता है। अपेयकर खाद्य पदार्थों के विक्रेता के विरूद्ध न्यायिक कार्यवाही राज्य स्वयं करती है यदि वे ऐसे पदार्थों का अपमिश्रण करके यदि विक्रय करते हैं।

11.मिलावटी वस्तुओं एवं तेलों आदि वितरण पर पूर्ण नियन्त्रण –

आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955, आवश्यक वस्तु (विशेष उपबन्ध) अधि0 1981 तथा अनुसूचित वस्तु वितरण आदेश 2004 आदि ने आवश्यक वस्तुओं का जमाखोरी, कालाबाजारी तथा मुनाफाखोरी करने वाले व्यक्तियों से और कीमतों में दुवृद्धि से अधिक प्रभावी तौर पर निपटने के लिये और उनसे सम्बन्धित या आनुवंषिक विषयों के लिये आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955 में अस्थाई अवधि के लिये संशोधन के रूप में कुछ विशेष उपबन्ध करने के लिये अधिनियम बनाये। यह अधि0 मिलावटी वस्तुओं एवं तेलों आदि वितरण पर पूर्ण नियन्त्रण एवं अंकुश बनायेगा।

3.4.2 सामाजिक दुर्घनायें (अप्रयोज्यता) –

कोई भी विनयम या अधिनियम अपने में पूर्ण नहीं होता क्यों शतप्रतिशत उद्दश्यों को नहीं पाया जा सकता जैसे आवश्यक वस्तु अधिनियमए 1955 एक उदाहरण है। जहाँ अधि0 अपने

उद्देश्यों को पाने में कुछ हद तक सफल रहा वही कुछ उद्देश्यों को प्राप्त करने में विफल भी रहा जिसे एक सामाजिक दुर्घटना या अधिनियम का अप्रयोज्यता माना जाता है।

(क) खाद्य पदार्थों मे अपमिश्रण

आवश्यक वस्तु अधि0 के उद्देश्य विफल का एक कारण खाद्य पदार्थों में अपमिश्रण भी है। क्योंकि वर्त्तमान नीतियां एवं सरकारों की उदारनीतियां तथा उद्योगपतियों एवं पूंजीपतियों द्वारा आवश्यकता से अधिक धन कमाने की उत्सुकता ने उन्हें गलत कृत्यों को करने के लिये उत्प्रेरित किया जिससे ऐसे पूंजीपति एवं उद्योगपति सरकार एवं अधिकारियों प्राधिकारियों को पैसा देकर ऐसे खाद्य पदार्थों में अपमिश्रण करने एवं उन्हें उस पर नियन्त्रण न लगाने आदि के लिये प्रेरित करता है। क्योंकि वर्तमान राजनीतिक परिवेश में उद्योगपतियों एवं पूजीपतियों का प्रशासन में विशेष सहयोग है जो कुछ हद तक खाद्य अपमिश्रण से सम्बन्धित है। जो एक सामाजिक दुर्घटना है।

(ख) पुलिस भ्रष्टाचार

अधिनियम की अप्रयोज्यता के रूप में पुलिस भ्रष्टाचार एवं उनके कृत्य की विशेष रूप से सहयोगी है। प्रशासन में पुलिस की भूमिका को महत्वपूर्ण माना जाता है यह कहा जाता है कि यदि राज्य में कोई भी अपराधिक कृत्य हुआ तो निश्चित ही उसकी जानकारी पुलिस को है लेकिन पुलिस व्यवस्था में भी घुसखोरी, लेन–देन एवं अपराध को रोकने आदि की में शिथिलता अर्न्तव्याप्त हो गयी है जिसके कारण सामाजिक दुर्घटना में वृद्धि हुयी।

(ग) अस्पतालों, दवा बनाने वाले कम्पनियों द्वारा नकली दवा का प्रयोग

आवश्यक वस्तु अधि0 निश्चित ही अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने में असफल हुआ हैं क्योंकि अस्पतालों में डाक्टरों की लापरवाही, कार्यों के प्रति शिथिलता एवं स्वच्छता की कमी आदि ने अस्पतालों को दयनीय अवस्था में खड़ाकर दिया है क्योंकि जहाँ अधिनियम का गुणवत्तपुर्ण वस्तुओं को वितरण करने, तथा जनस्वास्थ्य को विशेष ध्यान देने की थी। अब उसमें कमी का आ गयी। यहां तक की दवा बनाने वाली कम्पनियां भी नकली दवा बनाकर बाजार में लाकर असली दवा के रूप में अधिक दामों में वितरित किया जा रहा है। जो कि सामाजिक दुर्घटना का प्रतीक हैं

(4)आवश्यक वस्तुओ की जमाखोरी एवं कालाबाजारी

आवश्यक वस्तु अधि0 अपनी प्रयोज्यता को प्रदर्शित नहीं कर पा रही है क्योंकि वर्तमान शासन व्यवस्था में उद्योगपति प्रशासन से मिलकर वस्तुओं का जमाखोरी करना एवं वस्तुओं का पर्याप्त मात्रा में उपलब्धता के बावजूद भी बाजार में ना लाकर अधिक दामों में उतारने एवं विक्रय करके जनमत को त्रस्त कर दी है प्रशासन ऐसे कार्यों में अधिक दक्ष है क्योंकि उनके छोटे से बड़े तक ऐसे सभी अधिकारी भ्रष्टाचार में लिप्त होकर वस्तुओं का कालाबाजारी करके तथा उसमें अपमिश्रण करके अधिनियम के उद्देश्य को विफल किया और सामाजिक दुर्घटनाओं को जन्म दिया।

(5) मुनाफाखोरी

सामाजिक दुर्घटना के रूप में मुनाफाखोरी भी काफी हद तक सहायक है क्योंकि व्यापारियों एवं प्रशासन दोनों मिलकर अधिक धन कमाने के उद्देश्य से अधिक दामों में कम वस्तुओं को तौलना तथा उसमें अपमिश्रण करके वस्तुओं की गुणवत्ता का कम करना निश्चित ही मुनाफाखोरी को जन्म दिया है जो हम सामाजिक दुर्घटना में है।

(6) लेवल लगाकर आवश्यक वस्तु के मूल्यों में अत्यधिक वृद्धि

सामाजिक दुर्घटना के रूप में व्यापारियों का जनता से अधिक धन शोषण करने के आशय से आवश्यक वस्तुओं में अपने से अधिक मूल्य का लेवल लगाकर अधिक धन वसूलने आदि को बढ़ावा देकर अधि0 के उद्देश्य को प्रभावित किया है क्योंकि वह भी एक सामाजिक दुर्घटना है।

(7) उद्योगपतियों, राजनेताओं, व्यापारियों आदि की मिली भगत

सामाजिक दुर्घटना में उद्योगपतियों, राजनेताओं एवं व्यापारियों तीनों की तिगड़ी ने निश्चित ही लोककल्याणकारी राज्य के उद्देश्य को प्राप्त में एक बाधा पैदा कर दी क्योंकि इन तीनों का उद्देश्य अधिकाधिक धन अर्जन करना होता है न की स्वच्छ प्रशासन को चलाना, यह भी एक प्रकार सामाजिक दुर्घटना है।

(8) पेट्रोलियम उत्पादों की अन्तर्राष्ट्रीय कीमतों में उत्तरोत्तर हो रही वृद्धि

आवश्यक वस्तु अधि0 की सामाजिक दुर्घटना का एक सबसे बड़ा कारक पेट्रोलियम उत्पादों की अन्तर्राष्ट्रीय कीमतों में उत्तरोत्तर वृद्धि ने आवश्यक वस्तुओं के आयात निर्यात को प्रभावी किया जिसके कारण मालवाहन के आवागमन में अधिक कीमतों को अदा कर व्यापारी आवश्यक वस्तुओं का आयात करते थे यदि उनके विचार से वस्तुओं की कीमतों का निर्धारण नहीं होता

तो वे हड़ताल पर बैठ जाते थे जिसके कारण बाजार मैं वस्तुओं की कमी आ जाती थीं और वस्तुओं के दाम आकाश छूने लगते थे।

3.5 सारांश

आवश्यक वस्तुओं का नियम विनियम एवं विकास के संकेत एवं सामाजिक दुर्घटना, यह अधिनियम आवश्यक वस्तुओं के उपयोग पर अधिनियम की प्रयोज्यता को प्रदर्शित करता है। स्वतंत्रता के पाँच वर्ष बाद जब अधिनियम लाया गया उसका उद्देश्य क्या यह था कि जो भी आवश्यक वस्तुओं का वितरण राज्य द्वारा किया जाय उसको पर ध्यान में रखा जाय राज्य कभी भी किसी प्रकार से वस्तुओं का जमाखोरी, कालाबाजारी एवं मुनाफाखोरी पर नियन्त्रण लगाकर उसके सामाजिक उद्देश्य की पूर्ति किया जाय तथा किसी भी प्रकार से सामाजिक दुर्घटना पर अंकुश एवं नियन्त्रण कायम किया जाय।

3.6 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. श्रम एवं औद्योगिक विधि–सूर्य नारायण मिश्र
2. श्रमिक विधियां – डा0 इन्द्रजीत सिंह
3. औद्योगिक समाजशास्त्र – डा0 सुनील गोयल एवं संगीता गोयल
4. औद्योगिक मनोविज्ञान के मूल तत्व – प्रो0 सरयू प्रसाद चौबे
5. इन्डस्ट्रियल जुरिस्प्रडेन्स – महेश चन्द्र

3.7 सहायक उपयोगी पाठय सामग्री –

6. ए स्टडी आफ इण्डस्ट्रियल ला – जी0 एम0 कोठारी
7. इण्डस्ट्रियल रिलेशन्स – वी0 वी0 गिरि
8. लेबर प्राबलम्स इन इण्डियन इण्डस्ट्री – वी0 वी0 गिरि
9. राष्ट्रीय आयोग का प्रतिवेदन

3.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. आवश्यक वस्तु अधिनियम विनियम क्या है समझाइये ?
2. आवश्यक वस्तु अधिनियम का एतिहासिक परिपेक्ष्य बताइये?
3. आवश्यक वस्तु अधिनियम के अन्तर्गत अपराधों का संज्ञान लेने वाले अधिकारी को दण्ड देने की क्या–क्या शक्तियां है ? वर्णन करें
4. मुनाफाखोरी क्या हैं समझाइये ?

LL.M. PART- I

PAPER –Legal Regulation of Economic Enterprises

ब्लाक–3. नियंत्रण और जवाबदेही की समस्याएं (Problems of Control and Accountability)

ईकाई–1. व्यापक विनाशलीला और पर्यावरण अवनयन (पतन) : विधिक दायित्व और विधिक उपचार

इकाई संरचना

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 व्यापाक विनाशलीला एवं पर्यावरण पतन (भवनपन) का अर्थ एवं परिभाषा, पर्यावरण अवनपन के प्रकार।

1.3.1 व्यापाक विनाशलीला में सम्मिलित अन्तर्राष्ट्रीय पर्यावरणीय समस्या के भयावह परिणाम–

1.3.2 पर्यावरण अवनयन (पतन) के कारण।

1.4 पर्यावरण संरक्षण के विधिक दायित्व

1.4.1. पर्यावरण संरक्षण के विरुद्ध उपचार

1.4.1.1पर्यावरण प्रदूषण के विरुद्ध उपचार

1.4.2. पर्यावरण प्रदूषण के उपचार हेतु न्यायिक प्रक्रिया

1.5. सारांश

1.6 परिभाषिक शब्दावली

1.7 अभ्यासप्रश्नों के उत्तर

1.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1.9 सहायक उपयोगी पाठ्य सामाग्री

1.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

पर्यावरण संरक्षण और सुधार की समस्या वर्तमान समय में राष्ट्रों के समक्ष बड़ी समस्या है। क्योंकि पर्यावरण का संरक्षण एवं सुधार कना व्यक्तियों एवं राज्य का कार्य है। **भारत जैसे विकासशील देश में जहां पर्यावरण प्रदूषण गरीबी का कारण है वहीं विकसित देशों में पर्यावरण प्रदूषण अमीरी का कारण है।** भारत में गरीबी दूर करने के लिये औद्योगिक विकास के सिवाय अन्य कोई विकल्प नहीं है। जिसमें भारत अनेक गम्भीर समस्याओं से संघर्ष कर रहे हैं कि विधिक शासन प्रणाली में विद्यमान संसाधनों का विनाश किये बिना सामाजिक आर्थिक प्रकृति की विभिन्न प्रकार की मांगों के साथ अपने को समन्वित करना पड़ा। क्योंकि पर्यावरणीय विधि के विकाश को आर्थिक विकास और पोषणीय विकास में समन्वय करना जरूरी था। पर्यावरण में बढ़ता प्रदूषण राष्ट्रीय स्वास्थ्य स्तर में गिरावट और अनेक बीमारियों के कारण औद्योगिक उत्पादन में कमी के रूप में राष्ट्र की प्रगति को प्रमाणित कर रहा। भोपाल गैस काण्ड 2 अक्टूबर 1984, श्री रामफूड्स संयंत्र से ओलियम गैस, आदि व्यापक दुर्घटना ने लोगों के दिलों को द्रवित कर दिया क्योंकि हजार मासूम लोगों की इस दुर्घटना से जान गयी जिनका कोई दोष नहीं था। परिसंकटमय पदार्थों के बारे में पूर्णदायित्व के लिये, प्रतिकर के भुगतान के लिये नियंत्रण दायित्वाधीन बनाने के लिये लोकदायित्व बीमा अधिनियम 1991और राष्ट्रीय पर्यावरण अधिनियम 1995 पारित किया। जो मानव स्वास्थ्य, सम्पत्ति और पर्यावरण की क्षति से अनुतोष प्रदान करेगा।

दूर्घटना के मामले में जो पर्यावरणीय पदार्थ से सम्बन्धित क्रिया–कलाप के उत्पन्न होने पर कोई व्यक्ति जो उद्योग परिसंकटमय पदार्थों एवं खतरनाक रूप से ऐसे उद्योग में लगा है वहां व्यक्तियों एवं स्वास्थ्य को खतरा उत्पन्न कर रहा है प्रतिकर के लिये पूर्णदायित्व उसका होगा। पर्यावरण पतन (अवनयन) से जीवन की गुणवत्ता में ह्रास होने लगता है और उससे जीवन का लय (Life of Cycle) बदलने लगता है। और उसमें गतिरोध के परिणामस्वरूप विकास की प्रक्रिया उल्टी दिशा में मुड़कर अपने मार्ग को प्रशस्त करने लगती है। पर्यावरण के जैविक एवं अजैविक संघटकों का समुच्चय जब निवास की सुरक्षा में विफल होने लगता है तो जीवधारियों का जीवन संकट में पड़ने लगता है पर्यावरण के इसी बदलती स्थिति को पर्यावरण अवनयन (पतन) (Environment Degredetion) कहा जाता है। पर्यावरण पृथ्वी पर प्रकृति का सर्वोत्तम वरदान है। क्योंकि पर्यावरण ने पृथ्वी पर जीवन जगत का गौरव प्रदान किया है। लेकिन जब पर्यावरण को संरक्षण प्रदान नहीं किया जाता तब उसका अवनयन किया जाता है जैसे पर्यावरण, प्रदूषण वनविनाश, जबसंसाधनों का दोहन, तब वहां पर्यावरण पंगु हो जाता है। तब वहां पर्यावरण के खतरे उत्पन्न हो जाते हैं; जिसका परिणाम व्यापक विनाशलीला में परिवर्तित हो जाता है और इस पृथ्वी पर मानव जाति का प्रश्न चिन्ह जग जाता है कि इसका अस्तित्व पृथ्वी पर बचा रहेगा या नहीं क्योंकि लगतार प्राकृतिक विनाश लीला ने न केवल पर्यावरण को अपना अकाल बनाया बल्कि मानव भी उसी अकाल का शिकार हुआ। इस विनाशलीला के पीछे मानव जाति स्वयं एवं राज्य औद्योगीकरण के दौड़ में आगे बढ़ने विकास का परिणाम है, जिसमें मुख्य कारक, ओजोनपरत क्षरण, वैश्विक उष्मावृद्धि, हरित गृह प्रभाव, अम्लवर्षा, परिसंकटमय नाभिकीय पदार्थों से उत्पन्न खतरे, सामुद्रिक प्रदूषण आदि मुख्य है।

उससे संरक्षा करना, राज्य एवं मानव का कार्य है जो विधिक उत्तरदायित्व एवं उपचार के रूप में करना है।

1.2. उद्देश्य

स्वाथ्य एवं स्वच्छ पर्यावरण जीवन विकास तथा प्रदूषित पर्यावरण जीवन विनाश के द्योतक है। पर्यावरण प्रदूषण की समस्या मानव सभ्यता के विकास या आधुनिक युग की उपज है। कृषि एवं अग्नि के विकाश ने पर्यावरण प्रदूषण की समस्या जन्म दिया क्योंकि कृषि तकनीकी एवं औद्योगिकरण की प्रगति पर्यावरण प्रदूषणों को बढ़ाया है। पर्यावरण प्रदूषण से संरक्षण एवं सामंजस्य तथा संतुलन बनाना ही सफलता एवं एकता है। मानव पर्यावरण का सर्वाधिक गतिशील कारक है क्योंकि मानव के अनियंत्रित कार्य–कलाप से सम्पूर्ण जैवमण्डल की संरचना, भू संसाधनों भूपरिस्थैतिकी पर प्रभाव पड़ता है। जिसके कारक के रूप में–

1. **प्रदूषण**–भौतिक प्रदूषण, सामाजिक प्रदूषण,

2. **घटनायें एवं परम प्रकोप के रूप में**–प्राकृतिक प्रकोप–हरीकेन, टाइफून, ज्वालामूलखी, भूकम्प, बाढ़ एवं सूखा, वायुमण्डल उल्कापात आदि।

पर्यावरण प्रदूषण को बढ़ावा दिया जिसका परिणाम व्यापक विनाशलीला के रूप में मानव जाति का पृथ्वी पर प्रश्नचिन्ह लग जायेगा ऐसे विनाशलीला से बचने के लिये हम सभी राष्ट्रों को पर्यावरण प्रदूषण के भविष्य पर विचार करना जिसमें विचारों पर अमल करने की जरूरत होगी जिसके लिये विधिक दायित्व एवं विधिक उपचार की जरूरत होगी।

1.3 व्यापक विनाशलीला एवं पर्यावरण पतन का अर्थ एवं परिभाषा

प्रकृति में अद्भूत सामंजस्य एवं संतुलन होता है जिसे पर्यावरण की सफलता एवं एकता कहा जाता है। क्योंकि जैविक एवं अजैविक घटकों की अन्यान्याश्रित और परस्पर समाकलन के कारण पर्यावरण संतुलन बना रहता है। मानव के अनियंत्रित क्रिया कलाप सम्पूर्ण जैवमण्डल की संरचना, संसाधनों तथा भू पारिस्थैतिकी पर भी प्रभाव डाल रहे हैं। पारिस्थैतिकी संकट एवं तत्जनित पर्यावरण असंतुलन की जड़ में दो मूल कारक हैं, 1. जनसंख्या विस्फोट, 2. उर्जा। प्रकृति सभी जीवों का भरण–पोषण करती है वह मानव आवश्यकता की पूर्ति हेतु सक्षम है परन्तु मानव की लोलुपता की पूर्ति नहीं कर सकती है।

अर्थ–

पर्यावरण अवनयन से तात्पर्य किसी प्रदेश देश, या क्षेत्र के भौतिक पर्यावरण के एकल या कई संघटनों में उत्पन्न अवनतावस्था में को पर्यावरण अवनयन (पतन) कहा जाता है। पर्यावरण अवनयन से जीवन की गुणवत्ता में ह्रास होने लगता है और उससे जीवन का लय बदलने लगता है और गतिरोध के फलस्वरूप विकास की प्रक्रिया उल्टी दिशा में मुड़कर अवनति के मार्ग को प्रशस्त करती है जिससे पर्यावरण के जैविक अजैविक संघटकों का समुच्चय जब निवास ;िंइपजंजद्ध विफल होने लगता है तो जीवधारियों का जीवन संकट में पड़ने लगता है और इस पर्यावरण की इस स्थिति को पर्यावरण अवनयन म्दअपतवदउमदज क्महतंकंजपवद कहते हैं।

परिभाषाः Mahatama Gandhi-"The earth provides enough to satisfy every man isnced but not every man's greed."

कार्लमार्क्सः पर्यावरण ह्रास तभी होता है जबकि प्रकृति के प्रति शत्रुतापूर्ण व्यवहार किया जाता है पर्यावरण अवनयन की प्रक्रिया को इस प्रकार समझाया–

पर्यावरण प्रभाव
↓
पर्यावरण का बढ़ता दबाव
(अधिक भूमि उपयोग)
↓
पर्यावरण ह्रास
↓
परिस्थैतिकी की क्षति
या
पारिस्थैतिकी का असंतुलन

डी0के0 श्रीवास्तव–''भौतिक पर्यावरण में जीवमण्डल के जीवों पर जब प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है तब भौतिक पर्यावरण में इस प्रकार के मानव जनित परिवर्तनों का पर्यावरण अवनयन (पतन) कहा जाता है।''

पर्यावरण सन्तुलन में मानवीय हस्तक्षेप का परिणाम व्यापक विनाशलीलाः–

पर्यावरण सन्तुलन के खतरे प्राकृतिक एवं मानवीय दोनों क्रियाओं के कारण पैदा होते हैं। जिसमें मानवीय हस्तक्षेप पर्यावरण संतुलन का ज्यादा प्रभावित करते हैं जिसका परिणाम व्यापक विनाशलीला को प्रदर्शित करता है जो इस प्रकार है–

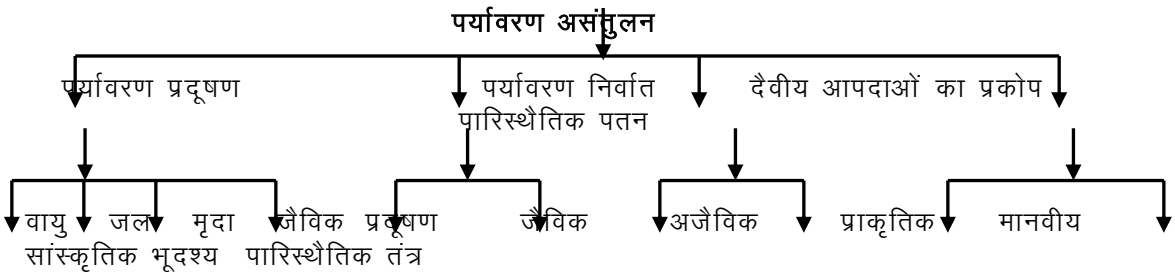

उपरोक्त डायग्राम पर्यावरण असंतुलन को प्रदर्शित करता है यही असंतुलन व्यापक विनाश लीला में परिवर्तित होता है। पर्यावरण अवनपन पर्यावरण प्रदूषण के समानार्थी होता हैं। क्योंकि दोनों का सम्बन्ध पर्यावरण में गुणवत्ता के ह्रास से होता है जिसका परिणाम ज्वालामुखी उद्भेदन, भूकम्प, वायुमण्डीय तूफान, बाढ़, सूखा, प्राकृतिक कारणों से वनाग्नि, हिमपात, भूस्खलनन आदि प्राकृतिक व्यापक विनाश लीला को प्रकट करता है।

पर्यावरण अवनयन (पतन) के प्रकार–पर्यावरण के कारकों तथा पर्यावरण की गुणवत्ता में ह्रास की मात्रा एवं स्तर के आधार पर पर्यावरण अवनपन को दो भागों में इस प्रकार विभाजित किया जा सकता है–

(1) चरम घटनायें तथा प्रकोप

(2) प्रदूषण

(1) चरम घटनायें तथा प्रकोप को उत्पन्न करने वाले कारकों के आधार पर पर्यावरण पतन के तीन प्रकार

(i) प्राकृतिक प्रकोपः–प्राकृतिक कारकों से उत्पन्न जैसे टारनैडो, हरीकेन, टाइफून, ज्वालामुखी, भूकम्प, बाढ़ तथा सूखा आदि। अन्य प्राकृतिक प्रकोपों के रूप में जो पृथ्वी के अन्तर्जात बलों द्वारा उत्पन्न होते हैं तथा इनका प्रभाव क्षेत्र पृथ्वी के स्थलीय सतह पर होता है जैसे ज्वालामुखी उद्भेदन, भूकम्प, धरातलीय सतह का उत्थान तथा अवतल, भूस्खलन आदि। वायुमण्डलीय प्राकृतिक प्रकोप के अन्तर्गत जीवमण्डलीय पारिस्थितिक तंत्र के जैविक एवं अजैवकि दोनों संघटनों पर पड़ता है जैसे–वायुमण्डलीय विद्युत विसर्जन, दावानल (वनों में जीवमण्डलीय विद्युत आग लगना) आदि। मानव जनित भौतिक प्रकोप के रूप में मानव के

क्रिया–कलापों के संचयी प्रभावों के कारण होती है जैसे सोद्देश्य वनों में आग लगाना, वृहदस्तीय भूमिस्खलन आदि। रासायनिक एवं नाभिकीय प्रकोप भी प्राकृतिक प्रकोप को बढ़ावा दे रहे हैं जैसे कारखानों से जानलेवा गैसों का अचानक प्रस्फोट, नाभिकीय विस्फोट आदि। मानवजनित जैविकीय प्रकोप के रूप में युद्धों में रोग कीटाणुओं का प्रयोग आदि।

(2) मानव कार्यों से उत्पन्न प्रदूषणः–मानव कार्यों से दो प्रकार के प्रदूषण होते है–

(a)भौतिक प्रदूषणः–मानवीय क्रिया–कलापों के कारण पर्यावरण में भौतिक/ अजैविक संघटकों की गुणवत्ता में गिरावट को भौतिकी प्रदूषण कहते हैं जैसे–मृदा प्रदूषण, सागरीय जल प्रदूषण, नदियों का प्रदूषण, झीलों का प्रदूषण, ओजोन परतों की अल्पता, कार्बनडाईक्साइड, वायु की गुणवत्ता में ह्रास आदि।

(b)सामाजिक प्रदूषणः–सामाजिक प्रदूषण का उद्भव भौतिक एवं सामाजिक कारणों से होता है–जैसे जनसंख्या विस्फोट, आर्थिक प्रदूषण के रूप में गरीबी, सामाजिक प्रदूषण के रूप में जातीय एवं साम्प्रदायिक दंगा–फसाद, चोरी डकैती, युद्ध आदि।

1.3.1 व्यापक विनाशलीला में सम्मिलित अन्तर्राट्रीय पर्यावरणीय समस्या के भयावह परिणामः–

व्यापार विनाशलीला में वैश्विक पर्यावरणीय समस्या मुख्य कारक हैं उसमें शामिल ओजोनपरत क्षरण की समस्या, वैश्विक उष्मावृद्धि एवं हरित गृह प्रभाव, अम्लवर्षा के भयावह परिणाम तथा व्यापक विनाशलीला को जन्म देंगे जिसका प्रभाव इस पृथ्वी पर मानव जाति पर प्रश्नचिन्ह लग जायेगा इसलिये ऐसे भयावह परिणाम एवं समाधान के प्रयासों से ही व्यापक विनाश से बचाया जा सकता है जिसके आवश्यक तथ्य इस प्रकार है–

1.ओजोन परत क्षरण के कारण कुप्रभाव एवं सुरक्षा के प्रयास

ओजोन एक गैस है जिसका रंग हल्का नीला गंध तीव्रतर होती है। ओजोन आक्सीजन का बदला रूप है। वह आक्सीजन से एक परमाणु ज्यादा है अर्थात आक्सीजन o_2 तथा ओजोन o_3 होता है। जब सूर्य की किरणें वायुमण्डल की आक्सीजन पर पड़ता है तो यह आक्सीजन ओजोन गैस में परिवर्तित हो जाती है। हवा में धीरे–धीरे विद्युत प्रवाह से भी ओजोन गैस उत्पन्न होती है। रक्षाकारी ओजोन पतर को ''ओजोन की छतरी'' का नाम दिया जाता है। वायुमण्डल में ओजोन दो विभिन्न परतों में पाया गया है सौंभमण्डल (ट्रांपोस्फीयर) समताप मण्डल (स्ट्रेटोस्फीयर) के नाम से जाना जाता है। जो पृथ्वी की सतह से 12 से 50 किमी0 की ऊँचाई पर स्थित है। वायुमण्डल में स्थित समस्त ओजोन की मात्रा का 90 प्रतिशत भाग समतापमण्डल तथा 10 प्रतिशत भाग क्षोममण्डल में पाया जाता है। इस मध्य पायी जाने वाली ओजोन को सामान्तया ओजोनपरत कहा जाता है। ओजोन अणु परावैगनी विकिरण की उर्जा से उत्प्रेरित होकर पुनः आक्सीजन अणु एवं परमाणुओं में विघटित होते रहते हैं जो पुनः उर्जा अवशोषित कर ओजोन अणुओं का पुनः निर्माण करते हैं।

इससे ओजोन परत निरन्तर प्राकृतिक संतुलन की दिशा में बने रहने की क्षमता रखती है ओजोन नाशक रसायनों के कारण यह क्षमता कुप्रभावित हुयी है।

ओजोन छिद्र क्लोरों फ्लोरो कार्बन द्वारा कारित होता है तथा ओजोनपरत की क्षीणता के कई कारण है 1. मानवीय कारण, 2. प्राकृतिक कारण, 3. रासायनिक कारण, 4. ज्वालामुखी उद्‌भेदन आदि ओजोन परत की तीव्रता से अनेक पर्यावरणीय असन्तुलन एवं विनाशकारी प्रभाव पड़ेंगे इससे 1. चर्म कैंसर प्रबल होने की संभावना बढ़ेगी, 2. आँखों को क्षति पहुंचायेगी, 2. शरीर की

प्रतिरक्षातंत्र कमजोर होगी, 4. फसलों के उत्पादन में गिरावट एवं वनों का ह्रास होगा आदि ओजोन परत की सुरक्षा के लिये अनेक अन्तर्राष्ट्रीय मानक एवं प्रयास किये जाने रहे हैं जैसे–

1.ओजोन परत संरक्षण पर वियना अभिसमय, 1985।

2.ओजोन परत संरक्षण पर हेलसिंकी घोषणा, 1989।

3.ओजोन परत क्षरित करने वाले तत्वों पर मान्ट्रियाल प्रोटोकाल, 1987, संशोधन, 1990।

इस प्रकार ओजोन परतसंरक्षण में जनमानस का सहयोग प्रान्त करके ही ओजोनक्षरण को बचाया जा सकता है नहीं तो उसका परिणाम व्यापक विनाशलीला होगा।

8.वैश्विक उष्मा वृद्धि, हरित गृह प्रभाव से अन्तर्राष्ट्रीय सुरक्षात्मक उपाय

वैश्विक उष्मा वृद्धि में ओजोन गैस सहायक होती है। ओजोन परत के छीजने की तरह वैश्विक उष्मा वृद्धि भी घातक है। वैश्विक उष्मा वृद्धि के कारण मौसम में परिवर्तन आता है मौसम बदलाव का सबसे बड़ा दोषी हरित गृह प्रभाव को माना जाता है। हरितगृह गैसों में कार्बन डाई आक्साइड, मिथेन, नाइट्रस आक्साइड, सल्फर डाइक्साइड, क्लोरो फ्लोरो कार्बन आदि सम्मिलित हैं। ग्रीन हाउस प्रभाव के कारण कुछ गैसे पृथ्वी के चारों ओर एक मोटा कम्बल या आवरण बना लेते हैं जो सूर्य की सारी उष्मा को पृथ्वी से बाहर नहीं जानै देती जिसके कारण रूकी गर्मी के फलस्वरूप औसत तापमान बना रहता है जिससे पृथ्वी पर तापमान बढ़ने लगता है।

हरित गृह प्रभाव से गैसों में अधिकता है एवं उत्सर्जन से पृथ्वी पर पाये जाने वाली वनो तथा कृषि की हरियाली एवं सामान्य जीवन को खतरा उत्पन्न हो जाता है जिससे मौसम में परिवर्तन परिलक्षित होने लगता है। ग्रीन हाउस गैसों में वृद्धि के कुप्रभाव के फलस्वरूप वैश्विक उष्मा में

वृद्धि के कारण विभिन्न क्षेत्रों में सूखा, बाढ़, तथा पर्वतों के ग्लेसियर पिघलने से जल स्तर में वृद्धि होती तथा समुद्रका जल बढ़ेगा जिसका भयावह परिणाम होगा भारत, बग्लादेश, चीन, इण्डोनेशिया, जलमग्न हो गये थे।

वैश्विक उष्मावृद्धि एवं हरित गैसों में वृद्धि के कुप्रभावः

1.जलवायु में परिवर्तन
2.समुद्री जलस्तर में वृद्धि

आदि से जलस्तर बढ़ने से समुद्री तूफान तटवर्ती क्षेत्रों में भारत तबाही मच जायेगी जल निकासी बन्द हो जायेगा तथा अतिवृष्टि एवं अनावृष्टि की संभावना बढ़ेगी तथ उर्जा श्रोतों एवं संसाधनों में कमी आयेगी। जलवायु परिवर्तन तथा तापमान परिवर्तन से कीटाणु जन्य रोग बढ़ सकते हैं। जो व्यापक विनाश का परिचायक होगा।

<u>वैश्विक उष्पा वृद्धि रोकने के अन्तर्राष्ट्रीय प्रयास–</u>

किये गये जो इस प्रकार हैः–

1. जलवायु परिवर्तन अभिसमय 1992, 2. क्योटो सम्मेलन 1997, 3. हेग सम्मेलन 2000, 4. बाली सम्मेलन (Cop. 13) 2007, 5. धारणीय विकास पर विश्व शिखर सम्मेलन जोहान्सवर्ग, 2002 आदि ने व्यापक विनाश लीला से बचाने में अपने अहम् भूमिका निभायी।

<u>3.अम्लवर्षा के भयावह परिणाम एवं अन्तर्राष्ट्रीय उपचारात्मक प्रयास</u>

अम्लीकरण की समस्या एक भीषण रूप को ग्रहण करती जा रही है। पर्यावरणीय प्रदूषण का वाहक वायु सल्फर, नाइट्रोजन आक्साइड, उड़ने वाले हाइड्रोकार्बन आदि के उत्सर्जन को वातावरण में दूर तक ढोते हुये ले जाता है। वे सल्फ्युरिक और नाइट्रिक अम्ल, अमोनियम लवण और ओजोन में बदल जाते हैं। वे अपने साथ सैकड़ों या हजारों किलोमीटर दूर

शुष्ककण, वर्षा, वर्फ, कुहासा और ओस के रूप में भूमि पर गिर पड़ते हैं, कल कारखानों, वाहनों और तेल शोधकों से निकला सल्फर आक्साइड हवा के माध्यम से घुलकर रासायिक अभिक्रिया द्वारा सल्फ्यूटिक अम्ल में परिवर्तित हो जाता है। यह पानी की बूंदों में घुलकर वर्षा जल के साथ धरातल पर आता है तथा अपने अम्लीय प्रभाव से जैवीय एवं अजैवीय तत्वों का क्षरण करता है इस प्रक्रिया को अम्लवर्षा का नाम दिया जाता है। यदि वर्षा के जल का सामान्य च्ह मान 5 होता है परन्तु सल्फर आक्साइड के मिलने से सल्फ्यूरिक अम्ल इसके मान को घटा देती है। जब वर्षा जल का च्ह मान 4 से कम होता है तो उसमें अम्लीयता बढ़ जाती है जो जैव एवं अजैव सभी के घाटक बन जाती है इसके प्रभाव निम्नलिखित होंगे–

1.तेजाबी वर्षा से जलप्रदूषण बढ़ता है तथा रहने वाले जीवजन्तु नष्ट हो जाते हैं।

2.तेजाबी वर्षा से मिट्टी की अम्लीयता बढ़ जाती है।

3.तेजाबी वर्षा से खेतों में बड़ी फसलों को भारी नुकसान पहुंचता है।

4.तेजावी वर्षा का वनो पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

5.तेजाबी वर्षा के कारण भवनों में संक्षारण के कारण क्षति होती है।

आदि व्यापक विनाशलीला का परिचायक है अम्लवर्षा की बहुचर्चित समस्या संयुक्त राज्य अमेरिका एवं इटली की रही है।

अम्लीय वर्षा पर नियंत्रण के लिये अन्तर्राष्ट्रीय प्रयास किये गये–

1.मान्ट्रियाल प्रोटोकाल 1985.

2.1991 में U.S.A. एवं कनाडा ने अम्लवर्षा कम होने पर करार किया।

4.अतिपरिसंकटमय (नाभिकीय) पदार्थों से उत्पन्न खतरे को कम करने का अन्तर्राष्ट्रीय प्रयास :

परमाणु सयंत्र निर्विवाद रूप से अति परिसंकटमय पदार्थ है। परमाणु विस्फोट (परमाणु दुर्घटना) पर्यावरण को बुरी तरह विनष्ट करते हैं। ये स्वास्थ्य के लिये अत्यन्त घातक होते हैं। बाध रेडियोधर्मी तत्वों के प्रभाव से विभिन्न तरह के कैंसर आदि रोग उत्पन्न होते हैं। परमाणु बम का परिणाम 1945 का हिरोशिमा एवं नागासाकी विभीषिका घटना ने मानव जाति पर प्रश्नचिन्ह लगा दिया। भविष्य में ऐसी दुर्घटना फिर न हो क्योंकि यह व्यापक विनाशलीला का परिणाम है क्योंकि चेरनोबिल परमाणु दुर्घटना का प्रभाव भारत में भी महसूस क्योंकि इस दुर्घटना से 2000 लोगों की मृत्यु हो गयी यह अमेरिकी रक्षा अधिकारी ने दावा किया जबकि इस घटना से यूक्रेन में 6000 से 8000 के बीच लोगों की मृत्यु हुयी।

अन्तर्राष्ट्रीय प्रयास ने परमाणु युद्ध के वैश्विक प्रभाव डाला जिसका उद्देश्य हमारा ''सामान्य भविष्य'' ने पर्यावरण और विकास पर विश्व आयोग को गठित किया। निरस्त्रीकरण और परमाणु सुरक्षा इसका मुख्य उद्देश्य है।

1.अन्तरिक्ष संधि 1966

2.व्यापक परमाणु परीक्षण निषेध संधि 1996

3.अफ्रीकीय परमाणु आयुद्ध मुक्त संधि0 1995

4.संयुक्त राज्य–सोवियत संघ सामरिक आक्रामक आयुध सीमा संधि (SALT-II) 1973

5.संयुक्त राज्य अमेरिका–सोवियतसंघ सामरिक आयुध न्यूनीकरण संधि (START-III) 1997

परमाणु दुर्घटना हेतु दीवानी दायित्व से शिकार लोगों के न्याय मिले यह विचारणीय प्रश्न है जिस पर कुछ अन्तर्राष्ट्रीय करार हुये जो दीवानी दायित्व से सम्बन्धित हैं जैसे–

1.अन्तर्राष्ट्रीय आणविक उर्जा एजेन्सी विपना परमाणु क्षति के लिये दीवानी दायित्व पद अभिसमय 1963।

2.परमाणु जलयानों के आपरेटरों के दायित्व पर ब्रूसेल्स अभिसमय, 1962 आदि प्रमुख रहे जो व्यापक विनाशलीला से बचाने में सहायक होंगे।

5.परिसंकटमय अपशिष्टों का अन्तर्राष्ट्रीय विनियमन एवं सामुद्रिक प्रदूषणों के कुप्रभाव एवं निवारणात्मक प्रयास–

विषैली और परिसंकटमय अपशिष्टों की वृद्धि और इसके द्वारा उत्पन्न दीर्घकालिन खतरे अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पर्यावरणीय समस्या उत्पन्न कर रहे हैं। पर्यावरण विधि के वैश्विक आयाम का एक उदाहरण सामुद्रिक प्रदूषण है। ये भी व्यापक विनाशलीला के एक उदाहरण है। उसे रोकने के लिये तेल प्रदूषण नुकसानी हेतु दीवानी दायित्व पर अन्तर्राष्ट्रीय अभिसमय 1969 में प्रावधान किया गया। सामुद्रिक विधि पर अभिसमय 1982 थी एक दस्तावेज है जो रोकने से सहायक होगा।

पर्यावरण अवनयन (पतन) के प्रमुख कारण–

पर्यावरण अवनयन (पतन) आुधनिकता की उपज है जिसके लिये मानव समाज की अनुक्रियाऐं (Activities) सबसे अधिक जिम्मेदार हैं। विकास एवं विनाश वर्तमान मानव प्रयास के दो पहलू हैं। मानव के अनियन्त्रित प्रयास तीव्रगति से पर्यावरण पतन को बुलावा दे रहे हैं। मानवजानित पर्यावरण पतन के भयावह रूप को देखते हुये आर0एम0 डासमैन ने कहा कि–मानव दौड़ हाथ में ग्रनेड लिये बन्दर के समान है कोई यह नहीं जानता है कि वह कब

ग्रेनेड से पिन खींच लेगा और विश्व तहस–नहस हो जायेगा।'' पर्यावरणपतन विभिन्न कारणों का सम्मिलित परिणाम है जिसके पतन मुख्य कारण इस प्रकार है–

1.जनसंख्या की बाहुल्यता एवं उसमें गुणोत्तर वृद्धि–

अत्यधिक जनसंख्या की अधिकता का प्रभाव प्राकृतिक संसाधनों पर पड़ रहा है जिसमें बढ़ती आबादी प्रकृति के प्रति प्रतिकूल व्यवहार कर रही है क्योंकि सीधा सम्बन्ध पर्यावरण पतन से है। विकासशील देश में जनसंख्या की अधिकता एवं संसाधनों की कमी, गरीबी, अशिक्षा, असंतोष को जन्म देती है। जो पर्यावरण पतन का कारण है। गरीबी विश्व पर्यावरण पतन का मुख्य कारक है। जनसंख्या की अधिकता पारिस्थितिकी असंतुलन को बढ़ाता है, जिसका परिणाम प्राकृतिक संसाधनों के असंतुलित कर देता है जिससे वायु, जल, मृदा, ध्वनि आदि प्रदूषण तो पनपते ही हैं साथ ही साथ बाढ़, सुखा, तमाम आपदायें उत्पन्न होती हैं जो पर्यावरण पतन का मुख्य कारण है।

2.औद्योगिक विकास की होड़ एवं संसाधनों का दुरूपयोग–

औद्योगिकरण, भारी मशीनीकरण ने प्राकृतिक संसाधनों को पूर्ण रूप से प्रभावित किया क्योंकि आर्थिक विकास एवं सामाजिक उन्नति ने औद्योगिक उन्नति को बढ़ाया लेकिन औद्योगिक इकाईयों से निकलने वाला कचरा, द्रवित जल, विषैली गैस आदि पर्यावरण पर विनाशकारी प्रभाव डाला।

3.नगरीकरणः–

औद्योगिकरण के कारण जहाँ नगरीकरण में तीव्र विकास हुआ वहीं पर्यावरण का संरक्षण न होकर बल्कि उसका पतन हुआ भवनों, सड़कों, गलियों, नालियों, वाहनों, कारखानों, शौचालय

आदि में अभूतपूर्व वृद्धि हुयी जिससे पर्यावरण प्रदूषण को बढ़ावा मिला जिससे घातक बीमारियाँ उत्पन्न हुयी। जिससे औद्योगिक क्षेत्रों में रहने वाले लोगों को तपेदिक, कैंसर, दमा, पेचिस, आदि में वृद्धि हुयी। बड़े शहरों की मनिल बस्तियों में रहने वाले में एड्स रोगी अधिक पायेंगे जो नगरीकरण का परिणाम है।

4.तकनीकीकरण एवं वैज्ञानिक प्रौद्योगिकी का विकासः–

आधुनिक प्रौद्योगिकीकरण एवं तकनीकीकरण, वैज्ञानिक प्रौद्योगिकी विकास आदि ने पर्यावरण संकट को बढ़ा दिया है। कृषि क्षेत्रों में तकनीकीकरण के प्रभावों से उर्वरता दिन प्रतिदिन क्षीण होता जा रही है। उद्योगों में ध्वनि प्रदूषण, जलप्रदूषण बढ़ रहे हैं और नाभिकीय उर्जा एवं तकनीकी विकास से रेडियोधर्मिता का कुप्रभाव पड़ रहा है। रासायिक हथियारों का प्रयोग पर्यावरण में विष घोल रहा है। विज्ञान एवं तकनीकी का प्रयोग का प्रभाव केवल स्थलीय पारिस्थैतिकीय संकट नहीं पैदा करता है बल्कि अन्तरिक्ष पर भी प्रभाव डालता है। क्योंकि अन्तरिक्ष में राकेट टेक्नोलाजी ओजोन परत की अखण्डता को नष्ट कर देते हैं जो पृथ्वी के जीवित अंगियों को घातक पराबैगनी किरणों से बचाती है। प्रौद्योगिकरण एवं औद्योगीकरण ने प्राणघातक संयंत्रो का विकास किया जिसका परिणाम **भोपाल गैस त्रासदी 1984, चेरनोबिल नाभिकीय विनाश 1986, जापानी नाभिकीय घटना 2011 मुख्य रहा।** आदि ने पर्यावरण को पूर्ण रूप से प्रभावित किया।

5.अत्यधिक ऊर्जा का प्रयोगः–

कोयला, पेट्रोलियम, गैस जिसे ऊर्जा का स्रोत कहा जाता है आदि की विषैली गैस निकलने से वायुमण्डल को प्रदूषित किया जिससे पर्यावरण सन्तुलन को पंगु बना दिया। जलाऊ लकड़ी के

प्रयोग के कारण पर्यावरण संकट बढ़ता जा रहा है जिससे बेसमय में बरसात एवं बेसमय में ठण्डी पड़ती है जिससे मानवीय जीवन प्रभावित होता है।

6.अनियोजित विकास (Unplanned Development)

विकास के युग में असंतुलित नगर विकास एवं औद्योगिकरण ने पारिस्थैतिकीय संतुलन को बिगाड़ कर पर्यावरण को खतरा उत्पन्न कर दिया है। जिसमें बहुउद्देशीय नदी घाटीपरियोजनाओं का अनियोजित विकास पर्यावरण संकट का कारण बनता जा रहा है। जिसमें टिहरी बांध परियोजना ने भूकम्प सक्रियता तथा बांध स्थल क्षेत्र में दरार का खतरा तो बनाया लेकिन 32000 लोगों को विस्थापित भी किया।

7.असीमित खनन

पृथ्वी शस्य श्यामला ही नहीं बल्कि यह खनिज एवं रत्नगर्भा भी है। इसके गर्भ में लोहा, मैगनीज, जस्ता, तेल, पेट्रोलियम, कोयला का खनन किया जाता है। खनन प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से मानव स्वास्थ्य, कृषि, भूमि वनस्पतियों, मिट्टी की गहनता एवं उर्वरकता पर प्रभाव डालता है। खनन का परिणाम, भूस्खलन, होता है खाने धस जाती है पर्यावरणीय समस्या उत्पन्न होता है।

8.यातायात के वाहनों में अभिवृद्धि

यातायात से औद्योगिकरण में बेतहासा वृद्धि हुयी उससे स्कूटर, मोटरसाइकिल, आटोरिक्शा, मोटरगाड़ी, रेलव जलपोत आदि के गैस एवं धुआं ने वायुमण्डल को प्रदूषित कर दिया यहाँ तक धुआंनिहित सीसे के कण श्वांस लेने के माध्यम से शरीर में पहुंचकर अनेक रोगों को जन्म

दिया। वायुयानों से निकले धुओं से ऊपरी वायुमण्डल को अपार क्षति हो रही है क्योंकि यह ओजोन परत को क्षीण कर देती है जो पर्यावरण पतन को बढ़ावा देती है।

9.कृषि विकास

जनसंख्या वृद्धि के कारण से कृषि उत्पादकों में वृद्धि आवश्यक होती है। परन्तु इसके कारण पर्यावरणीय समस्या भी उत्पन्न होती है। क्योंकि स्वथ्य मृदा स्वास्थ पर्यावरण एवं संतुलित पर्यावरणीय व्यवस्था को बनाये रखती है।

1.5 पर्यावरणीय संरक्षण के विधिक दायित्व

(क) परिसंकटमय पदार्थों के बारे में पूर्ण दायित्वः भुगतान का दायित्व

पर्यावरण संरक्षण का केवल भारत की समस्या नहीं बल्कि विश्व स्तर पर विशिष्टतः परिसंकटमय पदार्थों के रिसाव या विस्फोट से महाविनाशकारी परिणामसे दुर्घटनायें घटित हुयी। जिसका उदाहरण भोपाल गैस काण्ड 1984, गैस रिसाव से 2000 निर्दोष व्यक्तियों की जाने गयी और बचे हुये 1 लाख लोग अन्धे हो गये, 1985 में श्रीराम फुड़स संयंत्र से दिल्ली में ओलियम गैस रिसाव की दुघर्टना ने मानव समाज को द्रवित कर दिया क्योंकि यह दुघर्टना सरकार को कानून बनाने के लिये बाध्य की और औद्योगिक परिसंकटमय संयंत्रों से घटित दुघर्टनाओं के मामले में अनुतोष के दायित्व से कोई बच नहीं सकता न्यायालय में यह निर्णीत किया कि उच्चतम न्यायालय में वह वाद **एम0सी0 मेहता बनाम भारतसंघ** के मामले मैं निर्णीत किया कि ओलियम गैस रिसाव के मामले में परिसंकटमय पदार्थों से व्यवहार करने वाले संयंत्रों से उत्पन्न खतरों के लिये सरकार दायित्वधीन होगी। **रायलैण्ड बनाम फ्लेचर** में 'कठोर दायित्व' का सिद्धान्त अपनाया गया **पूर्णदायित्व इसका अपवाद** है लेकिन खतरनाक परिसंकटमय पदार्थों

से कारखाने के आसपास कार्य करने वाले व्यक्तियों को खतरा उत्पन्न करता है भले ही वह युक्तियुक्त सावधानी बरती हो क्षति उपेक्षा के बिना कारित हुयी है। वह अत्रुटिपूर्ण सिद्धान्त के आधार पर प्रतिकर भुगतान के लिये दायी होगा।

चरनलाल साहू बनाम भारतसंघ AIR SC 1990-

SC ने भोपाल गैस त्रासदी मामले में निर्णीत किया कि परिसंकटमय पदार्थों और खतरनाक संभाव्यता वाले उद्योगों के अनुसरण में दुर्घटना के शिकार व्यक्ति न्यूनतम प्रतिकर के लिये दायी होंगे और न्यायालय ने तीन सुझाव दिये।

1.अत्रुटि का सिद्धान्त–उद्देश्य–मानव स्वास्थ्य, सम्पत्ति, पर्यावरण क्षति से शीघ्र अनुतोष।

2.विशेष फोरम की स्थपना–उद्देश्य–औद्योगिक मामलों में शीघ्र निस्तारण एवं पर्यावरण प्राधिकरण की स्थापना।

3.विशेष अनुतोष प्रदान करना।

लोकदायित्व अधिनियम 1991 प्रथम विधायी प्रयास है जो अत्रुटि के सिद्धान्त को विधिक आधार से हटाकर सांविधिक प्रास्थिति प्रदान की। वहीं दूसरी ओर पर्यावरण संरक्षण अधिनियम 1986 आदि मुख्य है।

(ख)पर्यावरण संरक्षण एवं सतत् पोषणीय विकास में न्यायालय का दायित्वः–

मानव गरिमा के साथ जीने के अधिकार के साथ स्वच्छ एवं स्वस्थ पर्यावरण का अधिकार मूलाधिकार का एक भाग बन गया है। विकास एवं पर्यावरण की समस्या यह है कि भारत एक विकासशील देश है वहां गरीबी बड़ा प्रदूषक है। देश की पर्यावणीय विधि के अन्तर्गत पर्यावरण नियंत्रण एवं निवारण का दायित्व केन्द्र एवं राज्य सरकरों या उनके द्वारा गठित अभिकरणों को

है। पर्यावरणीय विधियां अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिबधता के रूप में पारित की गयी जिसमें यदि केन्द्र या राज्य सरकारें पर्यावरण प्रदूषण की संरक्षा में असफल रहते हैं या उसका उल्लंघन करते हैं तो न्यायालय उन्हें अधिकारिता के अन्तर्गत दण्ड प्रदान करेंगे। चाहे उनके कृत्य अपराधिक हो या अपकृत्यात्मक हो अधिनियम के प्रावधानों के विरुद्ध कार्य करने पर वे दायी होंगे।

न्यायालय पर्यावरणीय संरक्षण एवं सतत् विकास में अपनी भूमिका निम्नलिखित तरीकों से निभायेगीः–

1.न्यायालय का सरकारी नीति की वैधकरणीय भूमिका

2.न्यायालय की सरकारी नीति की अवैधकरणीय भूमिका

3.पोषणीय विकास हेतु समन्वयकारी दृष्टिकोण

4.भारतीय संविधान का अनुच्छेद 21 में प्राण दैहिक स्वतंत्रता का विस्तार कर पर्यावरण उपचार

5.न्यायिक गतिशीलता एवं सृजनशीलता

वाद–1. मेनका गांधी व0 भारतसंघ–पर्यावरणीय संरक्षण में राज्य के नीति निर्देश तत्वों, मूल कर्तव्यों को आर्थिक बनाने के लिये राज्य कार्य करेगा।

2.एस0 जगन्नाथ व0 भारत संघ

3.गंगा प्रदूषण वाद मामले आदि मामलों में न्यायालय में पूर्व सावधानी के सिद्धान्त प्रदूषक भुगतान करें का सिद्धान्त, हरित पीठ एवं पर्यावरण संरक्षण निधि का गठन आदि न्यायि नवाचार (innovation) किया गया।

(B)वैश्विक पर्यावरणीय संरक्षण में अन्तर्राष्ट्रीय प्रयास एवं विधिक दायित्वः–

अन्तर्राष्ट्रीय पर्यावरणीय विकास के प्रति असावधानी ने पोषणीय पर्यावरण विकास की न्याय की संकल्पना को जन्म दिया। औद्योगिकरण एवं आर्थिक विभाग ने पर्यावरण पर बड़ा घातक प्रभाव डाला क्योंकि इससे हवा, पानी, भूमि जिन पर हमारा जीवन निर्भर है प्रदूषित हो गया है एवं पर्यावरणीय संकट पैदा हो गया है क्योंकि प्रदूषण का सबसे बड़ा स्रोत गरीबी है उसको संरक्षण देने के लिये 1972 में स्टाकहोम सम्मेलन में स्वर्गीय प्रधानमंत्री इन्दिरा गांधी ने कहा कि समृद्धिशाली देश चाहे विकास को पर्यावरण के विनाश का कारण समझे, हमारे लिये यह रहन–सहन के पर्यावरण को सुधार करने, खाद्य सामग्री उपलब्ध कराने, पानी स्वच्छता, आश्रय का प्रश्रय देने, रेगिस्तानियों को हरा भरा करने एवं पहाड़ों को रहने योग्य करने का प्राथमिक साधन है। पर्यावरण एवं विकास मं समन्वय स्थापित करना पोषणीय विकास (Sustainable Development) का लक्ष्य है। क्योंकि भी राष्ट्रों में पर्यावरण संरक्षण के प्रति प्रयास एवं उल्लंघन करने वाले को दण्डित करना ही विधिक दायित्व है जो इस प्रकार है–

1.अन्तर्राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी विकास की वैश्विक समस्या और उसके समाधान के लिये प्रयास एवं विधिक दायित्व।

2.वैश्विक सीमापार प्रदूषण की समस्या और उसके समाधान के लिये उपचारात्मक उपाय।

3.पर्यावरण के क्षेत्र में न्यछण्व्य की कार्यवाहियों पर्यावरण संरक्षण तथा सुधार।

4.पर्यावरण संरक्षण एवं विनियमन तथा संरक्षण के लिये अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग।

5.अम्लवर्षा एवं औद्योगिकरण से वैश्विक पर्यावरणीय समस्रूा और उसके समाधान के लिये अन्तर्राष्ट्रीय प्रयास।

6.भूमण्डलीय उष्मा वृद्धि, हरितगृह प्रभाव एवं अन्तर्राष्ट्रीय सुरक्षात्मक उपाय

7.सामुद्रिक प्रदूषण के दुष्प्रभाव एवं निवारण हेतु प्रयास।

8.मानव पर्यावरण प्रदूषण से उत्पन्न वैश्विक समस्या एवं उससे बचाव आदि।

(घ)न्यायिक सक्रियतावाद एवं कार्य योजना तथा तथा जैव विविधता संरक्षण से विधिक दायित्वः–

न्यायिक सक्रियतावाद अकर्मण्य नहीं बल्कि सकर्मण्ययुक्त है। इसकी परिकल्पना मामले को सामाजिक तस्वीर के अनुसार मिटाने की होगी। न्याय का विचार व्यक्तियों के अधिकारों तक परिसीमित नहीं रखा गया है बल्कि इसका विस्तार न्यायिक एवं सक्रियतावाद सामाजिक आर्थिक क्षेत्र तक विस्तारित है। जहां एक ओर प्रदूषण के निवारणर्ण पर्यावरण के संरक्षणार्थ अधिनियम और नियमावलियों का विधान किया गया है वहीं दूसरे ओर न्यायपालिका न्यायिक निर्णयों के माध्यम से न्यायिक सक्रियता प्रदर्शित की।

ओम गाविन्द सिंह व0 शांतिस्वरूप के वाद में SC ने बेकरी के संचालन पर प्रतिबन्ध लगाया।

1.4.2.पर्यावरण संरक्षण के विधिक उपचार

पर्यावरणीय प्रदूषण बहुआयामी बनता जा रहा है। इससे न केवल व्यक्ति एवं समूहों को ही क्षति कारित हो रही है बल्कि पारिस्थैतिकी पतन को भी खतरा उत्पन्न हो रहा है। पर्यावरणीय प्रदूषण के विरुद्ध उपचार पहले से ही उपलब्ध है लेकिन उसका स्वरूप प्रभावकारी एवं उपचारात्मक पर्याप्त रूप से नहीं था। उसके सम्बन्ध में कई विधियां पहले से बनी थी जैसे–

1.पर्यावरणीय कामन विधि–

अधिनियमित विधि, सांविधिक विधिक निर्णयत्र विधि आदि।

पर्यावरणीय विधि द्वारा पर्यावरण प्रदूषण के विनियमन एवं नियंत्रण हेतु प्रशासकीय अभिकरण

के निर्माण किये गये हैं। पर्यावरण प्रदूषण को समाप्त करने में दीवानी उपचार प्रदान किये गये जो इस प्रकार हैं–

1.प्रदूषक के विरुद्ध अपकृत्य सम्बन्धित कार्यवाही विधि

2.अधिकरणों के विरुद्ध रिट याचिका

3.नागरिक वाद आदि

यदि लोकउपताप है तो अपराधिक विधियों की कार्यवाहियां की जायेगी पर्यावरण प्रदूषण के विरुद्ध उपचार निम्नलिखित इस प्रकार है।

1.पर्यावरण प्रदूषण के विरुद्ध उपचार–

पर्यावरणीय प्रदूषण के विरुद्ध निम्नलिखित विधियों में उपचार प्रदान किये गये हैं जो इस प्रकार है–

(क)अपकृत्यात्मक विधि में उपचार–जिसमें उपशमन, नुकसानी, व्यादेश, उपताप, उपेक्षा, अतिचार कठोर दायित्व।

(ख)सांविधिक उपचार–आपराधिक अभियोजन, दण्डादेश, व्यादेश इत्यादि।

(ग)संवैधानिक उपचार–परमादेश, प्रतिषेध, उत्प्रेषण और प्रतिकर,

(घ)अन्य विशिष्ट उपचार–अपराधिक अभियोजन, प्रतिकर, दण्ड, आदि।

(क)अपकृत्यात्मक विधि में उपचार–भारत के अपकत्यात्मक विधि में प्रदूषण के विरुद्ध उपचार प्राप्त है। यह तब तक जारी रहेगा जब तक इसे संशोधित एवं परिवर्तित नहीं कर दिया जाता है। इसका आधार न्याय, साम्या, शुद्ध अन्तःकरण है। अपकृत्यात्मक विधि को भारतीय न्यायालय

द्वारा स्वीकार्य किया गया है और भारत में लागू है। अपकृत्यात्मक विधि में उपचार दो प्रकार के हैं–

1.नुकसानी, 2. व्यादेश। अपकृत्य में उपताप के उपचार कई प्रकार के होते हैं (1). उपेक्षा हेतु उपचार, (2). अतिचार हेतु उपचार, (3) कठोर दायित्व का उपचार (4) पूर्णदायित्व का उपचार। इन अपकृत्यों के लिये सिविल उपचार प्राप्त है उषावेन व **भाग्यलक्ष्मी मंदिर–**उपकृत्य में उपताप को अनुयोज्य लेने के लिये यह आवश्यक है। **1. अपकृत्यपूर्ण कृत्य** हो, 2. दूसरे को नुकसानी हानि क्षति। उपताप दो प्रकार की होती है–1. प्राइवेट उपताप, 2. लोक उपताप। लोक उपताप का अर्थ सामान्य लोगों के सामूहिक अधिकारों में अयुक्तियुक्त हस्तक्षेप करना है। यह अपकृत्य एवं अपराध दोनों है इनके तीन उपचार हैं–1. अपराधिक अभियोजन, 2. लोक उपताप हटाने के लिये अपराधिक कार्यवाही या दीवानी कार्यवाही।

प्राइवेट उपताप–प्राइवेट उपताप से तात्पर्य किसी व्यक्ति द्वारा किसी दूसरे व्यक्ति या व्यक्तियों की सुख–सुविधा, स्वास्थ्य अथवा सम्पत्ति में किये गये अयुक्तियुक्त हस्ताक्षेप से है।

उपताप के मामले में यह सिद्धान्त लागू है–ैपम नजमतम जनव नज ंजपमदनउ दवद संमकेष (तुम अपनी वस्तु का प्रयोग इस तरह करों कि अन्य वस्तु को हानि न पहुंचे) पर्यावरणीय क्षति के मामले में पीड़ित पक्षकार अपकृत्य विधि के अन्तर्गत नुकसानी के लिये क्षतिपूर्ति का दावा कर सकता है। व्यादेश में लिये वाद ला सकता है अथवा दोनों कर सकता है। व्यादेश एक ऐसी न्यायिक प्रक्रिया है जिसके द्वारा किसी पत्रकार को कोई विशेष कार्य करने या न करने का आदेश दिया जाता है। यह स्थायी व्यादेश एवं अस्थायी व्यादेश होता है। वाद–**1. एम0सी0**

मेहता व0 भारत संघ, 2. राइलैण्ड्स व0 फ्लेचर, 3. यूनियन कारबाइड कारपोरेशन का भात संघ।

(II)सांविधिक उपचार (Statutory Remedies):-

पर्यावरणीय प्रदूषण के सम्बन्ध में उपचार का प्रावधान भारत दण्ड संहिता एवं आपराधिक दण्ड संहिता में प्रदान किया गया है। जो इस प्रकार है–1. आपाराधिक विधि में उपचार के रूप में भारती दण्ड संहिता की धारा 268–290 तथा आपराधिक (Cr. P.C.) की धारा 133 में उपबन्धित है लोक उपताप कारित करने पर उसके उपशमन एवं नियंत्रण के लिये भा0द0सं0 की सपठित धारा 268 से 290 तक यदि उल्लंघन होता है तो उपचार नागरिकों को प्रान्त यदि सामाजिक हित प्रभावित हुआ है जिसमें ध्वनि, दुर्गन्ध, अस्वास्थकर दशायें आदि सम्मिलित है। भा0द0सं0 की धारा 268 में उपबन्धित है कि वह व्यक्ति लोक उपताप का दोषी होगा जो कोई ऐसा कार्य करता है या किसी ऐसे अवैध लोप का दोषी है, जिससे लोक को या जनसाधारण को जो आस पास रहते हैं उन्हें कोई क्षति संकट, या क्षोभ कारित होने की संभावना होना अवश्यंभावी हो। भा0द0सं0 की धारा 263 से 271 तक ऐसे अपेक्षापूर्ण कृत्य जिससे संकटमय रोग पर संक्रमण फैलाने का भय, धारा 277 में जल प्रदूषण रोकने, उपेक्षापूर्ण अग्नि, ज्वलनशील, पदार्थों के आचरण (धारा–284–286), आपराधिक दण्ड संहिता, 1973 लोक उपताप के विरुद्ध कार्यवाही जिला मजिस्ट्रैट, सब डिविजनल मजिस्ट्रेट, पुलिस अधिकारी आदि करेंगे। धारा 133 में वे ऐसे लोक मार्गों, जल मार्गों के विषय में विवाद के निपटारे की कार्यवाही आदि करेंगे। विशिष्ट विधियों के रूप में जल (प्रदूषण निवारण नियंत्रण) अधिनियम 1974, वायु (प्रदूषण निवारण अधिनियम) 1981, पर्यावरण संरक्षण अधिनियम 1986, आदि प्रदूषण।

(III)संवैधानिक उपचार Remedies Under the Constitution:-

पर्यावरणीय उपचार भारतीय संविधान के अनु0 48।ए 51। (G), अनु0 21 में उपबन्धित है। भारतीय संविधान की विशिष्टता है कि यह राज्य एवं नागरिकों पर कर्तव्य अधिरोपित करता है। अनु0 48। में राज्य का कर्तव्य होगा कि पर्यावरण की संरक्षा तथा उसमें सुधार करने और वन तथा वन्य जीवों की रक्षा करने का प्रयास करेगा। अनु0 5.1.। (छ) मूलकर्तव्य है कि–भारत के प्रत्येक नागरिक कर्तव्य होगा कि वह प्राकृतिक पर्यावरण की, जिसके अन्तर्गत वन, झील, नदी और वन्यजीव है, रक्षा करें, उसका संवर्धन करें तथा प्राणि मात्र के प्रति दयाभाव रखे। संविधान के अनु0 21 में उपबंधित है कि–राज्य किसी व्यक्तियों को उसके प्राण या दैविक स्वतंत्रता के अधिकार से विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार वंचित करेगा अन्यथा नहीं। दैहिक स्वतंत्रता के अधिकार में मानवगरिमा के साथ जीने का अधिकार विकासित कर स्वस्थ्य पर्यावरण शुद्ध हवा, स्वच्छ जल आदि का मूलाधिकार प्राप्त है। जिसे संवैधानिक रिट याचिका द्वारा अनु0 226 हाईकोर्ट, अनु0 32 उच्चतम न्यायालय को यह अधिकार प्राप्त है।

1.4.2. पर्यावरण प्रदूषण उपचार हेतु न्यायिक प्रक्रिया

प्रौद्योगिकरण एवं औद्योगिकरण के कारण पर्यावरण प्रदूषण से सम्बन्धित नुकसानी के दायरे में वृद्धि हो गयी है। लोकहित वाद के माध्यम से कमजोर वर्गों की सहायता प्रदान करना न्याय का समान अवसर प्रदान करने का प्रयास किया जा रहा है। जिसे व्यथित पक्षकार वाद संस्थित करके निम्नलिखित प्रक्रिया के द्वारा करेगा–

1.नागरिकवाद (C.P.C. धारा 91) लोक न्यूसेन्स को रोकने के लिये कोई भी व्यक्ति, महाधिवक्ता की लिखित सम्मति में वाद लाकर प्रदूषण को रोक सकता है।

पर्यावरण संरक्षण (अधिनियम) 1986 के अन्तर्गत नागरिक वाद

2.प्रतिनिधि या सामूहिक वाद (C.P.C. O.I.R.-8)

लोकहितवाद–लोकहित वाद विधिक सहायता क्रांति का एक हथियार है जिससे न्याय को गरीबों की पहुंच के भीतर किया जा सके। सामाजिक न्याय लोगों को देय है।

5.पत्रवाद के माध्यम से पर्यावणीय प्रदूषण उपचार का प्रयासः–

वाद 1. वैल्लोर सिटीजन्स वेल्फेयर फोरम 90 भारत संघ

2.रतलाम म्यूनिसपल व0 बार्धीचन्द

3.एस0पी0 गुप्ता व0 भारत संघ

1.5 सारांश

मानव गरिमा के साथ जीवन जीना स्वच्छ एवं स्वस्थ पर्यावरण का अधिकार मूलाधिकार का अंग बन गया है। विकास एवं पर्यावरण में सामंजस्य बनाये रखना एक निरन्तर जारी प्रक्रिया है। विकास की गति एवं उसके क्रियाकलाप इतने ज्यादा नहीं बढ़ने चाहिये की आने वाली पीढ़ी के लिये कुछ न बचे। सामान्यतया यह माना जाता है कि पर्यावरण विकसित देशों की समस्या है न कि विकासशील देश की समस्या है। जबकि भारत एक विकासशील देश है यहां मुख्य समस्या विकास है। परन्तु यह भी सत्य है कि गरीबी सबसे बड़ा प्रदूषक है भारत में औद्योगिकरण एवं परिसंकटमय पदार्थों से सम्बन्धित उद्योगों को लगाये जाने के कारण पर्यावरणीय समस्या उत्पन्न हो रही है। अतः औद्योगिकीकरण के विकास के साथ पर्यावरण संरक्षण को इस प्रकार बनाया रखा जाय कि वह अपने व्यापक विनाश लीला का रूप न धारण

कर सके जिसमें केन्द्र एवं राज्य सरकारों का विधिक दायित्व होगा कि ऐसे करने वाले को रोके। यदि वह स्वयं असफल होते न्यायालय उन्हें भी दण्डित करेगा।

1.6.परिश्रामिक शब्दावली

1. वैश्विक उष्मा वृद्धि–भूमण्डलीय ऊष्मा की अधिकृत।
2. परिसंकटमय पदार्थ–खतरनाक पदार्थ।

1- अनुक्रियाऐं Activities कियाये Activities

5. नवाचार Innovation शुभारम्भ
6. अवनयन–पतन

1.7.अभ्यास प्रश्नों के उत्तर–

प्रश्न.1. पर्यावरण अवनयन का अर्थ एवं परिभाषा से संक्षेप में समझायें?

प्रश्न 2. पर्यावरण अवनयन के प्रकार को संक्षेप में समझायें?

प्रश्न 3. पर्यावरण अवनयन से व्यापक विनाशलीला में सहायक नृत्य को समझायें?

1.8.संदर्भग्रन्थ सूची

1.पर्यावरण एवं पर्यावरणीय संरक्षण विधि की रूपरेखा डॉ0 अनिरुद्ध प्रसाद

2. पर्यावरण विधि–डॉ0 जय जय राम उपाध्याय

3. पर्यावरण विधि–डॉ0 सी0पी0 सिंह

1.9. सहायक उपयोगी पाठय सामग्री

1. वर्ल्ड रेलिगन एण्ड इनवाय मैण्ट–डॉ0 ओ0पी0 द्विवेदी

2. पारिस्थतिकीय विकास एवं पर्यावरण भूगोल–पी0एस0 नेगी

3. राइट टू लिवलीहूड इनवायर्मेन्टल प्रोक्टेशन–डॉ0 ए0एन0 चक्रवर्ती

1.10.निबन्धात्मक प्रश्न

प्र.1. पर्यावरण अवनयन (पतन) के प्रमुख कारण को समझाये?

प्र.2. व्यापक विनाशलीला में सम्मिलित अन्तर्राष्ट्रीय पर्यावरणीय समस्या के भयावह परिणाम में शामिल तत्वों को बताये?

प्र.3.पर्यावरण संरक्षण में विधिक दायित्व एवं विधिक उपचार को स्पष्ट करें?

LL.M. PART- I

PAPER –Legal Regulation of Economic Enterprises

ब्लाक–3. नियंत्रण और जवाबदेही की समस्याएं (Problems of Control and Accountability)

ईकाई–2. लोक दायित्व बीमाः–प्रभावशीलता (यथोचित्त) औद्योगिक इकाई के क्षेत्रीयकरण उसके स्थापना के बिन्दु (Public Liability Insurance : adequacy-Issues in zoning and location of Industrial units.

इकाई संरचना

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 लोकदायित्व बीमा अधिनियम 1991 प्रयोज्यता एवं दुर्घटना, प्रहस्तन, परिसंकटमय पदार्थ की परिभाषा

2.3.1. लोकदायित्व बीमा अधिनियम में अत्रुटिविहीन ;दव निसज सपंइपसपजलद्ध दायित्व के नियमः यथोचित्ता

2.3.2. स्वामी को अनुतोष प्रदान करने का दायित्व।

2.3.2. शास्तियां

2.4 लोक दायित्व बीमा अधिनियम के अधीन : औद्योगिक इकाईयों क्षेत्रीयकरण एवं उसके स्थापना।

2.4.1. औद्योगिक इकाई के क्षेत्रीयकरण का कारण।

2.4.2. औद्योगिक इकाईयों के स्थापना मुद्दे

2.5. सारांश।

2.6. परिभाषिक शब्दावली।

2.7. अभ्यास प्रश्नों उत्तर।

2.8. संदर्भ ग्रन्थ सूची।

2.9 सहायक उपयोगी पाठ्य सामाग्री।

2.10 निबन्धात्मक प्रश्न।

2.1. प्रस्तावना

लोक दायित्व बीमा अधिनियम 1991 प्रतिकारात्मक न्याय की दिशा में प्रमुख एवं प्रभावकारी विधायन है। यह अधिनियम खतरनाक वस्तुओं से उत्पन्न दुर्घटनाओं की दशा में त्वरित अनुतोष प्रदान करने का प्रावधान करता है। यह अधिनियम त्रुटिविहीन दायित्व के सिद्धान्त को सांविधिक मान्यता देता है। यहां दावेदार को क्षतिकर्ता या स्वामी की त्रुटि साबित करनी आवश्यक नहीं है। इसलिये भविष्य में ऐसी घटनायें न हो इसलिये औद्योगिक इकाईयों को आबादी रहित क्षेत्र में स्थापित किया जाय क्योंकि उद्योगों की स्थापना के मुख्य विवाधक पर्यावरण एवं विकास में सामंजस्य स्थापित कर सके इसी प्रयोज्यता हेतु अधिनियम बनाया गया।

2.12. उद्देश्यः–

लोक बीमा दायित्व अधिनियम 1991 का मुख्य उद्देश्य मानव स्वास्थ्य, सम्पत्ति और पर्यावरण क्षति के लिये प्रभावी तथा शीघ्र अनुतोष प्रदान करने के लिये औद्योगिक घटनाओं से उत्पन्न मामलों के प्रभावी और शीघ्र निस्तारण के लिये राष्ट्रीय अधिकरण की स्थापना करना है। जिससे परिसंकटमय पदार्थों के रिसाव या विस्फोट से महाविनाशकारी परिणाम की दुर्घटनायें घटित न हों। भारत में भोपाल गैस काण्ड 1984 की त्रासदी भुलाया नहीं जा सकता क्योंकि उसमें लगभग 2000 लोगों की मृत्यु तथा 2 लाख से अधिक लोग अन्धे हो गये अभी हम उस त्रासदी से उबर नहीं पाये तभी दिल्ली में 1985 में श्रीराम उर्वरक संयंत्र में ओलियम गैस का रिसाव दुर्घटना ने मानव समाज को कमजोर एवं असहाय बना दिया। बिना विलम्ब किये

न्यायिक प्रक्रिया के तहत परिसंकटमय संयंत्रों से घटित दुघटनाओं के मामले में प्रभावी अनुतोष प्रदान करना अधिनियम का मुख्य उद्देश्य है।

2.3.लोकदायित्व बीमा अधिनियम की प्रयोज्यता, दुर्घटना, प्रहस्तन, परिसंकटमय पदार्थों की परिभाषा

परिसंकटमय पदार्थों से उत्पन्न दुर्घटनाओं के नियंत्रण एवं निवारण के लिये लोकदायित्व बीमा अधिनियम 1991 प्रथम विधायी प्रयास है। जो अत्रुटि के सिद्धान्त को विधिक आधार से हटाकर सांविधिक प्रस्थिति प्रदान करता है। यह परिसंकटमय पदार्थों से उत्पन्न दुर्घटनाओं की दिशा में एक प्रमुख प्रभावकारी कदम है। तृतीय पक्ष जोखिम के विरुद्ध बीमाकरण इसकी अन्य प्रमुख विशिष्टता है। यह एक लघु एवं प्रभावकारी विधायन है इसकी परिभाषा में अनुतोष प्रदान करने तथा स्वामी का बीमा पालिसी देने का कर्तव्य, अनुतोष हेतु आवेदन, अपराधों का संज्ञान और सद्भाव में की गयी कार्यवाही का संरक्षण आदि उपबन्धित है।

लोक दायित्व बीमा अधिनियम 1991 प्रतिकारात्मक न्याय (Compensatory Justice) की दिशा में प्रभावकारी विधायन है। जो परिसंकटमय पदार्थों से उत्पन्न दुर्घटनाओं की दशा में त्वरित अनुतोष प्रदान करता है। यह अधिनियम त्रुटिविहिन दायित्व के सिद्धान्त (No fault hiability) को संविधिक मान्यता देता है। वहां दावेदार को क्षतिकत्त या स्वामी की त्रुटि साबित करनी आवश्यक नहीं है। क्योंकि अक्सर दुर्घटना के फलस्वरूप होने वाली क्षति के लिये प्रतिकर देने से स्वामी आनाकानी करता है। अपनी त्रुटि के सबूत पर बल देता है। त्वरित अनुतोष प्रदान करने के उद्देश्य से यह अधिनियम परिसंकटमय पदार्थ के स्वामी पर पीड़ित पक्षकार (व्यक्ति) को उसकी त्रुटि के होते हुये भी प्रतिकर देने का दायित्व डालती है। पीड़ित

व्यक्ति की त्रुटि रही हो या न रही हो इस अधिनियम के प्रावधानों के अन्तर्गत परिसंकटमय पदार्थों का स्वामी दुर्घटना के फलस्वरूप होने वाली त्रुटि के लिये पीड़ित पक्षकार को प्रतिकर देने के लिये उत्तरदायी होता है। इस अधिनियम के अन्तर्गत क्षति या मृत्यु की दशा में अधिकतम 25,000 रुपया प्रतिकर देने का उपबन्ध करता है। निजी सम्पत्ति की हुयी क्षति की दशा में प्रतिकर की सीमा छः हजार रुपया अतिरिक्त दुर्घटना के फलस्वरूप होने वाली क्षति से पीड़ित पक्षकार या व्यक्ति या अन्य अधिनियम के प्रावधानों के अधीन प्रतिकर प्राप्त करने का अधिकार सुरक्षित रहता है। यह अधिनियम पर्यावरण अनुतोष निधि के गठन का उपबन्ध करता है। इस अधिनियम परिसंकटमय पदार्थ का प्रत्येक स्वामी, दुर्घटना के फलस्वरूप होने वाली संभावित क्षतियों को आच्छादित करने वाली बीमा पालिसी लेने के लिये बाध्य है। इस बीमा के लिये प्रीमियम (Insurance Premium) देने के आलावा परिसंकटमय पदार्थ का स्वामी केन्द्रीय सरकार द्वारा स्थापित की जानी वाली पर्यावरण उपचार (अनुतोष) निधि (Environment Relief Fund) के गठन का उपबन्ध करता है।

इस बीमा के लिये प्रीमियम देने के अलावा परिसंकटमय पदार्थ का स्वामी केन्द्रीय सरकार द्वारा स्थापित की जाने वाली पर्यावरण उपचार (अनुतोष) निधि (Envirenment Rebeef Fund) में योगदान करने के लिये बाध्य है। इस निधि से दुर्घटना के पीड़ितों को उपचार दिये जाने की व्यवस्था की गई है। लोकदायित्व अधिनियम 1991 के अन्तर्गत प्रधान प्रशासकीय कलेक्टर होता है। कलेक्टर दुर्घटना होने पर उसका सत्यापन करेगा तथा घटना का व्यापक प्रचार करेगा, प्रतिकर के लिये आवेदन आमंत्रित करेगा तथा अनुतोष प्रदान करेगा।

परिभाषाः–

लोकदायित्व बीमा अधिनियम 1991 की धारा 2 महत्वपूर्ण शब्दों की परिभाषा इस प्रकार है–

Accident दुर्घटना धारा 23(क)–

''दुर्घटना से तात्पर्य ऐसी घटना से है जो किसी परिसंकटमय पदार्थों का प्रहस्तन (व्यवहार) (Handling) करते समय आकस्मिक या अचानक या अनाशयित रूप से घटित हुयी है, जिसके फलस्वरूप किसी व्यक्ति को मृत्यु, या कोई अपहति या किसी सम्पत्ति या पर्यावरण को कोई क्षति होती है परन्तु इसमें केवल युद्ध अथवा **रेडियोधर्मिता के कारण दुर्घटना** शामिल नहीं है।''

लोक दायित्व बीमा अधिनियम में दी गयी दुर्घटना प्रमुख बात यह है कि इसमें सम्पत्ति अथवा पर्यावारण से होने वाली क्षति को शामिल किया गया है तथा **कर्मकार प्रतिकर अधिनियम 1923 की तरह केवल न्यायिक निर्वचन के लिये नहीं छोड़ा गया है।**

दुर्घटना का आवश्यक तत्वः– निम्नलिखित आवश्यक तथ्य इस प्रकार है–

1.दुर्घटना एक ऐसी घटना है जो अप्रत्याशित, आकस्मिक, अनियोजित, तथा अनाशयित होती है। इस घटना में पूर्वानुमान का सर्वथा अभाव होता है। दुर्घटना में घटना का असमान्य ढंग से घटित होना अनिवार्य है। यह दैवकृत्य (Act of God) भी हो सकती है जो किसी व्यक्ति द्वारा निवारित नहीं किया जा सके।

2.किसी दुर्घटना का कारण परिसंकटमय पदार्थ का प्रहस्तन होना चाहिये।

3.प्रतिकर प्राप्त करने हेतु अधिनियम के अन्तर्गत किसी व्यक्ति की मृत्यु या उपहति या किसी सम्पत्ति या पर्यावरण।

4.ये क्षति होना आवश्यक है युद्ध या रेडियोधर्मिता दुर्घटना में अपवर्जित है।

2.3.1. लोकदायित्व बीमा अधिनियम 1991 में अत्रुटिविहिन दायित्व का सिद्धान्त की संविधिक मान्यताः–

1980 के दशक में भारत मैं परिसंकटमय पदार्थों के रिसाव या विस्फोट से महाविनाशकारी परिणाम की दुर्घटनाऐं घटित हुयी। जिसमें भोपालगैस काण्ड 1984 और 1985 में दिल्ली में श्रीराम उर्वरक संयंत्र से गैस रिसाव आदि प्रमुख रखा। इस ओलिमय गैस से लोगों की मृत्यु और अन्य कुछ अपाहिज एवं विकलांग हो गये जिसमें उनका कोई शेष नहीं था। ऐसी त्रासदी पुनः न हो उससे निपटने के लिये न्यायालय ने तुरन्त सरकार को दोषी एवं पीड़ितों को प्रतिकर प्रदान करने के लिये सरकार का निर्देश दिया। यह वाद वरिष्ठ अधिवक्ता एम0सी0 मेहता द्वारा लाया गया जिसमें उच्चतम न्यायालय का ध्यान परिसंकटमय पदार्थों से होने वाले संयंत्रों से उत्पन्न खतरों की तरफ आकृष्ट किया गया। इस वाद एम0सी0 मेहता व0 भारत के नाम से उच्चतम न्यायालय में लाया गया जिसमें ओलियम गैस के रिसाव के प्रति सरकार के दायित्व के प्रयोग दर्शित किया गया और पूर्ण दायित्व का सिद्धान्त प्रतिपादित किया गया। जिससे सौ वर्ष पहले रायलैण्ड व0 फ्लेचर के वाद में कठोर दायित्व के सिद्धान्त के रूप में माना गया था। कोई व्यक्ति अपनी पूर्ण सम्यक् सावधानी बरते के बाद भी कोई ऐसी वस्तु अपनी कोई व्यक्ति अपनी भूमि लाता है जो खतरनाक पदार्थ के रूप में तो यदि वह सीमा से बाहर जाती है और पड़ोस के लोगों को व्यक्तिगत उनके स्वस्थ्य एवं सुरक्षा के लिये खतरा है

पहुँचता है तो वह ऐसे क्षति के लिये दायी होंगे इसी को अत्रुरिविहिन दायित्व का सिद्धान्त कहा जाता है।

चरनलाल साहू व0 भारत संघ 1990 एस0सी0

एस0सी0 मेहता के वाद ने निर्णीत किया अत्रुटिविहिता दायित्व के आधार पर 'प्रतिकर भुगतान का दायित्व' प्रतिवादी को देना होगा। खतरनाथ पदार्थों का प्रयोग करने वाले उद्योग खतरों के लिये अनिवार्य रूप से बीमाकृत हो। न्यायालय ने तीन बातों की संस्तुति प्रदान की–

1.खतरनाक उद्योगों के सम्बन्ध में अत्रुटि का सिद्धान्त लागू किये जाने सम्बन्धी उपबन्ध के रूप में।

2.खतरों के लिये ऐसे उद्योगों का बीमाकरण अनिवार्य किया जाय।

3.त्वरित प्रक्रिया के साथ दावों के निस्तारण हेतु विशिष्ट फोरम स्थापित किये जाय।

उपरोक्त निर्णय को संसद मानते हुये अत्रुटि के सिद्धान्त तथा विशेष फोरम की स्थापना को सकारात्मक रूप प्रदान किया। तथा क्षति के दायित्व के लिये प्रतिकर के सम्बन्ध में राष्ट्रीय विधि निर्माण के आहा्न को पूरा करने के लिये पर्यावरण अधिकरण 1995 पारित किया। उसका मुख्य उद्देश्य अत्रुटि के सिद्धान्त को लागू करने के साथ–साथ मानव स्वास्थ्य, सम्पत्ति और पर्यावरण की क्षति के लिये प्रभावी तथा शीघ्र अनुतोष प्रदान प्रमुख रहा।

2.3.2. लोक दायित्व बीमा अधिनियम 1991 में अत्रुटिविहिन दायित्व सिद्धान्त की संविधिक मान्यता की यथोयितता

लोक दायित्व बीमा अधिनियम 1991 की धारा 3 स्वामी को अत्रुटि के आधार पर प्रतिकर देने का दायित्व स्वामी पर अधिरोपित करती है। इस अधिनियम की धारा 3(8) अत्रुटि का सिद्धान्त

प्रवर्तित किया गया है। यहाँ स्वामी का दायित्व मृत्यु तथा उपहति की दशा में अनुसूची में विनिर्दिष्ट सीमा तक होगा। अधिनियम के अन्त में लगी अनुसूची में निम्नलिखित दायित्वों का उल्लेख है–

1.प्रत्येक मामले में अधिकतम 12,500.00 रुपये तक किया गया चिकित्सालय व्यय।

2.घातक दुर्घटना (Fatal Accident) के लिये 12,500.00 रु0 तक चिकित्सालय व्यय के अतिरिक्त प्रति व्यक्ति रु0 2500 अनुदान देय होगा।

3.स्थायी पूर्ण या आंशिक निःशक्तता या अन्य उपहति या बीमारी के लिये प्रत्येक मामले में अधिकतम 12500 तक किया गया, चिकित्सालय व्यय की प्रतिपूर्ति। अधिकृत चिकित्सक द्वारा प्रमाणित (निर्योग्यता) निःशक्कता के प्रतिशत के आचार पर नगद अनुतोष पूर्ण स्थायी निःशक्तता के लिये 25000 रु0 देय होगा।

4.अस्थायी आंशिक निःशक्तता के कारण मजदूरी की क्षति जो पीड़ित पक्षकार की अर्जन क्षमता को कम कर देते हैं। अधिकतम 3 महीने तक 1000 रु0 प्रतिमाह से अधिक नहीं होगा।

5.व्यक्तिगत सम्पत्ति की क्षति के लिये 6000 रुपया तक वास्तविक क्षति पर आधारित होगा।

धारा 3(2) में प्रतिकर पाने के लिये पीड़ित पक्षकार को यह साबित करना आवश्यक नहीं होगा कि प्रति किसी व्यक्ति की उपेक्षा या दोष या व्यक्ति या त्रुटि के कारण कारित हुयी है। इसे अत्रुटि सिद्धान्त का प्रर्वतन कहते हैं।

<u>प्रहस्तन (Handling) धारा 2(ग)</u>

प्रहस्तन का तात्पर्य किसी परिसंकटमय पदार्थ के सम्बन्ध में, ऐसे परिसंकटमय पदार्थ के विनिमार्ण प्रक्रिया, अभिक्रिया, पैकेज भण्डारण, वाहन द्वारा परिवहन, उपभोग, संग्रहण विनाश, संपरिवर्तन, विक्रय के लिये प्रस्थापना, अन्तरण, अथवा समान अन्य कार्य से है।

परिसंकटमय पदार्थ (Janardous Substance) धारा 2(ग):–

परिसंकटमय पदार्थ की परिभाषा दी गयी है। जबकि पर्यावरण संरक्षण अधिनियम 1986 में परिसंकटमय पदार्थ की परिभाषा धारा 2(5) में दी गयी। इस परिभाषा के दो भाग हैं–

1. परिसंकटमय पदार्थ के परिभाषा देते हुये कहा गया कि इससे ऐसे पदार्थ निर्मित (उत्पाद) से है, जिसे पर्यावरण संरक्षण अधिनियम की धारा 2(5) परिसंकटमय पदार्थ के परिभाषा देते हुये कहा गया कि इससे ऐसे पदार्थ निर्मित (उत्पाद) अभिप्रेत है जो अपने रासायनिक या भौतिक गुणों के प्रहस्तन के कारण मानवों या अन्य जीवित प्राणियों, पादपों, सूक्ष्म जीवों, सम्पत्ति अथवा पर्यावरण को अपहानि कारित कर सकती है।

2.परिसंकटमय पदार्थ ऐसी मात्रा से आधिक्य में है जो मात्रा केन्द्रीय सरकार द्वारा अधिसूचना में विनिर्दिष्ट की गयी है।

2.4.स्वामी के अनुतोष प्रदान करने का दायित्वः–

लोक दायित्व बीमा अधिनियम 1991 की धारा 4 स्वामी पर बीमा पालिसी लेने का दायित्व अधिरोपित करती है।

''प्रत्येक स्वामी जो परिसंकटमय पदार्थ का प्रहस्तन करता है, वह परिसंकटमय पदार्थ के प्रहस्तन करता है, वह परिसंकटमय पदार्थ के प्रहस्तन को प्रारम्भ करने से पूर्व धारा 3 के अधीन अनुतोष प्रदान करने का दायित्व के विरुद्ध बीमा पालिसी लेगा। स्वामी पर यह दायित्व होगा कि परिसंकटमय पदार्थ का प्रहस्तन जारी रखने की दशा में स्वामी की बीमा पालिसी का समय–समय पर नवीनीकरण करते रहना होगा जिससे बीमा पालिसी जीवित रहे।

धारा.5जब कलेक्टर को संज्ञान होगा कि उसके क्षेत्राधिकार में किसी स्थान पर परिसंकटमय पदार्थ के कारण दुर्घटना हुयी है। तो वह दुर्घटना के सत्यापन के पश्चात् यह प्रचार करेगा कि पीड़ित पत्रकार प्रतिकर प्राप्त करने हेतु आवेदन कलेक्टर के पास करें।

धारा.6दुर्घटना के फलस्वरूप होने वाले क्षति के लिये प्रतिकर प्राप्त करने हेतु निम्न व्यक्ति संलग्न होंगे।

1.दुर्घटना के फलस्वरूप जिस व्यक्ति को क्षति हुयी हो, 2. यदि किसी सम्पत्ति की क्षति हुयी है तो उस सम्पत्ति का स्वामी, 3. मृतक की दशा में मृतक का प्रतिनिधि, 4. प्रतिनिधि का अभिकर्ता जिस सम्पत्ति को क्षति हुयी उस सम्पत्ति के स्वामी का अभिकता आदि वादकर्ता के रूप में वाद ला सकता है।

आवेदन करने की समय सीमा–दुर्धटना के लिये क्षतिपूर्ति हेतु आवेदन दुर्घटना की तिथि से पांच वर्षो के अन्दर किया जायेगा।

धारा.7आवेदन प्राप्ति के बाद कलेक्टर द्वारा अपनायी जाने वाली प्रक्रिया एवं कार्यवाही में प्रतिकर या अनुतोष के लिये दावे का निस्तारण आवेदन की तारीख से 3 माह के अन्दर कलेक्टर करने का प्रयास करेगा। कलेक्टर अपने निर्णय के 15 दिन के अन्दर निर्णय की प्रतिलिपि उपलब्ध करायेगा।

धारा.7(a) लोकदायित्व बीमा अधिनियम 1991 संशो0 1992–राष्ट्रीय पर्यावरण अनुतोष निधि का गठन का प्रावधान किया गया जिससे बीमा कम्पनियों का सीमित दायित्व तथा स्वामी का असीमित दायित्व रखा जाय। राष्ट्रीय पर्यावरण निधि का गठन एक मध्य मार्ग है लोकदायित्व अधिनियम 1991 के अन्तर्गत केन्द्रीय सरकार की शक्तियां (धारा 9 से 15)

केन्द्रीय सरकार की निम्नलिखित शक्तियाँ होंगी–

1.सूचना मांगने की शक्तियां (धारा 9)

2.प्रवेश एवं निरीक्षण की शक्तियां (धारा 10)

3.प्रत्याशी एवं अभिग्रहण की शक्ति (धारा 11)

4.निर्देश देने की शक्ति (धारा 12)

14.3 शस्तिया¡ Penalties (See 14-17)

लोकदायित्व बीमा अधिनियम में अधिनियम के प्रावधानों के उल्लंघन पर शस्तियाँ का प्रावधान किया गया जो इस प्रकार है।

1. पालिसी लेने या नवीनीकरण में विफल रखने पर शस्तियां (See 14)

यदि को सवामी या नियोक्ता बीमा पालिसी नहीं लेता है, परिसंकटमय पदार्थों का प्रहस्तन जारी रखने पर पालिसी जीवित नहीं रखता या केन्द्रीय सरकार द्वारा वर्णित आदेशों का पालन करने में व्यतिक्रम करता है। तो वह 6 माह तथा अधिकतम 6 वर्षों तक कारावास एवं 1 लाख रु0 से दण्डित किया जायेगा।

2.जानकारी उपलब्ध न कराने या व्यवधान उत्पन्न करने के विरुद्ध शस्ति (धारा 15)

परिसंकटमय पदार्थ का प्रहस्तन करने वाला कोई स्वामी केन्द्र सरकार की जानकारी नहीं देता कर्तव्यों के निर्वहन में व्यवधान उत्पन्न करता है तीन वर्ष से अनधिक तक कारावास 10,000 रु0 का दण्ड या दोनों से दण्डित करेगा।

(क) अपराध कम्पनी द्वारा किया जाना–

यदि कम्पनी कोई अपराध करती है तो वह भी दण्डित की जायेगी क्योंकि वह एक विधिक व्यक्ति है।

(ख) अपराध सरकारी विभाग द्वारा किया जाना (धारा 17)

जहां अपराध सरकार के किसी विभाग द्वारा किया जाता है तो सरकारी विभाग का विभागाध्यक्ष अपराध का दोषी होगा। परन्तु विभागाध्यक्ष यह साबित करके दण्ड से बच सकता है कि–

1.अपराध उसकी जानकारी के बिना कारित किया गया था।

2.अपराध निवारित करने हेतु उसने सभी सकर्तकता बरती थी।

3.अपराध का संज्ञान किसी भी न्यायालय द्वारा किये जाने पर तब तक प्रतिबन्ध लगाती है जब तक परिवाद–

(a) केन्द्रीय सरकार द्वारा प्रधिकृत किसी प्राधिकारी द्वारा नहीं किया गया है।

(b) यदि परिवाद किसी व्यक्ति द्वारा किया जाता है तो उस व्यक्ति के परिवाद करने के अपने आशय की सूचना परिवाद करने के 60 दिन पूर्व केन्द्रीय सरकार या किसी प्राधिकारी या अधिकारी को विहित ढंग से नहीं दिया है। अर्थात् परिवादी द्वारा परिवाद करने के अपने आशय की सूचना 60 दिन पूर्व केन्द्रीय सरकार या उस सम्बन्ध में विहित किसी अधिकारी को दिया जाना अनिवार्य है।

4.सद्भावपूर्वक की गयी कार्यवाहियों को संरक्षण (धारा 20):–

यदि सरकार या सिकी व्यक्ति या अधिकारी या प्राधिकारी या अभिकरण यह साबित कर दे कि कोई कार्य सद्भावपूर्वक किया गया है तो उसके विरुद्ध कोई वाद अभियोजन पर विधिक कार्यवाही नहीं की जा सकेगी।

2.5. लोकदायित्व बीाम अधिनियम के अधीन औद्योगिक इकाईयों का क्षेत्रीयकरण एवं उसकी स्थापना

एम0सी0 मेहता के वाद में न्यायालय ने सरकार को निर्देश दिया कि वह लोकदायित्व बीमा अधिनियम के अधीन औद्योगिक इकाईयों का क्षेत्रीयकरण एवं उसकी स्थापना को यथाशीघ्र करे, तथा राष्ट्रीय पर्यावरण अधिकरण बनाये। जिससे भविष्य में होने वाली भयानक घटनाओं

से बचा जा सके क्योंकि भोपाल गैस त्रासदी, 1984, दिल्ली श्रीराम फ्रुडस कारपोरेशन की घटनायें 1985 ने मानव के दिलों को अहलादित कर दी है और मनुष्य अपने को असहज महसूस कर रहा है। राज्य का दायित्व है कि वह मानव जान–माल की रक्षा करें क्योंकि उसकी व्युत्पत्ति इसी लिये हुयी है। वर्तमान समय में दो समस्यायों ने जन्म लिया 1. पर्यावरण प्रदूषण से संरक्षण, 2. औद्योगिक विकास

ये दोनों समस्या एक दूसरे के विपरीत है। क्योंकि विकसित देश पर्यावरण प्रदूषित करके एवं अपना औद्योगिक विकास करके विकसित हो गये वहीं विकासशील देश के लिये दोनों समस्या उसे विकसित होने से रोकती हैं सरकार का दायित्व है कि वह अपने यहां औद्योगिक विकाश के लिये ऐसे स्थानों का चयन करें जो आबादी से काफी दूरी पर हो तथा वहां रहकर अपने संसाधनों को विकसित करे। तथा ऐसे समस्त सावधानियों को अपनाये जो भविष्य में कोई भी परिसंकटमय पदार्थों के त्रासदी से बचाये। क्योंकि सरकार को दोनों में सामंजस्य स्थापित करके अपना विकास करना है। राष्ट्र विकास एक मुख्य मुद्दा है वहीं पर्यावरण प्रदूषण से संरक्षण भी मुख्य मुद्दा है। दोनों सामंजस्य स्थापित करके राष्ट्र का विकास किया जाय ही मुख्य समस्या है। केन्द्र सरकार एवं राज्य सरकार दोनों मिलकर ऐसे दोनों समस्याओं को ध्यान में रखकर राष्ट्र का विकाश सुनिश्चित करें।

2.5.1. औद्योगिक इकाईयों के क्षेत्रीयकरण के कारण

औगोगिक इकाईयों के क्षेत्रीयकरण के मुख्य कारण निम्नलिखित इस प्रकार हैः–

1.भौगोलिक परिस्थितियों के कारणः–

उद्योगों के क्षेत्रीकरण मुख्यकारण का मुख्य कारण इसका भौगोलिकरण है। कुछ उद्योगों की प्रकृति अल्प इतना खतरनाक होता है कि उसकी स्थापना शहरों से दूर किया जाना आवश्यक होता है क्योंकि उसमें से खतरनाक जैसे लगातार निकलती रती है वह खतरनाक होती है इसलिये ऐसे उद्योगों को भौगोलिकरण दृष्टि से बाहर स्थापित किया जाता है। क्योंकि उद्योगों में लगने वाला कच्चा माल उस आस पास क्षेत्रों से आसानी से मिल जाता है तो उसको भी ध्यान में रखकर उसकी स्थापना की जाती है। जिससे भविष्य में कभी भी दुर्घटना घटित हो तो ज्यादा प्रभाव न पड़े।

2.यातायात की सुविधा के कारण–

उद्योगों के क्षेत्रीयकरण का दूसरा कारण यह है कि वह यातायात की प्रसुविधा को ध्यान में रखकर उसको स्थापित किया जाता है क्योंकि उद्योगों की स्थापना में कच्चे माल, मशीनरी, तथा आयात निर्यात के साधनों को आसानी से प्राप्त कर उद्योगों की स्थापना में कच्चेमाल, मशीनरी, तथा आयात निर्यात के साधनों को असानी से प्राप्त कर उद्योगों की शक्ति को बढ़ायी जाय जिससे उद्योगों में बने समान का वितरण आसानी से सम्पूर्ण भारत एवं अन्य राष्ट्रों में किया जाय आदि की दृष्टि से उद्योगों को स्थापित किया जाता है।

3.आबादी स्थल से दूर उद्योगों को स्थापित किया जायः–

उद्योगों को आबादी स्थल से दूर रखने का मुख्य कारण यह होता है कि उद्योगों से निकलने वाले गन्देपानी, गैसें, एवं अन्य पदार्थ जो खतरनाक होते हैं उससे भयंकर बीमारियाँ उत्पन्न हो

सकती हैं इसलिये आबादी स्थल से उद्योगों को दूर स्थापित किया जाता है जिससे ऐसी बीमारियों मनुष्यों तक न पहुंच पाये। इसलिये ऐसे उद्योगों की स्थापना आबादी स्थल से दूर किया जाना श्रेस्यकर होगा।

4.उद्योगों से उत्पन्न परिसंकटमय पदार्थों से फैलने वाली बीमारियों से बचाव कारण :–

उद्योगों से उत्पन्न परिसंकटमय पदार्थों से फैलने वाली बीमारियों से खतरनाक बीमारियों पैदा होती हैं और अब कुछ ऐसी बीमारियों उत्पन्न हो गयी हैं जो लाइलाज हैं। ऐसी बीमारियों से ऐसे कर्मकारों की एवं स्त्रियों उनके बच्चों की रक्षा किया जाय जिससे उनका जीवन स्वस्थ्य हो सके।

5.उत्पादित वस्तुओं का आयात निर्यात की सुविध के कारणः–

उद्योगों के क्षेत्रीयकरण का मुख्य कारण उत्पादित वस्तुओं के आपत्ति निर्यात से होता है। उस उद्योगों से बने पदार्थों का वितरण राज्य इस प्रकार करें कि वह सभी लोगों तक कम लागत में आसानी से पहुंच सकें। यही कारण है कि उद्योगों का क्षेत्रीयकरण किया जाय।

उद्योगों का क्षेत्रीयकरण से किसी दुर्घटना के परिणम स्वरूप जहाँ किसी व्यक्ति (कर्मकार से भिन्न) की मृत्यु या उपहति या सम्पत्ति अथवा पर्यावरण को क्षति पहुंचती है तो स्वामी ऐसी मृत्यु उपहति अथवा क्षति के लिये लोक दायित्व बीमा अधिनियम के अधीन प्रतिकर प्राप्त कर सकते हैं जो अधिनियम की अनुसूची 1 में उपबन्धित है जैसे–

1.मृत्यु

2.स्थायी, अस्थायी, आंशिक नियोग्यता या उपहति या बीमारी।

3.व्यक्तिगत सम्पत्ति की क्षति।

4.कारोबार रोजगार दोनों की क्षति। आदि

6.निर्जन स्थलों की उपलब्धता के कारणः

उद्योगों के क्षेत्रीयकरण एक कारण निर्जनस्थलों की उपलब्धता भी है। उद्योगों को ऐसे स्थानों पर स्थापित किया जाय वहां वन, जंगल एवं भौगोलिक दृष्टि से उचित स्थल हो और वह आवागमन के लिये भी उचित स्थल हो वही ही ऐसे उद्योगों को स्थापित किया जाय। उद्योगों की स्थापना में यह भी आवश्यक होता था कि जिस स्थान पर उद्योग लगाये जा रहे हैं इन सब बातों को ध्यान में रखकर उद्योगों की स्थापना की जाय इसलिये निर्जन स्थलों की उपलब्धता आवश्यक होगा।

2.5.2. औद्योगिक इकाईयों की स्थापना के बिन्दु (मुद्दे)

औद्योगिक इकाइयों की स्थापना की मुख्य मद्दे इस प्रकार है–

1.उद्योगों का विकास राष्ट्र समृद्धि का प्रेरक हैः–

औद्योगिक इकाई की स्थापना का मुख्य उद्देश्य उद्योगों के विकास से है। अधिक से अधिक उद्योग स्थापित किय जायं क्योंकि वहीं राष्ट्र समृद्धि का प्रेरक है। उद्योगों की स्थापना के द्वारा राष्ट्र निर्माण किया जाता है। भारत में उद्योगों का विकास तथा इससे होने वाले परिसंकटमय पदार्थों के प्रहस्तन से उत्पन्न दुर्घटनाओं के शिकार लोगों को तुरन्त अनुतोष देने में महत्वपूर्ण भूमिका लोक दायित्व अधिनियम 1991 निभायेगी। भारत में उद्योगों के विकाश द्वारा जहां राष्ट्र अपने समृद्धिशाली प्रभुत्व को प्राप्त करेगा वही वह अपनी विनाशलीला की ओर भी अग्रसर

होगा। इसलिये राष्ट्र का निर्माण उद्योगों के विकास को संयमित ढंग से विधियों के अधीन करना चाहिये क्योंकि बिना उद्योगों के निर्माण से भी राष्ट्र समृद्धिशाली नहीं होगा। इसलिये भारत सरकार का यह दायित्व होगा कि वह उद्योगों के विकास एवं राष्ट्र निर्माण तथा राष्ट्र समृद्धि आदि बातों के द्वारा उद्योग विकसित करें।

2.उद्योगों के विकास ने रोजगार में वृद्धि होती है:–

भारत में उद्योगों के विकास से रोजगार में वृद्धि होती है। इसलिये सरकार को उद्योगों की स्थापना करनी चाहिये। भारत में जिस प्रकार जनसंख्या वृद्धि हुयी उसी तरह उद्योगों की स्थापना होनी चाहिये थी लेकिन उतने उद्योगों की स्थापना नहीं हो सकी जिसके कारण बेरोजगारी की संख्या में वृद्धि हुयी। सरकार को उद्योगों की स्थापना करनी चाहिए और उससे रोजगार में वृद्धि करके ऐसे अधिक से अधिक लोग जो सेवाये प्रदान की गयी जो स्वयं साक्षर थे। उद्योगों के विकास से रोजगार में भी वृद्धि हुयी। भारत में भारत सरकार द्वारा ऐसे ऐसे अधिक से अधिक रोजगार वृद्धि जाय क्योंकि उद्योगों के निर्माण से ही राष्ट्र समृद्धिशाली होगा हो। इसलिये उद्योगों को विकसित करके एवं रोजगार में वृद्धि सुदढ़ राष्ट्र निर्माण में सहायक होगा। इसलिये उद्योगों का निर्माण आवश्यक है।

3.उद्योगों का विकास आर्थिक सम्पन्नता की बढ़ाया देता है:–

भारत में उद्योगों का विकास आर्थिक सम्पन्नता का द्योतक है भारत एक विकासशील राष्ट्र है उसके समक्ष मुख्य समस्या उद्योगों के विनियोग मशीनरीकरण, कच्चेमाल, एवं कर्मकारों को

कुशलता का अभाव आदि है जो विकसित राष्ट्र बनने में रोड़ा है। भारत में उद्योगों की स्थापना करके आर्थिक संसाधनों को सुदृढ़ बनाकर उद्योगों को अत्यधिक विकसित करके भारत को आर्थिक सम्पन्नता को बढ़ावा देता है। लोक दायित्व बीमा अधिनियम 1991 के अधीन उद्योगों को विकसित किया जाय क्योंकि उद्योगों से निकलने वाली गैसें जहाँ पर्यावरण को प्रदूषित करती है वही वह अपन्नता को बढ़ावा देती है। इसलिये भारत को उद्योगों की स्थापना के समय लोक दायित्व बीमा अधिनियम के प्रावधानों के ध्यान में रखकर करें।

4.उद्योगों की स्थापना से अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार नीति को बढ़ावा मिलता है जिससे राष्ट्रों के मध्य सम्बन्ध प्रगाढ़ होते हैं–

उद्योगों की स्थापना द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार नीति को बढ़ावा मिलता है। और उससे राष्ट्रों की मध्य सम्बन्ध प्रगाढ़ होता है। इसलिये आयात निर्यात नीति बनायी जाती है जो न केवल भारत को समृद्धिशाली बनाता है बल्कि राष्ट्र को आर्थिक रूप से सुदृढ़ बनाता है।

5.भारत की औद्योगिकरण की नीति की समीक्षा–

आधुनिक युग में समाजवादी समाज की स्थापना के लिये एकाधिकार पर नियंत्रण के लिये आर्थिक विषमता को दूर करने के लिये उद्योगों का राष्ट्रीकरण आवश्यक होता है भारत सरकार की नीति सार्वजनिक क्षेत्र में विस्तार के लिये प्रजातंत्रात्मक समाजवादी समाज का निर्माण करना और औद्योगिक नीतियों की समीक्षा आवश्यक होता है।

6.सामाजिक नियंत्रण एवं राजकीय हस्तक्षेप

उद्योगों की स्थापना मं सामाजिक नियंत्रण राजकीय हस्तक्षेप का एक स्वरूप है। जिसके अन्तर्गत निजी उद्योगों एवं व्यवसायों को राज्य द्वारा निर्धारित दिशा में कार्य करने हेतु प्रेषित अथवा बाध्य किया जाता है। सामाजिक निंयत्रण माध्यम से सरकार अर्थव्यवस्था को नियंत्रित करने का प्रयास करती है। ताकि व्यक्ति व्यापार एवं उद्योग उसके द्वारा निर्धारित सामाजिक परिवर्तन के अनुरूप कार्य करने को तत्पर रहे।

7.राष्ट्रनियोजन में उद्योगों की स्थापना आवश्यकः–

भारत एक विकासशील राष्ट्र है और यहां औद्योगिकरण आवश्यक है। निजी क्षेत्रों की तुलना में सार्वजनिक क्षेत्रों का अधिक विकास किया जाय अर्थात् अधिक से अधिक उद्योगों का राष्ट्रीकरण किया जाना चाहिये। क्योंकि उद्योगों की स्थापना के मुख्य बिन्दु इस प्रकार हैं–

1.पूंजी का अभावः–अर्द्धविकसित राष्ट्रों में पूंजी का अभाव होता है। और दुर्लभ पूंजी के अभाव में उचित उपयोग के लिये उद्योगों को स्थापित किया जाय उसका राष्ट्रीकरण हो।

2.तीव्र आर्थिक विकास–अर्द्धविकसित देशों में विकास की गति धीमी होती ळै और इसे त्वरित करने के लिये यह आवश्यक होता है कि सरकार प्रत्यक्ष रूप से देश के आर्थिक विकास में भाग ले अर्थात् अधिक से अधिक उद्योगों को स्थापित किया जाय।

3.उपक्रमो का अभावः–अर्द्धविकसित देशों में उपक्रम का अभाव रहता है। निजी क्षेत्रों में केवल ऐसे ही उद्योगों की स्थापना होती है जिनमें पूंजी कम लगती है, जोखिम कम होता है लाभ की अधिक संभावना होती है। देश के आर्थिक विकास के लिये आधारभूत आर्थिक संरचना की

निर्माण की आवश्यकता होती है। जिनमें लागत अधिक होती है परन्तु लाभ कम होता है। इसलिये सरकारी उद्योगों की स्थापना आवश्यक होती है।

4.उद्योगों से समन्वित विकास की आवश्यकताः—देश की समृद्धि के लिये यह आवश्यक होता है कि उद्योगों का सामंजस्यपूर्ण विकास हो। उदाहरणार्थ—पूंजीगत वस्तुओं के उद्योगों में संतुलन हो, इसके लिये सार्वजनिक क्षेत्र का विकास आवश्यक होता है।

5.उद्योगों की स्थापना वित्त व्यवस्था में सहायकः—उद्योगों की स्थापना किया जाना सरकार के लिये आवश्यक होता है क्योंकि वह देश की योजनाओं के वित्तीय साधनों के रूप में प्रयोग किया जाता है। इसलिये उद्योगों की स्थापना आवश्यक होती है।

2.6. सारांश

लोकदायित्व अधिनियम 1991 प्रतिकर दायित्व के क्षेत्र में एक शास्त्रीय विधान है जो परिसंकटमय पदार्थों, विषयों मे अत्रुटिविहीन का दायित्व अधिरोपित करता है। व्यवसाय एवं उ़द्योगों के सम्बन्ध में अति महत्वपूर्ण विनियामक अधिकरण साबित हो सकता है। परिसंकटमय पदार्थों के प्रहस्तन से उत्पन्न दुर्घटनाओं के शिकार लोगों को तुरन्त अनुतोष देने में वह महत्वपूर्ण भूमिका निभायेगी। जो इस प्रकार है—

1.अधिनियम में उपचार के क्षेत्र का परिसंकटमय पदार्थों के प्रहस्तन से उत्पन्न दुर्घटना तक संकुचित किया गया है। समान खतरनाक दूसरे तत्वों से उत्पन्न दुर्घटनाओं में प्रतिकर देय होगा।

2.केन्द्रीय, राज्य एवं स्थानीय सरकारों द्वारा लोक निगमों को बीमा पालिसी अपनाने से छूट का उपबन्ध है इससे अनिवार्य एवं आज्ञापक बीमा का संकल्पना को अनावश्यक रूप में संकुचित कर दिया गया है।

3.बीमापालिसी लेने, नवीनीकरण एवं अधिनियम का अनुपालन करने में असफलता रहने पर न्यूतम 1 लाख का दण्ड का प्रावधाना है।

4.धारा 3 के अन्तर्गत तुरन्त अनुतोष न देने की दशा में दण्ड निर्धारित नहीं? यह प्रावधान अत्रुटि के सिद्धान्त को दुविधा का विराम में जन्म देता है।

5.अधिनियम समाजकल्याण विधान के रूप में केवल लाभ प्रदान करता है। वायु जल वातावरण जैसे जैव विविधता के सरंक्षण के बारे में यह चुप है।

2.7 पारिभाषिक शब्दावली

1.विधायन–विधि निर्माण करना

2.शास्तियाँ–दण्ड

3.परिसंकटमय पदार्थ–ऐसे पदार्थ जिसमें रासायनिक या भौतिक गुणों के व्यवहार के कारण मानवों, अन्य जीवित प्राणियों, पादपों, सूक्ष्मजीवों, सम्पत्ति अथवा पर्यावरण को अपहानि कर सकती है।

4.प्रहस्तन–व्यवहार।

2.8. अभ्यास प्रश्नों के उत्तर :–

प्र.1. लोकदायित्व बीमा अधिनियम में दुर्घटना, प्रहस्तन, परिसंकटमय पदार्थों को परिभाषित करें?

प्र.2. लोकदायित्व बीमा अधिनियम 1993 में क्या अत्रुटि विहिन दायित्व के सिद्धान्त की संविधिक मान्यता है समझायें?

प्र.3.स्वामी को अनुतोष प्रदान करने का दायित्व कब होता है (धारा 4) में संक्षेप में समझायें?

2.9.संदर्भ ग्रन्थ सूची

1.प्रसाद डॉ0 अनिरूद्ध–पर्यावरण एवं पर्यावरणीय संरक्षण विधि की रूपरेखा

2.उपाध्याय डॉ0 जे0जे0 राम–पर्यावरण विधि

3.सिंह डॉ0 सी0पी0–पर्यावरण विधि

2.9 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

1.अग्रवाल डा0 वी0के0–सस्टेनेबुल उेवलपमेंट एण्ड इन्वायमेंट

2.रवि रवीन्द्र–साइन्स एण्ड स्प्रिट न्यूयाके

2.10 निबन्धात्मक प्रश्न

प्र.1.औद्योगिक इकाईयों की स्थापना के मुख्य मुद्दे (बिन्दु) को समझायें?

प्र.2.लोकदायित्व बीमा अधिक0 1991 में औद्योगिक इकाईयों का क्षेत्रीयकरण पर प्रकाश डालें।

प्र.3.लोकदायित्व अधिनियम में स्वामी के त्रुटि के सिद्धान्त के आधार पर प्रतिकर के दायित्व को समझाते हुये. शस्तियों के प्रावधानों को स्पष्ट करें।

LL.M. PART- I

PAPER –Legal Regulation of Economic Enterprises

ब्लाक–4. कानूनी विनियमन (Legal Regulation)

ईकाई–1.तकनीकी अन्तरण के लिये संधि (सहयोग) करार (Collaboration agreement for technology transfer)

इकाई संरचना

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 तकनीकी अन्तरण की आवश्यकता :

तकनीकी अन्तरण का भारतीय अर्थव्यवस्था में बढ़ता हुआ विदेशी सहयोग

1.3.1 तकनीकी अन्तरण में विदेशी विनियोग स्वीकृतियां और वास्तविक अन्तप्रर्वाह

1.3.2 तकनीकी अन्तरण में विदेशी सहयोग स्वीकृतियों के विभिन्न उद्योगों का भाग

1.3.3 तकनीकी अन्तरण में विदेशी सहयोग स्वीकृतियों के विभिन्न स्वामित्व की सीमा

1.4 विदेशी सहयोग सम्बन्धी तकनीकी अन्तरण की नीतियों का मूल्यांकन

1.4.1 तकनीकी क्रय के लिये स्वीकृत एकमुश्त भुगतान

1.4.2 वित्तीय और तकनीकी सहयोग

1.5 सारांश

1.6 परिभाषिक शब्दावली

1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1.8 संदर्भ–ग्रन्थ–सूची

1.9 सहायक सहयोगी पाठ्य सामाग्री

1.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

अन्तर्राष्ट्रीय विधि के सम्मुख एक विकट चुनौती यह भी है कि किस प्रकार अन्तर्राष्ट्रीय विधि के विकास की गति में वृद्धि करके उसे वैज्ञानिक एवं तकनीकी क्रान्ति के अनुरूप बनाया जाय। मानव की भलाई के लिये विज्ञान तथ्य, तकनीकी उपयोग तथा विधि के सम्बन्ध पर पुनर्विचार की आवश्यकता है। सूचना तथा दूरसंचार तकनीकी के विकास में क्रान्तिकारी उपलब्धियों के परिणामस्वरूप एक राज्य द्वारा दूसरे राज्य को सहयोग एवं करार आवश्यक है। प्रभुत्व सम्पन्नता राष्ट्रीयता आदि धारणाओं की इन क्रान्तिकारी परिवर्तनों ने नींव हिला दी है। इसके अतिरिक्त उच्च क्रान्ति की तकनीकी केवल कुछ विकसित देशों को ही उपलब्ध होने के कारण वह विकासशील देशों पर अनुचित दबाव डालते हैं। वर्तमान एक ध्रुवीय विश्व में इस बात का खतरा और बढ़ गया है कि अमेरिका द्वारा हाल में ही मैं इस पर यह रूस पर यह दबाव डालना कि वह भारत को अन्तरीक्ष राकेट इंजिन न दे और 19 जुलाई 1993 को रूस अमेरिका के दबाव में आकर भारत को क्रायोजेनिक राकेट इंजनों तथा प्रौद्योगिकी की बिक्री के सौदे को रद्द करने पर सहमत हो गया। अमेरिका के साथ रूसी समझौते के अनुसार रूस भारत को कुछ इंजनों की आपूर्ति करेगा लेकिन प्रौद्योगिकी का हस्तांतरण रोक देगा। तकनीकी हस्तान्तरण न केवल किसी एक राष्ट्र को मजबूत बनाता बल्कि सभी राष्ट्रों को मजबूत एवं सुदृढ़ बनाता है यह सहयोग एवं करार अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर होना आवश्यक है।

1.2 उद्देश्य

तकनीकी अन्तरण के लिये सहयोग एवं करार का मुख्य उद्देश्य आयातित तकनीकी प्राप्त करना है। जो देश की आवश्यकता एवं संसाधनों के लिये उचित है। लाइसेन्स प्रणाली को उदार बनाने के लिये नीति सम्बन्धित बहुत से उपायों की घोषणा की गयी तकनीकी सहयोगी निगमों को वित्तीय कसौटियां अर्थात रायल्टी या एक मुश्त भुगतान या दोनों के सम्मिश्रण के आधार पर कार्य करने की इजाजत दी गयी। 1983 में तकनीकी नीति वक्तव्य पेश किया गया इस नीति का उद्देश्य आयातित टेक्नालाजी प्राप्त करना था और इस बात को विश्वास दिलाना था कि वह अद्यतन तकनालाजी हो और देश की आवश्यकताओं और संसाधनों के लिये उचित

हो। लाइसेन्स प्रणाली को उदार बनाने के लिये नीति सम्बन्धित बहुत से उपायों की घोषणा की गयी। जिसमें प्रमुख रूप से 1/2 निजी क्षेत्रों को टेली संचार उपकरणों के निर्माण में भाग लेने की स्वीकृति दी गयी। 2. बहुत सी इलेक्ट्रानिक मदों को एकाधिकारी प्रतिबन्धात्मक व्यापार व्यवहार कानून से छूट दे दी गयी। आदि प्रमुख रहा।

1.3 तकनीकी अन्तरण की आवश्यकता एवं तकनीकी अन्तरण का भारतीय अर्थव्यवस्था में बढ़ता हुआ विदेशी सहयोग :

भारत जैसे अल्पविकसित देश में पूंजी की कमी रही। विकास की गति तेज करने के लिये पूंजी की आवश्यकता में बृद्धि तेजी से हुयी क्योंकि आपके बृद्धि के साथ बचत के तदनुरूप बुद्धि नहीं हुयी इसलिये विदेशी पूंजी इस कमी की पूर्ति कर सकती है। इस कमी के दो स्वरूप है। एक का सम्बन्ध आन्तरिक बचत की कमी से है। दूसरे का सम्बन्ध भुगतान शेष के घाटे से है। पहली प्रकार की कमी अर्थव्यवस्था के विकास की आयोजित दर पर निर्भर करती है इस कमी को पूरा करने के लिये कुछ सीमा तक विदेशी ऋण एवं तकनीकी अन्तरण एवं अनुदान की आवश्यकता पड़ती है। जिसको विदेशी मुद्रा कोष से धन निकाल कर इस कमी को पूरा किया जा सकता है। केवल विदेशी पूंजी की उपलब्धि से आर्थिक विकास संभव नहीं हो सकता इसके लिये आवश्यक है कि विकसित देश अनिश्चित काल के लिये अनुदान के रूप में तकनीकी साधनों का एक तरफा हस्तान्तरण करे। अल्पविकसित देशों के आर्थिक विकास एवं तकनीकी अन्तरण को तीव्र करने में विदेशी पूंजी महत्वपूर्ण योगदान प्रदान कर सकती है। किन्तु इसी पूंजी को ब्याज सहित लौटाना पड़ता है और यही कारण है कि कोई भी देश जो आर्थिक विकास एवं तकनीकी अन्तरण के लिये देशीय साधन जुटा सकता है। विदेशी पूंजी के आगमन के परिणाम स्वरूप विदेशी ऋण का बोझ बढ़ जाता है। इसी कारण देश की विदेशी मुद्रा की भावी प्राप्ति ही मानो गिरवी रख दी जाती है। जिस अल्पविकसित देश का तकनीकी अन्तरण का निर्यात कुछ ही वस्तुओं पर निर्भर हो। उसके आयात की मांग की आय लोच (प्दबवउम मसेंजपबपजल वि कमउंदक)अत्यधिक हो, वह देश बहुत अधिक मात्रा में विदेशी ऋण लेने का

साहस नहीं कर सकता। किसी अल्पविकसित देश की विदेशी ऋण प्राप्त करने की नीति एवं तकनीकी की अन्तरण की आवश्यकता निम्नलिखित आधार पर इस प्रकार है –

1–तकनीकी अन्तरण का कारण एवं आवश्यकता राष्ट्र की संवृद्धि से है इसी कारण देशीय बचतों के आधार पर जितना विनियोग संभव है उसकी अपेक्षा अधिक विनियोग किया जा सकता है। क्योंकि अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में निहित बचतें होती है।

2–तकनीकी अन्तरण से उद्योगों एवं कारखानों को स्थापित किया जाता है क्योंकि उसमें विदेशी सहयोग की आवश्यकता होती है। आर्थिक विकास के लिये अत्यावश्यक परियोजनाओं के लिये वित्त प्रबन्ध करने के उद्देश्य से घरेलू बचतें जुटानी कठिन हो जाती है। विकास की प्रारम्भिक अवस्था में स्वयं पूंजी बाजार में सुधार हो रहा हो अस्थायी उपाय के रूप में विदेशी पूंजी एवं तकनीकी अन्तरण आवश्यक होती है।

3–विदेशी पूंजी के साथ कई आय दुलर्भ उत्पादक तत्व अर्थात तकनीकी जानकारी, व्यापारिक अनुभव और ज्ञान भी प्राप्त होते है। जो आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करते हैं।

तकनीकी अन्तरण का भारतीय अर्थव्यवस्था में बढ़ता हुआ विदेशी सहयोग

Growing Foreign Collaboration in the Technology Transfer :

आयोजन के प्रथम चरण में विदेशी पूंजी के प्रति राष्ट्रीय नीति ने विदेशी पूंजी की आवश्यकता को तकनीकी अन्तरण के लिये स्वीकार किया किन्तु इसे प्रभावी स्थान न देने का निर्णय किया गया। परिणामतः विदेशी पूंजी को अपनी इक्विटी 49 प्रतिशत की अधिकतम सीमा के भीतर रखने का निर्देश दिया गया और भारतीय सहभागी को अधिकांश भाग रखने की इजाजत दी गयी। इसके अतिरिक्त विदेशी सहयोगी फर्मो को प्राथमिक क्षेत्रों में प्रवेश करने की इजाजत दी गयी। विशेषकर ऐसे क्षेत्रों में जिसमें देश ने अपनी सामर्थ्य का विकास नहीं किया हुआ है। परन्तु समग्र रूप से में विदेशी सहयोग के बारे में हमारी नीति प्रतिबन्धात्मक एवं चयनात्मक रही। परिणामतः 1950 से 1970 तक 2475 विदेशी सहयोगो को स्वीकृति प्रदान की गयी। 1981–90 तक 7436 सहयोगी फर्मो ने 1,892 करोड़ रूपये का विनियोग अन्तनिर्दिष्ट था स्वीकृति दी गयी।

1980 के दशक के दौरान सरकार ने विदेशी सहयोगों के प्रति अपनी नीति में ढील दी। यह विशेषकर तेल निर्यातक विकासशील देशों के संदर्भ में किया गया और छूट का एक सुनिश्चित पैकेज तैयार किया गया–

1.टैक्नोलॉजी हस्तान्तरण के साथ सम्बन्ध कायम किये बिना तेल निर्यातक विकासशील देशों के विनियोक्ताओं को नये उद्यमों में 40 प्रतिशत इक्विटी तक के निवेश की सुनिश्चित क्षेत्रों में इजाजत दी गयी।

2.सरकार द्वारा निर्धारित शर्तो के ढांचे के अन्तर्गत अनिवासी भारतीयों को भारतीय औद्योगिक इकाइयों में निर्धारित परियोजना में निवेश की इजाजत दी गयी।

1983 में Technology Policy Statement पेश किया गया इस नीति का मुख्य उद्देश्य आयातित टेक्नालॉजी प्राप्त करना था और इस बात का विश्वास दिलाना था कि वह अद्यतन टेक्नालाजी हो और देश की आवश्यकताओं और संसाधनों के लिये उचित हो। लाइसेन्स प्रणाली को उदार बनाने के लिये नीति सम्बन्धी बहुत से उपायों की घोषणा की गयी–

(अ)26 उद्योगों को छोड़कर अन्य सभी उद्योगों को लाइसेंस प्राप्त करने में छूट दे दी गयी और गैर एम0आर0टी0पी0 (M.R.T.P.) और गैर फेरा कम्पनियों (Non FERA Companies) को भी छूट दी गयी।

(ब)निजी क्षेत्रों को टेली संचार उपकरणों के निर्माण में भाग लेने की स्वीकृति दी गयी।

(स)विदेशी कम्पनियों से इलेक्ट्रानिक हिस्सों के निर्माण की इजाजत दी गयी।

(द)एम0आर0टी0पी0 कम्पनियों को अपने अनुसंधान एंव विकास के परिणामों का वाणिज्यीकरण (Commercialization) कर सकती है। ये राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं के अनुसंधान का भी वाणिज्यीकरण कर सकती है।

तकनीकी सहयोगी नियमों (Technical Collaboration) का वित्तीय कसौटियों अर्थात रायल्टी या एक मुश्त भुगतान या दोनों के सम्मिश्रण के आधार पर कार्य करने की इजाजत दी गयी और परिणामतः 1981–90 के दशक के दौरान स्वीकृतियों की संख्या 7.436 के रिकार्ड पर पहुँच गयी जिसमें 1.274 करोड़ रूपये का कुल विनियोग भी अन्तर्निहित था।

1989–90 के दौरान विदेशी सहयोगी निगमों के देशानुसार विश्लेषण से पता चलता है कि स0रा0अमेरिका (U.S.A.) को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है और इसने 323 करोड़ का विनिवेश किया। यह कुछ विदेशी सहयोग स्वीकृतियों का 1/4 है। इसके बाद क्रमशः आते है– पश्चिमी जर्मनी, जापान, यू0के0 इटली, फ्रांस और स्विटजरलैण्ड द्वारा कुल स्वीकृत विनियोग का 63 प्रतिशत उपलब्ध कराया गया। अनिवासी भारतीय ने लगभग 113 करोड़ रूपये जुटाये जो कुल विनिवेश का 8.9 प्रतिशत था।

विदेशी सहयोग निगमों (Forign Collaborations) के उद्योगवार विश्लेषण से पता चलता है कि इलेक्ट्रिकल एवं इलेक्ट्रानिक्स (जिसमें टेली संचार भी शामिल है) को कुल स्वीकृतियों का 22प्रतिशत प्राप्त हुआ जिससे यह संकेत मिलता है कि इस क्षेत्र को सर्वोच्च प्राथमिकता दी गयी। रसायन में विदेशी विनियोग महत्व की दृष्टि से तीसरे नम्बर पर है। कुछ मिलाकर यह कहना उचित होगा कि प्राथमिक क्षेत्र को कुल स्वीकृतियों का 70 प्रतिशत प्राप्त हुआ इसका तात्पर्य यह है कि विदेशी विनियोग स्वीकृतियां देश में इस समय विदेशी पूंजी के बारे में वर्तमान वातावरण के मोटे तौर पर अनुकूल थी।

1.3.1 तकनीकी अन्तरण में विदेशी विनियोग स्वीकृतियां और वास्तविक अन्तप्रर्वाह

1991 की औद्योगिक नीति की घोषणा के बाद भारत में विदेशी पूंजी के अन्तर्प्रवाह में तेजी आयी है। आर्थिक समीक्षा द्वारा उपलब्ध कराये गये आंकड़ों के अनुसार 1991–92 और 2001–2002 के दौरान कुल विदेशी विनियोग के रूप में 45.0 अरब डालर प्राप्त किये गये जिसमें से 21.7 अरब डालर सं0रा0अमेरिका (U.S.A.) प्राप्त किये गये जिसमें से 21.7 अरब डालर (48.3:) प्रत्यक्ष विदेशी विनियोग के रूप में और शेष 23.7 अरब डालर (51.7प्रतिशत) पोर्टफोलियो विनियोग के रूप में। इससे साफ जाहिर है कि विदेशी फर्मो की प्राथमिकता पोर्ट फोलियो विनियोग के रूप में अधिक था और प्रत्यक्ष विदेशी विनियोग के रूप में कही कम। इसके अतिरिक्त 21.73 अरब डालर के कुल प्रत्यक्ष विदेशी विनियोग में से लगभग 5.8 प्रतिशत अर्थात 2.58 अरब डालर अनिवासी भारतीयों (Non resident Indians)का योगदान था। अतः

विदेशी फर्मो का कुल विदेशी विनियोग के प्रवाह में प्रत्यक्ष विदेशी विनियोग के रूप में योगदान केवल 42.5प्रतिशत था।

तालिका 1 : वर्गानुसार तकनीकी अन्तरण में विदेशी विनियोग

करोड़ 4.5 डालर

	प्रत्यक्ष विदेशी विनियोग	पोर्टपोलियो विनियोग	कुल
1991–92	12.9	0.4	13.3
1992–93	31.9	24.4	55.9
1993–94	58.6	356.7	415.3
1994–95	131.4	382.7	513.8
1995–96	214.4	274.8	189.2
1996–97	282.1	331.2	613.3
1999–2000	215.5	302.6	518.1
2000–2001	233.9	276.0	509.1
2001–2002	390.4	202.1	592.2
2009–10	11.2	22.2	892.0
2010–11	15.2	25.8	615.0
2011–12	–	–	–

उदारीकरण की नीतियों की अनुक्रिया के कारण विदेशी पार्टफोलियो जिसमें विश्व जमा प्राप्तियां भी शामिल है के रूप में विनियोग करने के अधिक इच्छुक थे। विदेशी प्रत्यक्ष विनियोग की उद्योगवार स्वीकृतियों से पता चलता है कि अगस्त 2001–2012 तक की समग्र अवधि के लिये बुनियादी वस्तु उद्योगों के रूप में कुछ विदेशी प्रत्यक्ष विनियोग के 39प्रतिशत को स्वीकृति दी गयी है इसमें मुख्य भाग पावर क्षेत्र का था– 15.6 प्रतिशत और तेल परिष्करणशालाओं का 10.8 प्रतिशत खनन धातु कर्म, और लोह अयस्क का भाग 5.6 प्रतिशत

था, और रसायन का भाग केवल 4.6 प्रतिशत था। विदेशी सहयोग तकनीकी अन्तरण में महत्वपूर्ण होता है।

1.3.2 तकनीकी अन्तरण में विदेशी सहयोग स्वीकृतियों के विभिन्न उद्योग का भाग

प्रत्यक्ष विदेशी निवेश में तकनीकी अन्तरण के रूप में विदेशी सहयोग स्वीकृतियों के विभिन्न उद्योग जैसे पूंजी वस्तुओं, टेली संचार, कम्प्यूटर साफ्टवेयर जो हमारी प्राथमिकता में ऊॅचा स्थान रखते है का भाग 7.5 प्रतिशत थी। चूॅकि वास्तविक अन्तर्प्रवाह के बारे में आकड़े उपलब्ध नहीं थे इस कारण यह कहना बहुत कठिन है कि क्या इस सम्बन्ध में हमारी इच्छाएं वास्तविक रूप धारण कर रही है या नहीं। यह भी हो सकता है कि कार्यान्वयन की प्रक्रिया में इसमें विकृतियां भी उत्पन्न हो जाती है।

औद्योगिक मशीनरी कुल स्वीकृत विनियोग का केवल 1.4 प्रतिशत थी इस परिस्थिति की व्याख्या करते हुये औद्योगिक विकास अध्ययन संस्थान ने यह उल्लेख किया। पूंजी वस्तु क्षेत्र के लिये सीमा शुल्कों में तीन कटौती के कारण विदेशी नियोक्ता भारत को मशीनरी का निर्यात करना अपेक्षाकृत अधिक लाभदायक समझते होगें, इसके बजाय कि देश में मशीनरी का निर्माण किया जाय। यह भी देखा गया है कि इस क्षेत्र की ओर तकनीकी सहयोगों में भी अधिक ध्यान नहीं दिया गया। सार्वजनिक क्षेत्र के लिये आरक्षित क्षेत्रों के उदारीकरण की नीति के कारण औद्योगिक लाइसेंस प्राप्त करने से मुक्ति ही एक ऐसा महत्वपूर्ण नीति सम्बन्धी निर्णय था, जिसने विदेशी प्रत्यक्ष विनियोग के क्षेत्रीय ढांचे को प्रभावित किया।

तकनीकी अन्तरण में प्रत्यक्ष विदेशी विनियोग अगस्त 2008–2011 के दौरान प्राप्त स्वीकृतियों में उपभोग वस्तु क्षेत्र का 15.3 प्रतिशत और पूंजी वसतुओं एवं मशीनरी का 13.1 प्रतिशत और आधार संरचना (Infrastructure) का 49.1 प्रतिशत था लेकिन भारत सरकार ने प्रत्यक्ष विदेशी विनिवेश 50 प्रतिशत से अधिक की इजाजत 2011 में दे दी।

उदाहरणार्थ–हिन्दुस्तान लीवर ने हाल ही में बहुत सी भारतीय कम्पनियों को अपने स्वामित्वाधीन कर लिया जिसमें (बुक बाण्ड, लिफ्टन) टाटा, आयल मिल्स और कई अन्य फर्मो को मिलाकर यूनीलीवर नाम की एक अनुषंगी फर्म कायम कर दी चूॅकि अनुषंगियों में विनियोग

में स्वीकृत विनियोग को शामिल नही किया जाता, ये आकड़े इस फर्म की भारतीय बाजार ढाचे को प्रभावित करने की शक्ति का पूर्ण अनुमान नहीं है।

तालिका –2 विदेशी सहयोग स्वीकृतियों के विभिन्न तकनीकी अन्तरण का भाग
अगस्त 2008–2011

क्र0	उद्योग/तेल	स्वीकृतियों की संख्या	स्वीकृत राशि करोड़ रूपये	कुल विनियोग में भाग प्रतिशत
1.	**आधारभूत (बुनियादी) वस्तुयें**	2, 459	1,07,576	38.8
(a)	पवर	353	43,359	15.7
(b)	तेल परिष्करणशालायें	373	30,008	10.8
(c)	रसायन	1,713	12,734	4.6
(d)	खनन, धातुकर्म और अन्य वस्तुयें	681	15,403	5.6
2.	**पूंजी वस्तुये**	6,538	25,117	9.0
(a)	परिवहन उद्योग	1,172	9,456	3.4
(b)	बिजली उपकरण	1,661	5,963	1.2
(c)	इलेक्ट्रानिक्स	985	3,228	1.2
(d)	अन्य	3,220	6,470	2.3
3.	**वस्तुयें**	6,172	1,02,928	37.1
(a)	टेली संचार	801	55,281	19.9
(b)	कम्प्यूटर साफ्टवेयर	2,353	17,616	6.4
(c)	वित्तीय सेवायें	414	11,760	4.2
(d)	अन्य सेवायें	2,604	18,271	6.6
(4)	चिरस्थायी उपभोक्ता वस्तुयें	159	9,357	3.4
(5)	अन्तवर्ती वस्तुयें	811	4993	1.8
	कुल	21,502	2,77,597	100.0

1.3.3 तकनीकी अन्तरण में स्वीकृतियों का आकार वितरण एवं विदेशी स्वामित्व की सीमा

तकनीकी अन्तरण में विदेशी सहयोग के रूप में भारत में अधिकतर स्वीकृतियां पावर एवं ईधन और आधार संरचना क्षेत्रों में थी, इससे विनियोग स्वीकृतियों का आकार बढ़ गया। विदेशी विनियोग में बड़े आकार वाले विनियोग प्रस्तावों का प्रभुत्व रहेगा और विदेशी सहयोगों की सफलता बड़े आकार वाले प्रस्तावों से आंकी जायेगी।

विदेशी स्वामित्व की सीमा विदेशी मुद्रा विनियम कानून (Foreign Exchange Act) के अधीन विदेशियों को हिस्सा पूंजी स्वामित्व 40 प्रतिशत तक रखने की इजाजत थी। इससे विदेशी फर्मो को प्रधान स्थान प्राप्त करने के विरूद्ध प्रतिरोधक का कार्य किया। 1991 की औद्योगिक नीति की घोषणा के बाद विदेशी कम्पनियों को स्वचालित स्वीकृति के रूप में 51 प्रतिशत तक बहुसंख्य भाग की इजाजत दे दी गयी। परन्तु बाद में इस सीमा को बढ़ाकर 1997 में 74 प्रतिशत कर दी गयी। प्रवासी भारतीयों Non Resident Indian के लिये यह सीमा 100 प्रतिशत कर दी गयी। सरकार उच्च तकनीकी ओर निर्यातोन्मुख विदेशी कम्पनियों में 100 प्रतिशत स्वामित्व की इजाजत दे सकती है।

वित्तीय एवं तकनीकी सहयोग (Financial & Technical Collaborations) वित्तीय एवं तकनीकी सहयोग दो प्रकार के है–

1.तकनीकी स्वीकृतियां जिनमें टेक्नालॉजी के लिये भुगतान करना पड़ता है।

2.वित्तीय सहयोग जिनमें किसी वर्तमान या नई फर्म की हिस्सा पूंजी के लिये भुगतान करना पड़ता है। 600 करोड़ रूपये तक उद्योग मंत्रालय विदेशी विनियोग प्रोन्नति बोर्ड (Foreign Investment Promotion Board) के परामर्श पर स्वीकृति प्रदान करता है। परन्तु इस सीमा से बड़े प्रोजेक्ट विदेशी विनियोग पर मंत्री मण्डल समिति स्वीकृति देती है। विनियोग स्वीकृतियां और वास्तविक प्रवाह में 2010–11 में सं0रा0अमेरिका का सर्वोच्च स्थान था कुल स्वीकृतियों का 20.4 प्रतिशत का 20.4प्रतिशत) वास्तविक प्रवाहों के महत्व की दृष्टि से इसके बाद अनिवासी भारतीयों (Non resident Indians) का नम्बर आता है जिनके द्वारा कुल

वास्तविक प्रवाहों में कुछ महत्व रखने वाले अन्य देश है, जापान, जर्मनी, यू0के0 नीदरलैण्ड, दक्षिण कोरिया, फ्रांस और सिंगापुर।

तकनीकी सहयोगों की संख्या जो 2005 में 1082 थी गिर कर 2006 में 744 हो गयी। शुद्ध रूप से टेक्नालॉजी सहयोगों में हस्तांरण उपायो द्वारा फर्मो की हिस्सा पूंजी खरीद कर वित्तीय सहयोगों में परिवर्तित करने की प्रवृत्ति पायी गयी। 2005 से 2010 तक के दौरान टेक्नालाजी के क्रय के लिये किये गये एकमुश्त भुगतान में सात गुना से भी अधिक बृद्धि हुयी और यह तेजी 2011 में 1980 करोड़ रूपये से बढ़कर 7,198 करोड़ रूपये हो गया।

1.4 विदेशी सहयोग सम्बन्धी तकनीकी अन्तरण की नीतियों का मूल्यांकन

उदारीकरण के समर्थकों ने विदेशी सहयोगी निगमों द्वारा अधिकाधिक मात्रा में विनियोग की स्वीकृति देने के पक्ष में तकनीकी अन्तरण की नीतियों का मूल्यांकन पर बल दिया मुख्यतः यह तर्क दिया कि ईस्ट इण्डिया कम्पनी के दिन अब लद गये है। विदेशी सहयोग द्वारा बहुराष्ट्रीय निगमों या उनके अनुषंगियों द्वारा विनियोग का कार्य उसकी दासता था। विश्व के प्रत्यक्ष विदेशी विनियोग में भारत के भाग की तुलना जब चीन, ब्राजील, मैक्सिकों आदि से की जाती है, तो यह पता चलता है कि भारत का भाग बहुत ही कम है।

भारत में टेक्नालॉजी हस्तांतरण तभी किया जा सकता है यदि तकनीकी दृष्टि को उन्नत देश बहुराष्ट्रीय निगमों के माध्यम द्वारा अधिक प्रत्यक्ष विनियोग करे इन लाभों से तो आलोचक भी इंकार नहीं करते परन्तु वस्तु स्थिति यह है कि प्रत्यक्ष विदेशी विनियोग के कुछ पहलू ऐसे है जिनका प्रभाव जनकल्याण एवं राष्ट्रीय प्रभुसत्ता पर गम्भीर रूप में पड़ता है। इन पहलुओं पर गम्भीरता से विचार करना होगा।

विदेशी प्रत्यक्ष विनियेग जो सभी विकासशील देशों के लिये 2002 में 204.8 अरब डालर हो गया जो 1991 में 51.1 अरब यू0एस0 डालर था। विदेशी प्रत्यक्ष विनियोग में भारत का भाग जो 1992 में 0.5 प्रतिशत बढ़कर 2001 में 1.7 प्रतिशत हो गया। इसके विरूद्ध चीन का भाग जो 1992 में 21.8 प्रतिशत था वह बढ़कर 2001 22.9 प्रतिशत हो यगा। कुल रूप में चीन का भाग 46.8 अरब डालर था। भारत का भाग केवल 3.40 अरब डालर था। विदेशी निवेशकों के

सामने लाल कालीन बिछाने के बावजूद भारत विदेशी प्रत्यक्ष विनियोग से अधिक लाभ प्राप्त नहीं कर पाया।

तालिका

तकनीकी अन्तरण में विदेशी प्रत्यक्ष सहयोग करोड़ यू0एस0 डालर

देश	2002	2005	2011
चीन	1,115.6	3,584.6	4,684.1
भारत	23.3	214.4	340.3
इण्डोनेशिया	177.7	434.6	−327.7
दक्षिण कोरिया	72.7	135.7	319.8
मलेशिया	518.3	581.6	55.4
फिलिपीन्स	22.3	145.9	179.2
थाईलैण्ड	211.4	200.0	375.9
भारत का भाग	0.5	0.9	1.7

1.4.1 तकनीकी क्रम के लिये स्वीकृत एकमुश्त भुगतान

वर्ष	करोड़ रूपये
2001	980
2002	2,2281
2003	3,690
2004	2,300
2005	7,188

तकनीकी सहयोग 2005 में 982 थी गिरकर 2006 में 744 हो गयी। शुद्ध रूप में टेक्नालॉजी सहयोगों को हस्तान्तरण उपायो द्वारा फर्मो की हिस्सा पूंजी खरीद कर वित्तीय सहयोगों में परिवर्तित करने की प्रवृत्ति पायी गयी 2001 से 2005 के दौरान टेक्नालॉजी के रूप में लिये

किये गये एकमुश्त भुगतान में सात गुना से अधिक बृद्धि हुयी और यह बहुत तेजी से 2001 में 980 करोड़ रूपये से बढ़कर 7,198 करोड़ रूपये हो गया।

भारत में किया गया पोर्टफोलियो विनियोग एक प्रकार की क्षुब्ध मुद्रा है जो यदि बाजार से कोई प्रतिकूल संकेत मिलता है, तो फौरन पलायन कर सकती है। अतः पोर्टफोलियो विनियोग को अपने विकास के लिये एक स्थिर कारण तत्व मान लेना भूल होगी।

1.4.2 तकनीकी अन्तरण में वित्तीय एवं तकनीकी सहयोग

तकनीकी अन्तरण में वित्तीय एवं तकनीकी सहयोग दो प्रकार से दी जाती है। 1– तकनीकी स्वीकृतियां जिनमें टेक्नालॉजी के लिये भुगतान करना पड़ता है। 2– वित्तीय सहयोग जिनमें किसी वर्तमान या नई फर्म की हिस्सा पूंजी के लिये भुगतान करना पड़ता है। अनिवासी भारतीय सभी देशों की तुलना में सुनिश्चित रूप में श्रेष्ठ है और इनके द्वारा वास्तवविक प्रवाह कुल स्वीकृतियों का 91 प्रतिशत है। मारिशस का स्थान इसके बाद है और उसका यह अनुपात 53 प्रतिशत है इनके बाद क्रमानुसार है जापान, इटली, नीदरलैण्ड, जर्मनी, फ्रांस और दक्षिण कोरिया आदि विदेशी मुद्रा सम्बन्धी घाटा 1600 करोड़ रूपये हो गया। इसी प्रकार टेक्नालॉजी लाभांश यात्रा आदि के लिये भी विदेशी मुद्रा में तीव्र वृद्धि होकर यह 180 करोड़ रूपये से बढ़कर 500 करोड़ रूपये हो गयी।

अतः विदेशी विनियोग के आयात और निर्यात में कोई प्रत्यक्ष और सकारात्मक सम्बन्ध नहीं है। इससे यह बात साफ हो जाती है यदि निर्यात वृद्धि मुख्य उद्देश्य है तो विदेशी विनियोग अधिक चयनात्मक (Selective) होना चाहिये।

1.5 सारांश

भारत में तकनीकी अन्तरण के लिये सहयोग एवं करार तभी किया जा सकता है यदि तकनीकी दृष्टि से उन्नत देश बहुराष्ट्रीय निगमों के माध्यम द्वारा अधिक प्रत्यक्ष विनियोग करे। इन लाभों से तो आलोचक भी इंकार नहीं करते परन्तु वस्तु स्थिति यह है कि प्रत्यक्ष विदेशी विनियोग के कुछ पहलू ऐसे है जिनका प्रभाव जनकल्याण एवं राष्ट्रीय प्रभुसत्ता पर गम्भीर रूप में पड़ता है

इन पहलुओं पर गम्भीरता से विचार करना चाहिये। वर्तमान प्रत्यक्ष विदेशी निवेश में भारत का हिस्सा विनियोग में हिस्सा 1.7 प्रतिशत ही सम्भव है कि 2015 तक 2प्रतिशत हो जायेगा। प्रत्यक्ष विदेशी विनियोग के भारी अन्तप्रर्वाह से विशेषकर वित्तीय क्षेत्र में हमारे विदेशी मुद्रा रिजर्व बढ़ जायेगी जिनके आधार पर देशीय मुद्रा संभरण का विस्तार होगा। इस प्रक्रिया में कीमतों की स्फीतिकारी प्रवृत्ति को बल प्राप्त होता है। तकनीकी अन्तरण द्वारा बहुराष्ट्रीय निगम भारतीय कम्पनियों में प्रवेश के पश्चात् इनमें अपना हिस्सा पूंजी बढ़ती जाती है और इस प्रकार वे भारतीय कम्पनियों को निकाल कर अपना अधिपत्य स्थापित कर लेती है। इस प्रकार बहुत सी भारतीय कम्पनियों पर बहुराष्ट्रीय निगमों ने अपना कब्जा जमा लिया है और निगम क्षेत्र के भारतीकरण की जो प्रक्रिया जे0एल नेहरू ने आरम्भ किया था वह पूर्णतः उलट गयी है। इससे भारतीय निजी क्षेत्र में भारी झटका मिला है यही कारण है कि भारत के बड़े उद्योगपतियों ने बाम्बे क्लब या अधिक भारतीय विनिर्माता संघ ने सरकार की उन भेदभावपूर्ण नीतियों के विरूद्ध आवाज उठायी जिनके द्वारा विदेशी पूजी को देशी पूंजी की कीमत पर आकर्षित किया जा रहा है।

हाल ही में बहुराष्ट्रीय निगमों ने पूर्ण स्वामित्वाधीन अनुषंगी मार्गो के आधार पर भारत में अपने व्यापार का विस्तार करने का फैसला किया है जो वर्तमान स्थापित एवं अनुसूचित अनुषंगी कम्पनियों की कीमत पर किया जा रहा है। जो तकनीकी अन्तरण के लिये अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सहयोग एवं करार किया जायेगा वह भारत को एक समृद्धिशाली लोक कल्याणकारी राज्य बनायेगा।

बहुराष्ट्रीय कम्पनियों ने अनुषंगी कम्पनियों में प्रचलित बाजार की कीमतों की तुलना में भारी बट्टे (Discount) के आधार पर अपनी हिस्सा पूंजी बढ़ा ली है। इसके लिये उन्होंने कम्पनियों से हिस्सा के प्राथमिकतापूर्ण आवंटन की मांग की और बदले में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों ने आश्वासन दिया कि वे इनके लिये नयी पूंजी लायेगें और इनमें अद्यतन टेक्नालॉजी और विज्ञान कौशल प्रयोग में लायेगे। साथ ही वे भारतीय सम्बद्ध कम्पनी को अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टि से अधिक प्रतिस्पर्धी बनाने में सहायता देगें और इनकी वृद्धि दर को त्वरित करेंगे। भारतीय

सम्बद्ध फर्मो को अपने कार्यक्षेत्र से बाहर रहने की चाल ने भारतीय हितों पर गहरी चोट की है। परन्तु इससे भी अधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि अधिक आकर्षक एवं लाभदायक व्यापार को तो पूर्ण स्वामित्वाधीन एवं नवस्थापित अनुषंगी कम्पनियों में हस्तान्तरित कर दिया गया है। अतः पूर्ण स्वामित्वाधीन अनुषंगियों और 51 प्रतिशत स्वामित्व वाली सम्बद्ध कम्पनियों के बीच हिता की टक्कर हो गयी परन्तु बहुराष्ट्रीय निगमों ने सम्बद्ध कम्पनियों में बहुसंख्यक हिस्से प्राप्त कर लिये भारतीय अल्पसंख्यक विनियोक्ता किसी भी जवाबी कार्यवाही के लिये शक्तिहीन हो गये। भारतीय उद्योगपति यह महसूस करते है कि यह नई चाल दिन दहाड़े डाका है क्योंकि बहुराष्ट्रीय निगम स्थापित ब्रैंड वाली वस्तुओं पर लाभ कमाना चाहते है। भारत में विदेशी मुद्रा निवास की प्रक्रिया त्वरित होगी अतः सरकार के लिये यह जरूरी हो जाता है कि वह भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड और भारतीय रिजर्व बैंक को इन कुरीतियों को फौरन बन्द कराने के लिये उपचारात्मक उपाय करने के लिये कहे।

अतः सारांशतः यह कहा जा सकता है कि बहुराष्ट्रीय निगमों द्वारा भारत में तकनीकी अन्तरण के लिये सहयोग करार निगमों द्वारा पूंजी अन्तर्प्रवाहों की इजाजत की जानी चाहिये परन्तु ऐसा भारतीय राष्ट्रीय हितों की कीमत पर करने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिये। सरकार का खुले क्षरण नीति को छोड़कर चयनात्मक नीति अपनानी चाहिये।

1.6 परिभाषित शब्दावली

1.अनुज्ञात्मक धाराओं (Permissive Clauses)

स्वीकारात्मक उपबन्ध जिन्हे अन्तर्राष्ट्रीय निगम एवं भारत सरकार दोनों सहमति प्रदान करें।

2.विनियोक्ता – मालिक

3.टेक्नालॉजी हस्तान्तरण – तकनीकी अन्तरण

4.अनिवासी भारतीय– ऐसे व्यक्ति जिनका जन्म भारत में हुआ हो लेकिन वे अपना कारोबार भारत से बाहर करते हो और वहां रहते हो।

1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

प्रश्न–1 भारत में तकनीकी अन्तरण का उद्देश्य क्या है?

प्रश्न–2 भारत में तकनीकी अन्तरण की आवश्यकता क्यो पड़ी?

प्रश्न–3 तकनीकी अन्तरण का भारतीय अर्थव्यवस्था में बढ़ता हुआ प्रभाव पर प्रकाश डाले?

1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1.मनोरमा वार्षिक पत्रिका – 2012

2.भारतीय अर्थव्यवस्था – मिश्रा एवं पूरी

3.भारत सरकार आर्थिक समीक्षा – 2010–11

4.भारतीय अर्थव्यवस्था – आनन्द शुक्ला

1.9 सहायक उपयोगी पाठय सामाग्री :

1.प्रतियोगिता दर्पण आर्थिक समीक्षा

2.घटनाचक्र वार्षिक 2012

3.घटना सार वार्षिक सर्वेक्षण 2012

1.10 निबन्धात्मक प्रश्न

प्रश्न–1 विदेशी सहयोग सम्बन्धी तकनीकी अन्तरण की नीतियों का मूल्यांकन कीजिए?

प्रश्न–2 तकनीकी अन्तरण में विदेशी विनियोग स्वीकृतियों और वास्तविक अन्तप्रर्वाह को समझायें।

प्रश्न–3तकनीकी अन्तरण में स्वीकृतियों का आकार वितरण एवं विदेशी स्वामित्व की सीमा को समझायें?

LL.M. PART- I

PAPER –Legal Regulation of Economic Enterprises

ब्लाक–4. कानूनी विनियमन (Legal Regulation)

ईकाई–2. भारत में विनियोग : विदेशी प्रत्यक्ष निवेश विनियोग और अनिवासी भारतीयों का (Investment in India : FDIs & NRIs Investment abroad)

इकाई संरचना

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 भारत में विनियोग विदेशी सहायता और भारत का आर्थिक विकास

2.3.1 विदेशी पूंजी की आवश्यकता

2.3.2 विदेशी विनियोग नीति

2.3.3 भारतीय अर्थव्यवस्था में बढ़ता हुआ विदेशी सहयोग

2.4 विदेशी प्रत्यक्ष विनियोग और अनिवासी भारतीयों का विदेशों में विनियोग

2.4.1 विदेशी पूंजी एवं अप्रवासी भारतीयों के धन से सम्पन्न होता भारत,

2.4.2 विदेशी सहायता की पंचवर्षीय योजनाएँ एवं आर्थिक विकास पर विदेशी सहायता का प्रभाव

2.5 सारांश

2.6 परिभाषित शब्दावली

2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

2.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

2.9 सहायक उपयोगी पाठ्यक्रम

2.10 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

भारत एक अल्पविकसित देश है। जहाँ आर्थिक विकास हेतु आवश्यक पूंजी का अभाव है। इसी कमी को दूर करने के लिये विदेशी पूँजी की आवश्यकता पड़ती है। विदेशी पूंजी रियायती सहायता एवं गैर रियायती सहायता के रूप में विदेशी निवेश के रूप में प्राप्त होती है। जहां अनुदान तथा कम ब्याज दर व लम्बी भुगतान अवधि वाले ऋण रियायती सहायता के रूप में है, वही विदेशी वाणिज्यिक ऋण, विदेशों से बाजार दरों पर प्राप्त ऋण तथा अप्रवासी भारतीयों से प्राप्त जमा राशियां गैर रियायती सहायता के रूप में है। इसके सिवाय विभिन्न भारतीय कम्पनियां विदेशी कम्पनियों के साथ तकनीकी समझौता करती है या विदेशी पूंजीपति भारतीय उद्यमों में अपना धन निवेश करते है। इससे देश में उन्नत तकनीक, आधुनिक मशीनरी, विषेषज्ञों की सेवाओं आदि का आगमन हो जाता है। जिससे भारतीय उद्यमों के उत्पादन एवं उत्पादकता में वृद्धि होती है। विदेशी पूंजी भारत के अप्रयुक्त संसाधनों का पूर्ण सदुपयोग करने के लिये आवश्यक हो गया है। साथ ही इसकी सहायता से एक बार उद्योगों में स्थापना हो जाने पर देशी बचत को भी इनकी ओर उन्मुख किया जाता है। देश को गरीबी की जाल से निकालने के लिये जिस विशाल मात्रा में पूंजी के प्राथमिक विनियोग की आवश्यकता है उसकी पूर्ति सिर्फ घरेलू संसाधनों से करना संभव नहीं उसे विदेशी सहायता से भी पूरा किया जा सकता है।

आजादी के बाद भारत में विदेशी पूंजी को विशेष महत्व नहीं दिया गया क्योंकि ब्रिटिश शासन के शोषणात्मक रूप से भारतीय अच्छी तरह परिचित थे। लेकिन 1948 के औद्योगिक नीति प्रस्ताव ने विदेशी पूंजी के महत्व को स्वीकार किया किया विदेशी पूंजी का निवेश जहां भी हो उस उद्यम का स्थायित्व और प्रबन्धन भारतीय हाथों में हो। विदेशी तकनीकी विशेषज्ञ सिर्फ उत्पादन कार्यो के लिये नहीं बल्कि देश के तकनीशियनों के प्रशिक्षण के लिये भी आमंत्रित किये गये। विदेशी पूंजीपतियों को यह आश्वासन दिया गया कि भारत सरकार विदेशी तथा भारतीय पूंजी के बीच किसी प्रकार का भेदभाव नहीं करेगी। उन्हें नाम कमाने का पूरा अवसर देगी और विदेशी पूंजी वाले किसी उद्योग का राष्ट्रीयकरण करने पर उन्हें हर्जाना भी देगी। 1972 में भारत सरकार ने पूर्ण स्थायित्व वाले विदेशी कम्पनियों को शतप्रतिशत निर्यात करने वाली इकाईयों की स्थापना की अनुमति प्रदान की। इस प्रकार भारत ने विदेशी पूंजी को आमंत्रित करने को प्रोत्साहन दिया गया लेकिन जनता पार्टी सरकार ने इस नीति को उलट दिया यह घोषणा किया कि उसकी नीति उस क्षेत्रों में विदेशी पूंजी की भागीदारी को समाप्त कर देना हैं जहां भारतीय पूंजी एवं विशेषज्ञता उपलब्ध है। विदेशी पूंजी को सिर्फ उच्च तकनीक एवं मशीनों के आयात हेतु ही आमंत्रित किये जाये तथा उपभोक्ता वस्तुओं के

उत्पादन से हटा दिये जाय। इसी कारण सराकर ने कोका कोला कम्पनी एवं इण्टरनेशनल विजनेस मशीन (IBM) को भारत से अपनी गतिविधियों को समेट लेने का आदेश दिया।
1991 की औद्योगिक नीति ने विदेशी पूंजी को आमंत्रित करने के प्रति सरकार श्री उदारवादी नीति 40 प्रतिशत से बढ़कर 51प्रतिशत तक करने की अनुमति दी गयी जिसमें विद्युत क्षेत्र में शतप्रतिशत करने की नीति बनयी गयी। उच्च प्राथमिकता वाले 34 उद्यमों में 515 विदेशी पूंजी निवेश की अनुमति दी गयी। भारतीय कम्पनियों को विदेशी कम्पनियों के साथ प्रौद्योगिकी हस्तांतरण की शर्तो की अनुमति प्रदान की गयी। वर्तमान भारत सरकार ने भारतीय इक्विटी बाजारों में योग्य विदेशी निवेशक (ळथ्प्) को सीधे निवेश करने की इजाजत जनवरी 2012 में भी आर0बी0आई0 (रिजर्व बैंक आफ इण्डिया) एवं एस0ई0बी0आई0 ने इस योजना के लिये थ्म्ड। 1999 के तहत 13 जनवरी 2012 को विस्तृत दिशा निर्देश जारी कियेः–

- सरकार ने ऐसे निवेशकों का वर्ग व्यापक करने, अधिक विदेशी निधि आकर्षित करने, बाजार में अस्थिरता कम करने एवं भारतीय पूंजी बाजार को मजबूती देने के लिये किया गया।
- OFI में विदेशों में रहने वाले उन व्यक्तियों, समूहों अथवा संघों को शामिल किया गया जायेगा जो वित्तीय कार्यवाही सम्बन्धी कृतिक बल का अनुपालन कर रहे है और जिन्होने प्branch अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिभूति आयोग संगठन के समझौते पर हस्ताक्षर किये है। ळथ्प् में थ्प्प् उपखाते शामिल नहीं है। सेवी में पंजीकृत क्वालिफाइड डिपाजिटरी के जरिये ळथ्प् के लिये व्यक्तिगत एक कुल निवेश सीमा किसी भी भारतीय कम्पनी की पेड आफ कैपिटल (चुकता पूंजी) का क्रमशः 5 एवं 10 प्रतिशत होगी। यह सीमा भारत में विदेशी निवेश से जुड़ी पोर्टफोलियो इन्वेस्टमेन्ट स्कीम (च्पै) के तहत तय FII एवं NRIs निवेश सीमा के अतिरिक्त होगी।

अन्तर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में भारत का निवेश वातावरण में कारोबार करना विकास में आने वाली बाधाओं को दूर करना है। भारत में पिछले कुछ वर्षो से दक्षिण एशिया राष्ट्रों में सबसे अधिक निवेश किया है।

2.2 उद्देश्य

भारतीय नियोजन पद्धति सार्वजनिक क्षेत्र के अधिकाधिक विकास की कार्य नीति पर आधारित थी। स्वतन्त्रता पूर्व देश की अर्थव्यवस्था का इतना अधिक दोहन हुआ था कि उसको पुनजीर्वित एवं पुर्नस्थापित करना अत्यन्त दुष्कर कार्य था। देश का निजी क्षेत्र आर्थिक स्थिति सुधारने में न तो सक्षम था और न ही इच्छुक अतः सार्वजनिक क्षेत्र के माध्यम से ही विकास किया जा

सकता था। ब्रिटिश काल में भारत की आर्थिक परिदृश्य इतनी कमजोर हो गयी थी कि लोगों को उत्पादक गतिविधियों में विनियोग करके जोखिम उठाने की प्रवृत्ति समाप्त हो गयी थी। भारत के पूर्व प्रधानमंत्री पं0 जे0एल0 नेहरू ने भारत के सार्वजनिक क्षेत्र में निवेश के उद्देश्य का बताते हुये कहा कि –

''हमें सार्वजनिक क्षेत्र का तेजी से विस्तार करना है। इसे न केवल उन क्षेत्रों में विकास करना है जिसके लिये निजी क्षेत्र इच्छुक नहीं है या करने में असमर्थ है बल्कि अर्थव्यवस्था के समग्र विनियोग ढाँचे को बदलने में प्रभावी कार्य अदा करना है, चाहे वह स्वयं प्रत्यक्ष रूप में विनियोग करे या वे विनियोग निजी क्षेत्र द्वारा किये जाये'' एक विकासशील अर्थव्यवस्था में जिसका अधिकाधिक विभाजन हो रहा हो, सरकारी और गैर सरकारी दोनों क्षेत्रों के एक साथ विकास की कार्य की गुजांइश है। सार्वजनिक क्षेत्र को न केवल परम् रूप में बल्कि सापेक्ष रूप में भी निजी क्षेत्र की तुलना में अधिक गति से आये बढ़ाना है।

भारतीय अर्थव्यवस्था मिश्रित अर्थव्यवस्था है जिसमें पूंजीवादी एवं समाजवादी व्यवस्था के मध्य रास्ता अपनाया और निजी एवं सार्वजनिक दोनों क्षेत्रों का मिश्रित विकास किया। सार्वजनिक क्षेत्र में उद्यमों के केन्द्र सरकार ने निवेश 71.9 प्रतिशत तथा सेवा क्षेत्र में 27.4 प्रतिशत और कम्पनी क्षेत्र में 0.5 प्रतिशत की नीति को अपनायी। भारतीय अर्थव्यवस्था में सार्वजनिक क्षेत्रों के उद्यमों को अर्थव्यवस्था का रीढ़ समझा जाता है और ये तभी सुदृढ़ हो गये जब इसमें विदेशी विनियोग होगा क्योंकि आधुनिक अर्थव्यवस्था चाहे किसी भी राष्ट्र की हो बिना विनियोग के सुदृढ़ नही हो सकती इसलिये राष्ट्र को सुदृढ़ बनाने में सार्वजनिक क्षेत्रों में विनियोग आवश्यक है। क्योंकि इस विनियोग में विदेशी प्रत्यक्ष निवेश एवं अप्रवासी भारतीयों का निवेश महत्वपूर्ण होगा।

2.3 भारत में विनियोग (निवेश) : विदेशी सहायता एवं भारत का आर्थिक विकास

भारतीय संसद के 1991 की औद्योगिक नीति में विदेशी पूंजी को आमंत्रित करने के प्रति सरकार का उदारवादी विचार सामने आया। सरकार ने इस नीति में औद्योगिक इकाईयों में विदेशी पूंजी को 40प्रतिशत से बढ़ाकर 51प्रतिशत करने की अनुमति प्रदान की। निर्यातोन्मुख इकाईयों तथा विद्युत उत्पादन के क्षेत्र में इसे शतप्रतिशत करने का भी प्रावधान किया। उच्च प्राथमिकता वाले 34 उद्योगों में 51.5 तक विदेशी पूंजी के विनियोग से स्वतः अनुमति प्राप्त होगी। होटल तथा पर्यटन क्षेत्रों में भी उन्हे 51 प्रतिशत निवेश की अनुमति दी गयी। विदेशी फार्मो को भारत में पूंजी विनियोग करते समय आधुनिक तकनीक लाने की बाध्यता को समाप्त कर दिया गया। भारतीय कम्पनियों को विदेशी कम्पनियों के साथ प्रौद्योगिक हस्तान्तरण की शर्तो का स्वयं विनिर्धारण करने की अनुमति दे दी गयी साथ ही उनके लिये विदेशी विशेषज्ञों

की सेवाएं प्राप्त करने हेतु सरकार भी पूर्व अनुमति लेना आवश्यक नहीं होगा। पंचवर्षीय योजना में भारत को प्राप्त होने वाली विदेशी सहायता में ऋणों का हिस्सा सबसे अधिक सातवी पंचवर्षीय योजना में था।

2.3.1 विदेशी पूंजी की आवश्यकता

विश्व के औद्योगिक विकास में आर्थिक विकास के लिये अग्रसर सभी देशों को किसी न किसी सीमा तक विदेशी सहायता पर निर्भर रहना पड़ा है सिवायं इंग्लैण्ड के राष्ट्रीय संसाधनों को गतिमान करने की सीमा, तकनीकी प्रगति की दृष्टि से राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की स्थिति और अपनी अपनी सरकार के रवैये के कारण विदेशी सहायता पर निर्भरता की मात्रा भिन्न–भिन्न रही है। विदेशी पूंजी ने आर्थिक विकास और औद्योगिकरण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। भारत जैसे अल्पविकसित देश में पूंजी की आवश्यकता रही इसलिये विकास की गति तीव्र करने के लिये पूंजी की आवश्यकता में वृद्धि हुयी चूँकि आपकी बृद्धि के साथ बचत के तद्नुरूप बृद्धि नहीं हुयी इसलिये विदेशी पूंजी इस कमी की पूर्ति कर सकती है। इस कमी के दो रूप है :–

(i)आन्तरिक बचत की कमी से

(ii)भुगतान शेष (Balance of payments) के घाटे से

(1)पहली प्रकार की कमी अर्थव्यवस्था के विकास की आयोजित दर पर निर्भर करती है यदि निवेश की आयोजित दर के अनुरूप आवश्यक आन्तरिक बचत न हो तो उसे पूंजी की कमी कहा जाता है इस कमी को पूरा करने के लिये कुछ सीमा तक विदेशों से ऋण और अनुदान की आवश्यकता लेना आवश्यक हो जाता है। उत्पादन के विकास दर के अवसर पर निर्यात और आयात में संभावित वृद्धि का अनुमान लगाया जाता है।

(2)दूसरे प्रकार की कमी से भुगतान शेष का घाटा होता है इसकी पूर्ति ऋणों एवं अनुदानों को होता है। दोनों प्रकार की कमी पूर्णतया एक साथ होना आवश्यक नहीं, क्योंकि विदेशी मुद्राकोष से धन निकाल कर इस कमी को पूरा किया जा सकता है। भारत आर्थिक विकास अल्प विकसित देश के रूप में माना जाता है जिसमें विदेशी पूंजी का निवेश आवश्यक होता है क्योंकि पूंजी का ब्याज सहित लौटाना भी पड़ता है इसी कारण से कोई भी देश जो आर्थिक विकास के बिना देशीय साधन जुटा सकता है, वह विदेशी पूंजी पर निर्भर नहीं रहना चाहता क्योंकि उससे विदेशी ऋण का बोझ बढ़ जाता है और देश की मुद्रा की भावी प्राप्ति मानो गिरवी रख दी जाती है।

अल्पविकसित देशों के लिये विदेशी ऋण प्राप्त करना इसलिये आवश्यक होता है बिना उसके विकास संभव नहीं है लेकिन इसके लिये निम्नलिखित आधार दे–

(क) देशीय बचतों के आधार पर जितना निवेश संभव है उसकी अपेक्षा अधिक निवेश किया जा सकता है। अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में निहित बचते होती है इसलिये देशीय बचतों के प्रोत्साहन के लिये विदेशो से ऋण प्राप्त को उचित ठहराया जा सकता है।

(ख) आर्थिक विकास हेतु परियोजनाओं के लिये वित्त प्रबन्ध करने के उद्देश्य से घरेलू बचते जुटानी कठिन हो जाती है। विकास के प्रारम्भिक अवस्था में स्वयं पूंजी बाजार अल्पविकसित होता है। इस अवधि में जब पूंजी बाजार के सुधार हो रहा हो तो अस्थायी उपाय के रूप में विदेशी पूंजी अत्यावश्यक होती है।

(ग) विदेशी पूंजी के साथ कई आय कठिन उत्पादक तत्व अर्थात तकनीकी की सामान्य जानकारी, व्यापारिक अनुभव और ज्ञान भी प्राप्त होते है, जो आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

2.3.2 विदेशी निवेश नीति (Foreign Investment Policy)

1991 की औद्योगिक नीति में विदेशी निवेश को उदार बनाने का निर्णय किया गया जिसमें केन्द्र सरकार ने 51 प्रतिशत इक्विटी (अंशपूंजी) स्वीकृति प्रदान की। केन्द्र सरकार ने थ्वतमपहद प्दअमेजउमदज च्तवउवजपवद ठवंतक (विदेशी निवेश संवर्धन बोर्ड) को स्थापित किया जिससे विदेशी पूंजी निवेश के आवेदनों को तुरन्त स्वीकृत प्रदान किया जा सके। 1992–93 में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (Direct Foreign Investment) और पोर्टफोलियो निवेश (Portpolio Investment), अनिवासी भारतीयो द्वारा विनियोग को प्रोत्साहित करने के लिये निम्नलिखित उपाय किये गये–

1.उपयोग में आने वाली वस्तुओं की अपेक्षा 51 प्रतिशत अंशपूंजी तक विदेशी निवेश के लिये पहले से लागू लाभांश संतुलन शर्त लागू नहीं होगी।

2.कुछ निर्धारित निर्देशों के अधीन विदेशी अंशपूंजी वाली कम्पनियां अपनी अंशपूजी को 51 प्रतिशत तक बढ़ा सकती है। प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के लिये भी तेल, शोधन, गैस के विपणन के क्षेत्र में अनुमति दी गयी।

3.अनिवासी भारतीयों और उनके अधिपत्याधीन समुद्रपारीय नियमित निकायों (Overseas Coporate Bodies) को उच्च प्राथमिकता प्राप्त उद्योगों में शतप्रतिशत अंशपूंजी तक निवेश करने की इजाजत दी गयी। उन्हें अपनी पूंजी एवं आय के प्रत्यावर्तन की भी अनुमति होगी। अनिवासी भारतीया (Non resident Indians) को निर्यात गृहों, व्यापार ग्रहों, स्टार व्यापार गहों, रूग्ण उद्योगों, अस्पतालों, पर्यटन उद्योगों आदि में शतप्रतिशत निवेश की इजाजत दी

गयी। भारतीय मूल के विदेशी नागरिकों को भारतीय रिजर्व बैंक की अनुमति बिना आवासीय सम्पत्ति अधिग्रहीत करने की इजाजत दी गयी।

4.भारत ने विदेशी निवेशकों के संरक्षण के लिये बहुपक्षीय निवेश गारंण्टी एजेन्सी प्रोटोकाल पर हस्ताक्षर कर दिया।

5.विदेशी मुद्रा विनियम अधि0 (FERA- Fereign Excharge Regulation Act) के अध्यादेश को उदार बनाया जिसके परिणाम स्वरूप 40 प्रतिशत से अधिक विदेशी अंशपूंजी वाली कम्पनियों को पूर्णतः स्वामित्व वाली भारतीय कम्पनियों के बराबर समझा जायेगा।

6.विदेशी कम्पनियों को देशी बिक्री के सम्बन्ध में ट्रेडमार्क के प्रयोग की अनुमति दी गयी और 1997 में विदेशी अंशपूंजी का निवेश 74 प्रतिशत तथा अनिवासी भारतीयों को शतप्रतिशत करने की भारत सरकार द्वारा अनुमति दी गयी।

2.3.3भारतीय अर्थव्यवस्था में बढ़ता हुआ विदेशी सहयोग

Growing Foreign Collaboration in Indian Economy

भारत में पंचवर्षीय योजना के प्रारम्भिक चरणों में विदेशी पूंजी प्राप्ति को स्वीकार किया गया लेकिन उसे उचित स्थान न देने का निर्णय भी लिया गया। कि वह 49 प्रतिशत से अधिक नहीं रखी जायेगी और भारतीय सहयोगी को अधिकांश भाग रखने की इजाजत दी गयी साथ ही साथ विदेशी सहयोगी फर्मो को भी प्राथमिकता दी गयी। विदेशी सहयोग के बारे में केन्द्र सरकार की नीति प्रतिबन्धात्मक एवं चयनात्मक बनायी गयी। जिसके परिणाम स्वरूप 1961–70 के दौरान 2,475 विदेशी सहयोगों को स्वीकृत दिया गया वर्तमान समय में 311.5 मिलियन डालर हो गया। (सत्र 2010–11) 1980 के दशक के बाद सरकार ने विदेशी सहयोगों के प्रति अपनी नीति में ढील दी जो विशेषतः तेल निर्यातक विकासशील देशों के संदर्भ में किया गया। अन्य क्षेत्रों में भी निवेश नीति को उदार बनाया गया।

1.तकनीकी हस्तान्तरण के क्षेत्र में 40प्रतिशत तक विदेशी सहयोग को इजाजत दी गयी।

2.अनिवासी भारतीयों को भारतीय उद्योगों में पूंजी निवेश की इजाजत दी गयी।

3.निजी क्षेत्रों के टेली संचार उपकरणों के निर्माण में भी स्वीकृति प्रदान की गयी।

4.विदेशी कम्पनियों को इलेक्ट्रानिक हिस्सों के निर्माण की इजाजत दी गयी।

1981–90 के दशक में विदेशी सहयोग में सर्वोच्च स्थान सं0रा0अमेरिका (यू0एस0ए0) 323 करोड़ का निवेश, फिर जर्मनी, जापान, फ्रांस, यू0के0 आदि का कुल मिलाकर 63 प्रतिशत

योगदान रहा। अनिवासी भारतीयों ने लगभग 113 करोड़ रूपये जुटाये जो कुल निवेश का 8.9 प्रतिशत था।

विदेशी विनियोग की स्वीकृतियों और वास्तविक अन्तर्प्रवाह ने 1991 की औद्योगिक नीति की घोषणा के बाद 2010–12 में कुल विदेशी निवेश 311.1 अरब डालर प्राप्त किये गये जिसमें प्रथम स्थान मारिशस का है। प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के रूप में 67.3 अरब डालर पोर्टफोलियो में निवेश किया गया। इसके अतिरिक्त 21.73 अरब डालर अनिवासी भारतीयों का योगदान था। अतः विदेशी फर्मो का कुल विदेशी विनियोग के प्रवाह में प्रत्यक्ष विदेशी विनियोग के रूप में योगदान केवल 42.5 प्रतिशत का था।

तालिका प्रत्यक्ष विदेशी निवेश : स्वीकृतियां एवं वास्तविक प्रवाह

वर्ष	स्वीकृत राशि करोड़ रूपये	वास्तविक प्रवाह	प्रतिशत
1991	534	351	65.0
1992	3,888	675	17.5
1997	28767	16868	59.5
2000	37,037	19.342	52.2
2001	26,875	19265	71.7
2002	11,140	21286	191.1
कुल	284,812	1,29,838	45.6

विदेशी प्रत्यक्ष निवेश बुनियादी वस्तुओं में 39 प्रतिशत की स्वीकृति केन्द्र सरकार ने प्रदान की थी जिससे तेल परिष्करण शालाओं का 10.8 प्रतिशत तथा लौह एवं अलौह का 5.61 प्रमुख था। प्रत्यक्ष विदेशी निवेश टेली संचार एवं 6.81 तथा कम्प्यूटर साफ्टवेयर में 20 प्रतिशत था।

विदेशी सहयोग स्वीकृतियों के विभिन्न उद्योगों का भाग

अगसत 1991 – मार्च 2002

क्र0	उद्योग / तेल	स्वीकृतियों की संख्या	स्वीकृत राशि करोड़ रूपये	कुल विनियोग में भाग प्रतिशत
1.	**आधारभूत (बुनियादी) वस्तुयें**	2, 549	1,07,576	38.8
(a)	पावर	357	43,559	15.7

(b)	तेल परिष्करणशालायें	373	30,008	10.8
(c)	रसायन	1,713	12,734	4.6
(d)	खनन	681	15,403	5.6
(e)	उर्वरक एवं सीमेन्ट	331	6,072	2.2
2.	**पूंजी वस्तुये**	6,538	25,117	9.0
(a)	परिवहन उद्योग	1,172	9,456	3.4
(b)	बिजली उपकरण	1,661	5,963	1.2
(c)	इलेक्ट्रानिक्स	485	3,228	1.2
(d)	अन्य	3,220	6,470	2.3
3.	**वस्तुयें**	6,172	1,02,928	37.1
(a)	टेली संचार	801	55,281	19.4
(b)	कम्प्यूटर साफ्टवेयर	2,353	17,616	19.4
(c)	वित्तीय सेवायें	414	11,760	4.2
(d)	अन्य सेवायें	2,604	18,271	6.6
(4)	चिरस्थायी उपभोक्ता वस्तुयें	159	9,357	3.4
(5)	अन्तवर्ती वस्तुयें	811	4993	1.8
	कुल	**21,502**	**2,77,597**	**100.0**

विदेशी निवेश के स्वामित्व की सीमा थ्म्। के अधीन 40 प्रतिशत तक रखी गयी। लेकिन 1951 की औद्योगिक नीति ने 51 प्रतिशत तक निवेश की इजाजत दे दी जिसे 1997 में 74 प्रतिशत कर दिया गया प्रवासी भारतीय के लिये यह 100 प्रतिशत कर दी गयी।

2.4 विदेशी प्रत्यक्ष विनियोग एवं अप्रवासी भारतीयों का विदेशी विनियोग

भारत में सीधे निवेश करने की सं0रा0अमेरिका (यू0एस0ए0) का कुल 6528.5 करोड़ रूपये के साथ प्रथम स्थान पर था उसके बाद दक्षिण कोरिया का स्थान था जो 2243.0 करोड़ रूपये लगाये। 2010 तक भारत में विदेशी निवेश के स्थान इस प्रकार है :–

तालिका

विदेशी प्रत्यक्ष निवेश 1991–2000 की देशानुसार स्वीकृतियां और वास्तविक प्रतिशत

क्र0	देश	स्वीकृति कुल प्रतिशत	वास्तविक प्रवाह कुल	प्रवाह प्रतिशत	3,15 प्रतिश
1.	स0रा0अमेरिका	50379	20.4	10.9	19.2
2.	मारिशस	29832	11.9	15,596	53.2
3.	यू0	16388	6.6	2485	15.2
4.	जापान	9,935	4.0	3,651	36.7
5.	द0कोरिया	9731	3.9	2168	22.3
6.	जर्मनी	8497	3.4	2685	31.6
7.	आस्ट्रेलिया	6617	7.7	290	4.4
8.	मलेशिया	5576	2.3	197	3.5
9.	फ्रांस	5238	2.1	1265	24.1
10.	नीदरलैण्ड	4700	1.9	2898	31.9
11.	ईटली	4555	1.8	1507	33.0
12.	सिंगापुर	4483	1.8	1327	29.0
13.	अनिवासी भारतीय	9.534	3.9	8656	90.8
	सभी देश	246798	100.0	89,297	36.2

आदि आकड़ों का अनुमान तालिका द्वारा प्रस्तुत किया गया।

विदेशी सहयोग सम्बन्धी नीतियों का मूल्यांकन जब किया गया तो उदारीकरण के समर्थकों ने विदेशी सहयोगी निगमों द्वारा अधिकाधिक मात्रा में विनियोग की स्वीकृति देने के पक्ष में मुख्यतः यह तर्क दिये कि ईस्ट इण्डिया कम्पनी के दिन अब लद गये है विदेशी सहयोग द्वारा बहुराष्ट्रीय निगमों या उनके अनुषंगियों द्वारा विनियोग अर्थ उनकी दासता था। विश्व के प्रत्यक्ष विदेशी विनियोग में भारत के भाग की तुलना जब चीन, ब्राजील, मैक्सिको आदि से की जाती है तो यह पता चलता है कि भारत का भाग बहुत कम है।

तालिका : विदेशी प्रत्यक्ष विनियोग में भारत का भाग

1999–2002 करोड़ यू0एस0 डालर

देश	1992	1995	2001
चीन	1,1156	3,584.9	4,684.1
भारत	23.3	214.4	340.3
इण्डोनेशिया	1777	434.6	327.7

द0कोरिया	77.7	135.7	319.8
मलेशिया	518.3	581.6	55.4
फिलिपीन्स	22.8	145.9	179.2
थाईलैण्ड	211.4	200.0	375.9
भार का भाग	0.5	0.9	1.7

भारत में बहुराष्ट्रीय निगम :–

बहुराष्ट्रीय निगम ऐसी कम्पनियां है जिनका विस्तार अनेक देशों में होता है। ये ऐसी कम्पनियां है जिनका मुख्यालय किसी एक देश में होता है। उनका व्यापारिक गतिविधियों जैसे कारखाने, विक्रय केन्द्र अनेक देशों में स्थित होते है। बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का प्रभुत्व सम्पूर्ण विश्व के आर्थिक गतिविधियों पर देखा जाता है। सं0रा0अमेरिका अनुसार कुल विश्व व्यापार का 70 प्रतिशत भाग विश्व की 500 बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के हाथ में है। साथ ही विश्व के कुल घरेलू उत्पाद का 30 प्रतिशत भाग कुल विदेशी निवेश का 80 प्रशित भाग इन्ही के स्वामित्व में है। भारत में बहुराष्ट्रीय कम्पनियां का जाल विछा हुआ है भारत भी अपने व्यवसाय को बढ़ाने के लिए आवश्यक वित्त विदेशों से नहीं बल्कि विदेशी अपने व्यवसाय को बढाने के लिए आवश्यक वित्त विदेशों से नहीं बल्कि विदेशी कम्पनियों से जुटाता है। ये निगम अपने हाथों में पूंजी लाते नहीं बल्कि भारत में उगाहते है। हाल ही के वर्षो में भारतीय कम्पनियों ने इस कम्पनियों के साथ समझौता किया जिससे अमेरिका, जापानी जर्मन एवं ब्रिटिश कम्पनियां प्रमुख है। जो औद्योगिक मशीनरी एवं रसायन परिवहन आदि उद्योगों के विदेशी सहयोग अधिक है।

2.4.1 विदेशी पूंजी एवं अप्रवासी भारतीयों के धन से सम्पन्न होता भारत

किसी देश के विकास की प्रक्रिया में प्राप्त बाहरी आर्थिक योगदान विदेशी पूंजी कहा जाता है। यह पूंजी बीज प्रकार की होती है। 1– रियायती सहायता (2) गैर रियायती सहायता (3) विदेशी निवेश।

(1) रियायती सहायता में अनुदान, कम ब्याज वाले ऋण सम्मिलित किये है। इस प्रकार की सहायता या तो विपक्षीय होती है या बहुपक्षीय। ऐसे ऋण प्रायः विदेशी मुद्रा के रूंप में लम्बी अवधि में लौटाना पड़ता है। परन्तु कभी कभी ऋणदाता देश ऋणी देश को अपनी मुद्रा में ऋण वापस करने की छूट प्रदान कर देते है।

(2) गैर रियायती सहायता इसमें विदेशी वाणिज्यिक उधार अन्य सरकारों संगठनों बहुपक्षीय एजेंसियों से प्रापत ऋण तथा अनिवासी नागरिकों से प्राप्त जमा साक्षियों शामिल होती है।

(3)<u>विदेशी निवेश</u> – किसी देश द्वारा अन्य देश में पूंजी प्रवाह को निवेश कहा जाता है। मुख्यतः दो प्रकार का होता है– 1– प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (2) पोर्टपोलियो निवेश एफ0डी0आई0 निवेश को सबसे अच्छा माना जाता है, क्योंकि इस प्रकार के निवेश से पूंजी के साथ तकनीकी ज्ञान मशीनें, पूंजीगत वस्तुयं, इत्यादि आती है। पोर्टफोलियो के अन्तर्गत किसी कम्पनी में द्वितीय बाजार के जरिये व्यक्तिगत पूंजी निवेश किया जाता है। 1991 से पहले भारत सरकार अपने बजट घाटे एवं भुगतान संतुलन के घाटे को पूरा करने के लिये ऋण लेने पर जोर देती थी। किन्तु 1991 के आर्थिक संकट के बाद प्रत्यक्ष विदेशी निवेश और पोर्टपोलियो निवेश को बढ़ाने के लिये आर्थिक उदारीकरण की नीति अपनायी गयी जिसके अन्तर्गत निवेशकों को विभिन्न प्रकार की सुविधायें प्रदान की गयी–

प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के 19 प्रस्ताव को स्वीकृत प्रदान की जिसमें भारत सरकार ने 726.88 करोड़ रूपये के प्रत्यक्ष विदेशी निवेश की स्वीकृत प्रदान की इन प्रस्तावों में नेटवर्क 18 की सहायक कम्पनी ग्लोबल ब्राडकास्ट न्यूज (G.B.M.) लि0 की 500 करोड़ रूपये में 26 प्रतिशत हिस्सेदारी बेचने का प्रस्ताव प्रमुख है। दिल्ली स्टाक एक्सचेंज में साइप्रस की इनके द्वारा 10. 61करोड़ रूपये में 5 प्रतिशत हिस्सेदारी लेने के प्रस्ताव की अनुमति दी गयी। ब्रिटेन की <u>मिलिलब्रो आयल</u> की 200 करोड़ रूपये के निवेश से जेट्रोफा के बीज से कुड जेट्रोफा तेल निकालने के लिये सब्सिडियरी कम से कम प्रस्ताव की इजाजत दी गयी।

<u>अप्रवासी भारतीयों के धन से सम्पन्न होता भारत :–</u>

वर्ष 2010–11 में विदेशी से अप्रवासी भारतीयों द्वारा भेजे जा रहे धन की आवक लगभग 50 अरब डालर हो गयी है। भारत में जनवरी 2008 तक जमा प्रत्येक डालर में से एक डालर विश्व भर में बसे अप्रवासी भारतीय द्वारा भेजा गया। भारत में विदेशी पैसा मंगाने का कारोबार प्रति वर्ष 15 प्रतिशत की दर से बढ़ रहा है। उद्योग जगत में 2008–09 में केवल अमेरिका से 12 अरब डालर धन भारत आया। वित्त मंत्रालय के नवीनतम आकड़ों के आधार पर सितम्बर 2007 के अन्त में भारत पर कुल विदेशी ऋण 190.5 अरब डालर हो गयी। 2007 की अवधि में विदेशी ऋण में बृद्धि वाह्य वाणिज्यिक उधारियों, अनिवासी भारतीयों की जमाओं (NRI Deposit) बहुपक्षीय ऋण में वृद्धि के चलते हुयी।

(इ) **<u>विदेशों में अधिक निवेश हेतु RBI (रिजर्व बैंक आफ इण्डिया) की अनुमतिः–</u>**

RBI ने देशवासियों के लिये विदेशों में डालर की सीमा को वर्तमान 100,000 डालर से बढ़ाकर 200,00.00 डालर कर दिया है। यह निवेश विदेशी शेयर बाजार आदि में किया जा

सकता है। इसके साथ म्यूचुअल फण्ड्स को भी अब विदेशी शेयर बाजारों में पॉच अरब डालर तक निवेश करने की अनुमति दे दी गयी है। आर0बी0आई0 भारतीय कम्पनियों को विदेशों में निवेश हेतु छूट प्रदान की है। इसके अन्तर्गत उन्हे विदेशी स्थित संयुक्त उपक्रमों का 100 प्रतिशत हिस्से वाली सब्सिडीधारियों में अपनी नेटवर्थ का 400 प्रतिशत तक आटोमैटिक रूट द्वारा निवेश करने की अनुमति प्रदान की गयी है। भारत में पंजीकृत साझेदारी कम्पनियां भी इस नियम का लाभ उठा सकेगी। इसके अतिरिक्त विदेशी शेयर बाजारों में सूचीबद्ध भारतीय कम्पनियों की साझेदारी बढ़ाने के विचार से सरकार ने उन्हे अपनी नेटवर्क का 50 प्रतिशत तक पोर्टफोलियो निवेश करने की अनुमति प्रदान की है। जो अभी तक 35 प्रतिशत था आर0बी0आई0 ने निरन्तर बढ़ते विदेशी मुद्रा भण्डार का बोझ कम करने के उद्देश्य से घरेलू कम्पनियों को अपनी मंहगी विदेशी वाणिज्यिक उधारियों का समय से पहले भुगतान करने में भी सहयोग दिया। अब कम्पनियां 50 करोड़ डलर तक के ई0सी0बी0 का समय से पहले भुगतान कर सकेगी। अभी तक यह सीमा 40 करोड़ डालर थी।

राष्ट्रीय निवेश कोष :–

सार्वजनिक कोष क्षेत्र के तीन बड़े म्युचुअल फण्ड का प्रबन्धन करने वाली कम्पनियों, यू0टी0आई0, ऐसेटमैनेजमेन्ट एस0बी0आई0 फण्ड मैनेजमेन्ट, एल0आई0सी0 म्यूजल फण्ड ऐसेट मैनेजमेंट के संचालन में सरकार 6 अक्टूबर 2007 में थ्वबज 994.2 करोड़ रूपये का राष्ट्रीय निवेश कोष की स्थापना की। पावर ग्रिड कारपोरेशन आफ इण्डिया लिमिटेड में सरकारी इक्विटी की बिक्री से प्राप्त 994.82 करोड़ रूपये की राशि तीस कम्पनियों के प्रबन्ध के को सौप दी गयी। केन्द्रीय सार्वजनिक उपक्रमों से होने वाले लाभ को अब कोष में रखा गया। कोष का प्रबन्धन सरकारी कोष से पृथक होगा। उपरोक्त तीनों कम्पनियाँ निवेश कोष का प्रबन्धन करेगी। जिसका 75 प्रतिशत राशि शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार जैसे सामाजिक उत्थानों कली योजनाओं पर व्यय की जायेगी। और 25प्रतिशत केन्द्रीय उपक्रमों के पूंजी निवेश की आवश्यकताओं पर व्यय होगी।

(ब) **विदेशी व्यापार में सहायता एवं ऋण : भारत में विदेशी ऋण भार में वृद्धि :**

भारत में विदेशी व्यापर, सहायता एवं ऋण भार में वृद्धि हुयी है। वित्तीय वर्ष 2011 में की दूसरी छमाही में भारत में विदेशी ऋण भार 326.6 विलियन अमेरिकी डालर जिसमें मार्च 2011 में 306.4 विलियन अमरीकी डालर के अनुपालन की तुलना में 20.2 बिलियन अमेरिकी डालर (6. 6 प्रतिशत) की वृद्धि दर्ज की गयी। यह बढ़त प्रधानतः उच्च वाणिज्यिक उधारों और अल्पकालिक कर्ज के कारण थी। इन दोनों का मिला जुला प्रभाव देश के वाह्य कर्ज में कुल बढ़त के 80 प्रतिशत से अधिक के रूप में था।

2.4.2 विदेशी सहायता की पंचवर्षीय योजनाएं एवं आर्थिक विकास पर विदेशी सहायता का प्रभाव

विदेशी सहायता तीन रूपों में प्राप्त होती है। ऋण, अनुदान और सार्वजनिक अधिनियम सहायता द्वारा 1979–80 तक कुल सहायता का 76प्रतिशत ऋण लगभग 11ः अनुदान, 14 प्रतिशत पी0एल0 480/665 की सहायता के रूप में प्राप्त किया गया। 1965–66 तथा 1996–97 के भयंकर सूखे ने भारी मात्रा में खाद्य सहायता प्राप्त करने के लिये सरकार को मजबूर कर दिया। चौथी योजना के दौरान भारत में हरित क्रान्ति के प्रभावाधीन खाद्यान्न उत्पादन में बृद्धि हुयी। और भारत खाद्यान्न में आत्म निर्भर हो गया। छठी पंचवर्षीय योजना के दौरान 1980–81 से 1989–85 तक अनुदान का भाग कम होकर 16 प्रतिशत हो गया। किन्तु कुल 10,903 करोड़ रूपये की विदेशी सहायता की वार्षिक औसत 4,540.00 करोड़ रूपये रही जबकि वह छठी योजना में 2,180 करोड़ रूपये थी। यह सहायता का वार्षिक प्रवाह दुगने से भी अधिक हो गया। 9वी पंचवर्षीय योजना में भारत की विदेशी सहायता में वृद्धि हुयी है। 90 प्रतिशत से अधिक सहायता ऋणों के रूप में प्राप्त की गयी। इस कारण इसके भुगतान के लिये मूलधन और ब्याज के रूप में भार सदन करना पड़ता है।

तालिका

भारत द्वारा विदेशी सहायता का उपभोग पंचवर्षीय योजनाओं में

पंचवर्षीय योजना	ऋण	अनुदान	बी0एल0 480/665	कुल योग
छठी योजना 1980–81, 1984–85	9.123 (83.7)	1,780 (16.3)	–	10,963
सातवी पंचवर्षीय योजना 1985–86, 1989–90	20,120	2,580	–	28700
1990–91	16,860	1853	–	18317 100.00
आठवीं पंचवर्षीय योजना 1992–93, 1996–97	51,813	4831	–	56648 100.00
नौवी 1997–98, 2001–02	66,136 92.9	5065 (7.1)		71.29 100.00

विदेशी सहायता देने वाले देशों में स0रा0अमेरिका (यू0एस0ए0), यू0के0 इंग्लैण्ड जर्मनी,जापान एशियाई विकास बैंक प्रमुख थे।

आर्थिक विकास पर विदेशी सहायता का प्रभाव :

विदेशी सहायता देश की उत्पादन क्षमता का किस सीमा तक विकास करने में सहायतक हो सकती है, यह विदेशी सहायता के विवेकपूर्ण उपयोग तथा प्रापक देश के प्रयास और कुछ विनियोज्य साधनों पर निर्भर करता है। विदेशी सहायता बड़े पैमाने पर विकास की संभावनाएं भी उत्पन्न करती है।

उपभोक्ता वस्तुओं के रूप में प्राप्त सहायता के परिणामस्वरूप पूंजी निर्माण के लिये अन्तर्देशीय साधनों के मोचन में सहायता मिल सकती है। अतः हमें देश की उत्पादन क्षमता की वृद्धि में विदेशी सहायता के योगदान के महत्व को भुलाया नहीं जा सकेगा। जो इसप्रकार है –

1.**विदेशी सहायता से विनियोग का स्तर उन्नत करने में सहायता मिलती है–**

पहली योजना के आरम्भ में वार्षिक विनियोग दर राष्ट्रीय आय का 5प्रतिशत थी, जो बाद में बढ़कर 25 प्रतिशत हो गयी। निवेश में उक्त वृद्धि के साथ–साथ विदेशी मुद्रा के निवेश में भी वृद्धि करनी पड़ी जो देश के साधनों के सामर्थ्य से बाहर थी। 1972–73 से ही देश विदेशी मुद्रा के भीषण संकट का सामना कर रहा है। विदेशी सहायता के अभाव में देश के लिए उक्त संकट से पार हो सकना करीब–करीब असंभव है।

2.**खाद्य कीमतों को स्थिर करने तथा कच्चे माल के आयातों के लिये सहायता का उपभोग :–**

कुल सहायता में से आधे से कुछ कम सहायता वस्तु या खाद्य के रूप में भी जिसमे अधिकांश भाग का उपयोग खाद्यान्न के आयात के लिये किया गया है। इस आयात ने खाद्यान्न की कीमतों को स्थिर करने में महत्वपूर्ण सहायता दी है और अकाल का समना करने की क्षमता प्रदान की। सहायता का एक अंश कच्चे माल और पूंजी (Spare Part) के आयात के लिये जिनकी देश में कमी थी प्रयुक्त किया गया इसके परिणाम स्वरूप देश के उत्पादन मे वृद्धि हुयी है।

3.**सिंचाई और बिजली क्षमता के विस्तार के लिये सहायता का उपयोग :–**

देश की सिंचाई क्षमता का विस्तार करके विदेशी सहायता ने कृषि उत्पादन की बृद्धि में बहुत अधिक महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। डेरी और मत्स्यपालन के क्षेत्र में उत्पादन तकनीकी के आधुनीकरण में विदेशी सहायता से लाभ हुआ है। विदेशी सहायता ने देश की बिजली क्षमता में भी काफी बृद्धि की है।

4.**परिवहन, विशेषकर रेलवे के विकाश के लिये सहायता :–**

कुल प्रयुक्त सहायता का काफी बड़ा भाग 14 प्रतिशत परिवहन के विकास पर व्यय हुआ, जिसमें से अकेले रेलवे को 12 प्रतिशत भाग व्यय किया गया। इस कारण प्रारम्भिक वर्षो में रेलवे परिवहन की पुनः स्थापित करने में रेल के डिब्बो में बृद्धि करने और बृद्धित परिवहन इंजनों की मरम्मत आदि में योगदान रहा।

5.इस्पात उद्योग के निर्माण में सहायता :–

विदेशी सहायता के रूप में निवेश इस्पात जैसे मूलभूत उद्योग की उत्पादन क्षमता का निर्माण करने का महत्वपूर्ण कार्य किया। निर्माण उद्योग में प्रयुक्त विदेशी सहायता का 80 प्रतिशत से अधिक भाग इस्पात उद्योग की क्षमता में व्यय किया गया। जिससे विदेशी निवेश के रूप में यू0के0 यू0एस0ए0, जर्मनी का योगदान था।

6.तकनीकी साधनों के विकास के लिये सहायता :–

विदेशी सहायता के कारण निम्नलिखित तीन उपायों में तकनीकी साधनों के विस्तार में सहायता मिली है। (अ) विशेषज्ञ सेवाओं (ब) भारतीय कर्मचारियों को प्रशिक्षण देकर (स) देश में नई शिक्षण अनुसंधान आदि।

विदेशी सहायता की समस्या :–

विदेशी सहायता के निवेश में निम्नलिखित समस्या इस प्रकार है।

1.**राजनीतिक दबाव**

हमारी विदेशी सहायता प्राप्त करने के सम्बन्ध में बहुत सी कठिनाई एवं सीमा बंधन है। इनमें से सबसे अधिक कठिनाई भारत का सं0रा0 अमेरिका पर लगातार निर्भर रहना है। देश के इतिहास में ऐसे कई अवसर आये जब भारत सरकार अपनी आर्थिक एवं राजनीतिक नीतियों में विदेशी दबाव के अधीन निर्णय किये है। उदाहरण 1974 में सं0रा0 अमेरिका ने भारत में विदेशी सहायता बन्द करने की धमकी दी नाभिकीय परमाणु संयत्र के विस्फोट मामले में आर्थिक सहयोग बन्द करने का राजनीतिक दबाव बनाया।

2.**विदेशी सहायता एवं अनिश्चितता की समस्या :–**

विदेशी सहायता एवं अनिश्चितता की समस्या के परिणाम स्वरूप विदेशी सहायता में अनिश्चित होती है। कुशल आयोजन के मार्ग में यह अनिश्चितता बाधक सिद्ध होती है। विदेशी सहायता से प्राप्त हो सकने वाले संभावित साधनों का अग्रिम ज्ञान आवश्यक होता है। यदि दाता देश पाँच वर्ष की अवधि के लिये सहयता के स्वरूप एवं परिणाम या निर्देश कर दे। तो आयोजन में भारी, सुविधा हो जाती है।

3.**विदेशी सहायता को खपा सकने की समस्या :–**

विदेशी सहायता सम्बन्धित तीसरी समस्या विकासशील देश द्वारा इसे खपा सकने की क्षमता है। किसी देश की उपयोग क्षमता अनेक तत्वों पर निर्भर करती है। उपयोग क्षमता को सीमित

करने वाला सबसे महत्वपूर्ण कारण देश द्वारा वर्तमान में लिये ऋणों के भविष्य में भुगतान कर सकने की क्षमता है। इस तथ्य को दृष्टि में रखने पर देश ने विशाल निर्यात क्षमता निर्माण नहीं की है, समस्या और गम्भीर होती जाती है। जो कि विकासशील देश के लिये अभिशाप है।

4.**विदेशी समस्या भुगतान के ऋणभार :–**

छठी योजना (1980–81 से 1984–85) के दौरान कुल ऋण सेवा भार 4,809 करोड़ रूपये था जिसमें से 60 प्रतिशत ऋण पर शोधन और 40 प्रतिशत ब्याज के रूप में अदा किया गया।

वर्तमान समय में विदेशी सहायता के भुगतान भार कम करने के लिये दोहरा प्रयास करना होगा। सहायता लेते समय भारत को उन देशों से संधियां करनी चाहिये जो ब्याज की कम दर लेनी स्वीकार करें ऋण भुगतान की सुविधाजनक बनाने के लिये अपनी व्यापार में उदारता की नीति अपनाने के लिये तैयार हो।

(ब)भारत इक्विटी बाजारों में क्यू0एफ0आई0 (Q.F.I.) द्वारा प्रत्यक्ष निवेश :

केन्द्र सरकार ने योग्य विदेशी निवेशकों (Q.F.I.) को भारती इक्विटी बाजार में सीधे निवेश करने की अनुमति जनवरी 2012 में अनुमति दी। आर0बी0आई0 और एस0ई0बी0आई0 (सेवी) ने इस योजना के लिये विदेशी मुद्रा प्रबन्धन अधि0 1999 के द्वारा 13 जनवरी 2012 को विस्तृत दिशा निर्देश जारी किये। सरकार ने ऐसे निदेशकों के वर्गो में व्यापक करने, अधिक विदेशी निधियों को आकर्षित करने, बाजार भी अस्थिरता कम करने और भारती पूंजी निवेश बाजार को मजबूत बनानें का कार्य किया। क्यू0आई0आई0 में विदेशों में रहने वाले उन व्यक्तियों, समूहों अथवा संघों को शामिलन किया जायेगा जो वित्तीय कार्वाही सम्बन्धी नियमों का अनुपालन करें। यह योजना 9 अगस्त 2011 को शुरू कर दिया गया।

2.5 सारांश

भारत में निवेश एवं प्रत्यक्ष विदेशी निवेश और अप्रवासी भारतीय का विदेशों में निवेश ने केवल भारत को आर्थिक दृष्टि से समृद्धि शाली नहीं बनाते है बल्कि विश्व के अन्य राष्ट्र को भी समृद्धिशाली बनाते है। विनियोग प्रक्रिया राष्ट्रो के मध्य व्यापार, बढ़ाने, आयात निर्यात को बढ़ाने एवं ऐसे तकनीकी सहयोग प्रदान करने से है। जो आधुनिक उद्योगों के विनिर्माण में सहायक सिद्ध होगा। विदेशी निवेश से निश्चित ही भारतीय की औद्योगिक नीति में सुधार आयेगा तथा ऐसे कारखानों को पुनः खोला जायेगा जो एक समय से कल पूंर्जो के अभाव में बन्द थे उनकी प्राप्ति होगी। भारत में निवेश की प्रक्रिया से ऐसे उद्योगों में प्रतिस्पर्धा की भावना को बढ़ावा मिलेगा तथा वे भी अधिक से अधिक उत्पादन क्षमता को बढ़ाने में उत्तरोत्तर बृद्धि करेंगे जिसने न केवल बेकारी की समस्या कम होगी। बल्कि भारतीय औद्योगिक व्यवस्था

में सुदृढ़ता आयेगी। भारत आर्थिक मामलों में एक सशक्त राष्ट्र का दर्जा प्राप्त करेगा। इसलिये निवेश की प्रक्रिया आवश्यक एवं उपयोगी है।

2.6 परिभाषिक शब्दावली

1.विनियोग– निवेश

2.इक्विटी – अंशपूंजी

3.अल्पविकसित राष्ट्र – पूर्ण विकसित राष्ट्र नहीं

4.संवर्धन – उन्नति, बढ़ावा

5.पोर्टफोलियो निवेश – किसी निवेशकर्ता के पास उपलब्ध विभिन्न प्रकार की वित्तीय परिसम्पत्तियां का सम्पूर्ण समूह जैसे शेयर, ऋण पत्र, सरकारी बाण्ड, यू0टी0आई0 (UTI) प्रमाण पत्र (सप्ताह महीने वर्ष) के आय व्यय का लेखाजोखा।

2.7 अभ्यास प्रश्न

प्रश्न–1 भारत में निवेश हेतु विदेशी पूंजी की आवश्यकता क्यों पड़ी?

प्रश्न–2 विदेशी विनियोग (निवेश) नीति को संक्षेप में लिखो?

प्रश्न–3 भारतीय इक्विटी बाजारों में क्यू0एफ0आई0 द्वारा प्रस्तावित प्रत्यक्ष निवेश नीति क्या है

2.8 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1.भारतीय अर्थव्यवस्था – डा0 रूद्ररण एवं सुन्दरम्

2.पुनिक गाइड प्रयाग

3.घटनाचक्र

4.भारतीय अर्थव्यवस्था – डा0 मिश्रा एवं पूरी

2.9 सहायक उपयोगी पाठ्यक्रम

1.घटनासार

2.मनोरमा

2.10 निबन्धात्मक प्रश्न

प्रश्न–1.विदेशी प्रत्यक्ष निवेश और अप्रवासी भारतीय का विदेशों में निवेश को संक्षेप में समझाये।

प्रश्न–2.विदेशी पूंजी एवं अप्रवासी भारतीय के धन से प्राप्त व्यय के तरीकों को स्पष्ट करें।

प्रश्न–3.विदेशी सहायता की पंचवर्षीय योजनायें एवं आर्थिक विकास दर विदेशी सहायता के प्रभाव को स्पष्ट करें।

LL.M. PART- I

PAPER –Legal Regulation of Economic Enterprises

ब्लाक–4. कानूनी विनियमन (Legal Regulation)

ईकाई–3. प्रमुख लोकउपक्रमों के विधिक विनियम– टेलीकाम नियामक प्राधिकरण और बीमा नियामक प्राधिकरण (Legal regulation of selected public enterprises - Telecom regulatory Authority and Insurance regulatory Authority)

इकाई संरचना

3.1. प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 बीमा नियामक प्राधिकरण के अधीन बीमा व्यवसाय का उदारीकरण एवं बीमा नियामक और विकास प्राधिकरण अधि0 1999 का

3.3.1 टेलीकाम नियामक प्राधिकरण 1997 की आवश्यकता एवं औचित्य

3.3.2 बीमा नियामक एवं विकास प्राधिकरण अधि0 1999 बनाने का औचित्यः–

3.3.3 बीमा कम्पनी का समापन

3.4 नई दूर सांचार नीति 2011

3.4.1 टेलीविजन नेटवर्क विधेयक

3.4.2 भारत में बीमा व्यवसाय के उभरते आयाम राष्ट्रीयकरण से निजीकरण

3.5 सारांश

3.6 परिभाषिक शब्दावली

3.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

3.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

3.9 सहायक उपयोगी पाठ्यक्रम

3.10 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

21वी शताब्दी में भारत ने केवल संचार के क्षेत्र में नहीं बल्कि बीमा व्यवसाय के उदारीकरण आदि क्षेत्रों में अभूतपूर्व वृद्धि किया। उस पर प्रतिबन्ध लगाने के लिये टेलीकाम नियामक विकास प्राधिकरण एवं बीमा नियामक विकास प्राधिकरण अधि0 1999 आदि बनाया गया। कम्प्यूटर, रोवोटिक्स, दूरसंचार, टेलीफोन, केवल, दूरदर्शन आदि क्षेत्रों में सूचना क्रान्ति का सूत्रपात भारत में हुआ। सूचना प्रौद्योगिकी ने पूरे विश्व में भूमण्डलीकृत कर दिया। सूचना प्रौद्योगिकी ने दैनिक कार्य प्रणाली उद्योग, चिकित्सा, स्वास्थ्य, शिक्षा, विज्ञान वित्तीय प्रणाली, कृषि आदि अनेक क्षेत्रों में क्रांतिकारी परिवर्तन का सूत्रपात किया। जनता को नियम विनियम अधिनियम आदि टेलीकाम नियामक–प्राधिकरण के माध्यम से नियन्त्रण किया। वही बीमा व्यवसाय का उदारीकण एवं बीमा नियामक और विकास प्राधिकरण अधि0, 1999 के अधीन देश के बीमा उपभोक्ताओं के हित में बीमा सेवाओं की मात्रा तथा गुणवत्ता में वृद्धि के दृष्टिकोण से भारत सरकार ने बीमा व्यवसाय का उदारीकण का फैसला किया जिसके आधार पर बीमा नियामक और विकास प्राधिकरण अधि0 1999 बनाया गया जिसके उद्देश्य यह है कि जीवन बीमा निगम, साधारण बीमा निगम के क्षेत्र में एकाधिकार समाप्त हो गया। मेल्होत्रा समिति की संस्तुति के आधार पर बीमा नियमामक प्राधिकरण की स्थापना की गयी।

3.2 उद्देश्य

टेलीकाम नियामक प्राधिकरण अधि0 1997 का मुख्य उद्देश्य सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में बनाये गये नियम, विनियम को लागू करना एवं नियन्त्रण कायम करना। दूर संचार परियोजनाओं, पारेषण तथा स्विचन उत्पाद, विकास तथा अनुसंधान दूरसंचार कार्यक्रमों इत्यादि से सम्बन्धित कार्यक्रमों को सम्पन्न करता है। टेलीकाम नियामक प्राधिकरण का मुख्यतः उद्देश्य टेलीफोन, मोबाइल, कम्प्यूटर, सेलुलर, रेडियो, सिनेमा आदि मनोरंजन के साधनों में हो रहे क्रांतिकारी परिवर्तन पर नियन्त्रण कायम करना है वही बीमा नियामक और विकास प्राधिकरण का मुख्य उद्देश्य बीमाधारकों के हितों की सुरक्षा करना, बीमा कारोबार को विनियमित करना प्रोन्नति करना, और उसकी सुव्यवस्थित बृद्धि सुदृढ़ करना और उससे सम्बन्धित या अनुषंगिक मामले को देखना है। इसके अतिरिक्त बीमा अधि0 1938, जीवन वीमा अधि0 1956 और साधारण बीमा व्यवसाय (राष्ट्रीयकरण) अधि0 1972 के संसाधनों को प्रस्तुत किया गया है। बीमा नियामक एवं विकास प्राधिकरण अधि0 1999, 1 जुलाई 2000 को सम्पूर्ण भारत में लागू हुयी।

बीमा नियामक प्राधिकरण बनाने का मुख्य कारण देश के बीमा उपभोक्ताओं के हितों में बीमा सेवाओं की मात्रा तथा गुणवत्ता में वृद्धि के दृष्टिकोण से भारत सरकार ने बीमा व्यवसाय का उदारीकण का फैसला किया और बीमा नियामक एवं विकास प्राधिकरण बनाया। इसका परिणाम यह हुआ कि जीवन बीमा निगम एवं साधारण बीमा निगम का बीमा के क्षेत्र में एकाधिकार समाप्त हो गया। तथा बीमा के क्षेत्र में निजी कम्पनियों को भी कारोबार करने में मंजूरी प्रदान की गयी बीमा व्यवसाय की विनियमित करने के लिये प्राधिकरण का स्थापना की गयी। जिससे पंजीकृत कम्पनियॉ बीमा कम्पनियां अधिनियम के विविध उपबन्धों के अनुसार कार्य करे।

1.3 बीमा नियामक प्राधिकरण के अधीन बीमा व्यवसाय का उदारीकण एवं बीमा नियामक और विकास प्राधिकरण अधिनियम, 1999

भारत में बीमा उपभोक्ताओं के हितों एवं बीमा सेवाओं की मात्रा तथा गुणवत्ता में वृद्धि करने के उद्देश्य से भारत सरकार बीमा व्यवसाय का उदारीकरण का फैसला किया जिसके आधार पर बीमा नियामक एवं विकास प्राधिकरण अधि0 1997 बनाया। इसके पीछे मुख्य कारण बीमा उद्योग को निजी कम्पनियों के लिये खोला जाना उचित होगा ऐसे कारण मुख्यतः निम्नलिखित इस प्रकार है –

1.इससे बेहतर उपभोक्ता सेवाओं के लिये प्रतिस्पर्धा का दरवाजा खुलेगा जिससे बीमा उत्पादों की रेंज गुणवत्ता तथा मूल्य में सुधार होगा।

2.राष्ट्रीयकृत बीमा उद्योग ने काफी बड़े पैमाने पर व्यवसाय अर्जित किया परन्तु इसके बावजूद जनसंख्या के एक बड़े हिस्से तक इसकी पहुॅच अब भी नहीं हुयी या कम हुयी है। नये खिलाड़ियों के प्रवेश से जीवन बीमा तथा साधारण बीमा का विस्तार तेज हो सकेगा।

3.गैर बीमा वित्तीय क्षेत्र में प्रतिस्पर्धा तेजी से बढ़ रही है। जिनमें वाणिज्यिक बैंक, म्युचुअल फण्ड, मर्चेन्ट बैंक, लीजिंग कम्पनियां, अन्य गैर बैकिंग वित्तीय संस्थायें शामिल है। इसलिये बीमा क्षेत्र को बन्द रखने का कोई कारण नजर नहीं आता।

4.यद्यपि कर्मचारी संघ तथा अन्य कुछ लोग बीमा क्षेत्र को खोलने के विरूद्ध है किन्तु ज्यादातर लोग इसके पक्ष में ही है।

5.मौजूद बीमा कम्पनियां वित्तीय रूप से काफी सशक्त है तथा उन्होंने एक सशक्त ढांचा खड़ा कर लिया है और उनके प्रोफेशनल प्रतिभाओं तथा मार्केटिंग एवं सेवाओं का व्यापक नेटवर्क भी है, ऐसे में वे पूरी तरह प्रतिस्पर्धा करने में सक्षम है।

बीमा उद्योग के उदारीकण के लिये विशिष्ट सिफारिशें करते हुये समिति ने इस बात को ध्यान में रखा था कि इसे खोले जाने का काम आसानी से तथा शांतिपूर्वक होना चाहिये ताकि किसी वर्ग को अनावश्यक परेशानियों का सामना न करना पड़े। समिति ने अपनी सिफारिशों में यह भी लिखा कि निजी कम्पनियों के प्रवेश के साथ ही एक प्रभावकारी बीमा नियामक प्राधिकरण की स्थापना की जानी चाहिये जिसका स्वरूप इस प्रकार है :–

1.विधि द्वारा एक सशक्त और स्वायत्त बीमा नियामक प्राधिकरण स्थापित किया जाना चाहिये, बहुत कुछ वैसा ही जैसा भारतीय प्रतिभूति एवं एक्सचेंज बोर्ड (सेवी) है। प्राधिकरण को अपने लिये वित्त की व्यवस्था स्वयं करनी होगी। जिसके लिये वह बीमा प्रीमियम पर छोटी सी लेवी लगा सकता है।

2.प्राधिकरण को यह सुनिश्चित करना होगा कि बीमा कम्पनियां हमेशा नियमों का पालन करें अपने धन का विवेक पूर्ण निवेश करे। उपयुक्त योग्य लोगों की सर्वोच्च प्रबन्धकों के रूप में नियुक्त कर, खातों में पारदर्शिता के उच्च मानक बनाये रखे तथा बीमित लोगों के साथ उचित व्यवहार करें। बीमा नियामक एवं विकास प्राधिकरण अधि0 1999 के निम्न शीर्षक इस प्रकार है:–

1.शीर्षक का विस्तार

2.परिभाषा

3.संगठन

4.प्राधिकरण के कार्य, शक्तियों एवं कर्तव्य

5.केन्द्र सरकार की शक्तियां

6.बीमा सलाहकार कमेटी की स्थापना

3.3.1 टेलीकाम नियामक प्राधिकरण अधि0 1997 की आवश्यकता एवं औचित्य

उदारीकरण की नीति को अपनाते हुए स्व0 पूर्व प्रधानमंत्री पी0वी0 नरसिंहराव ने अपने प्रधानमंत्रीत्व काल में 1990 में यह प्रस्ताव रखा कि भारत में दूर संचार निगम को और प्रभवी बनाने के लिये तीव्र गति से टेलीकाम नियामक प्राधिकरण की स्थापना की जाय जिसकी स्थापना 20 फरवरी 1997 को किया गया। इसका मुख्य उद्देश्य प्राइवेट कम्पनियों को भी दूरसंचार में शामिल करने का विचार किया। वे भी दूरसचार के नियमों एवं शर्तो का पालन करते हुये अपनी सहभागिता दे। इसके मूल्य वर्धित सेवा मोबाइल सेवा को देश में तीव्र गति बढ़ाया जाय। 1994 में भारत सरकार ने दूर संचार नीति की स्थापना की इसके माध्यम से विदेशी निवेश एवं प्रत्यक्ष घरेलू निवेश को देश में बढ़ावा दिया जायेगा। दूरसंचार के विकास में मासमेलिंग नामक नई डाक सेवा शुरू की जायेगी और 1998 में भारत सरकार ने एक

अधिसूचना द्वारा प्रौद्योगिकी एवं साफ्टवेयर विकास के लिये एक राष्ट्रीय कार्यबल की स्थापना की है।

भारत में दूरसंचार के क्षेत्र में जो ऊँचाई प्राप्त की उसे एक लोहा माना जाता विश्व में भारत को आई0टी0 के क्षेत्र में अद्वितीय स्थान प्राप्त है। क्योंकि आई0टी0 के विकास में भारत विश्व में तृतीय स्थान पर है। दूरसंचार के क्षेत्र में निम्नलिखित संस्थाओं की सरकार ने स्थापना की जिसने प्रमुख– 1– महानगर टेलीफोन निगम लि0 (MTNL) की स्थापना 1986 भेजी गयी जिसमें टेलीफोन, मोबाइल, टेलेक्स, रेडियो पेजिंग, विडियो कान फ्रेसिंग, वायरलेस आदि प्रमुख है।

BSNL की स्थापना 2000 को किया गया, 1995 में भारत में विश्व स्तरीय इण्टरनेट की सुविधा भारत में प्रदान की गयी। इलेक्ट्रानिक मेल की सुविधा प्रदान की गयी।

<u>प्रौद्योगिकी दृष्टि प्रपत्र–2000 :–</u>

1996 में नई दिल्ली में तत्कालीन प्रधानीमंत्री एच0डी0 देवगौड़ा ने भारत को विकासशील देश से विकसित देश बनाने के महत्वपूर्ण लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये प्रौद्योगिकी सूचना प्रौद्योगिकी सूचना तैयार किया जिसे प्रौद्योगिकी प्रपत्र (टेक्नोलाजी विजन 2020) के रूप में जाना जाता है। प्रौद्योगिकी से देश की आर्थिक संरचना में अभिवृद्धि होगी इसलिये प्रौद्योगिकी ही देश का भविष्य या आधार बन सकती है। टेलीकाम नियामक प्राधिकरण की स्थापना दूर संचार नीति को व्यवस्थित ढंग से संचालित करना एवं नियंत्रण कायम करना जो दूरसंचार नीति के विरूद्ध है ऐसा कार्य नियामक प्राधिकरण करेगा।

2.<u>टेलीकाम नियामक प्राधिकरण ट्राई की नई नीतियां :–</u>

ट्राई ने कमाई का नया रास्ता सुझाया है पैसे की तेजी से जूझ रही सरकार अगर टेलीकाम रेगुलेटरी आफ इंडिया की सिफारिशों पर अमल करे तो उसका खजाना भर सकता है। ट्राई ने टेलीकाम मंत्रालय से पत्रों के माध्यम से कहा है कि पुराने स्पेक्ट्रम को दोबारा नीलामी के जरिये सरकारी खजाने में 3 लाख करोड़ आ सकते है। ट्राई ने सरकार को स्पेक्ट्रम के सुधार की सलाह दी। ट्राई ने कहा कि सरकार को 800 और 900 मेगा हट्र्ज के स्पेक्ट्रम की दोबारा नीलामी करनी चाहिये। इससे स्पेक्ट्रम की उचित कीमत वसूल हो पायेगी।

1.पुराने आपरेटरों के पास 900 और 800 मेगा हट्र्ज के स्पेक्ट्रम है जो 800 मेगा हर्ट्ज बैण्ड के स्पेक्ट्रम की तुलना में दो गुना ज्यादा तेज है। ट्राई ने 900 और 800 मेगा हट्र्ज बैण्ड के स्पेक्ट्रम को वापस लेकर नीलामी की सलाह दी।

2.ट्राई का मानना है कि इससे खाली हुये स्पेक्ट्रमों की नीलामी के जरिये सरकार अगले चार साल में 3 लाख करोड़ रूपये जुटा सकती है।

3.800 और 900 मेगाहट्र्ज स्पेक्ट्रम भी दोबारा नीलामी की सिफारिश की।

4.2010 में 3जी नीलामी से सरकार को 67, 719 करोड़ रूपये की आमदनी हुयी, वही 4जी W.B.A. की नीलामी से सरकारी खजाने में 38,000 करोड़ रूपये आये।

5.ट्राई ने माना कि इस समय टेलीकाम सेक्टर के लिये रिफार्म के लिये बेहतरीन मौका है। ट्राई का कहना है कि रिफार्म के लिये जरूरत है कि उसके पास पर्याप्त स्पेक्ट्रम है। ट्राई ने चेतावनी दी कि अगर मौजूदा समय में टेलीकाम रिफार्म नहीं हो पाया तो इसके लिये 20 साल तक इंतजार करना पड़ सकता है।

6.ट्राई ने स्पेक्ट्रम नीलामी पर नई सिफारिशों को लेकर टेलीकाम आपरेटर पहले से विरोध जता चुके है। इसके मद्देनजर आपरेटर काल रेट बढ़ाने की चेतावनी दी जा चुकी है। इतना ही नहीं 2जी को दोबारा नीलामी को लेकर ट्राई की नई सिफारिशों के मद्देनजर कई विदेशी कम्पनियां देश से अपना कारोबार समेटने की चेतावनी भी दे चुकी है। ऐसे में 800 और 900 मेगा हट्र्ज के स्पेक्ट्रम दोबारा नीलामी की ट्राई की सिफारिशे पर अमल करना सरकार के लिये आसान नहीं होगा।

टेलीकाम नियामक प्राधिकरण के कार्य :–

टेलीकाम नियामक प्राधिकरण अधिनियम में निम्नलिखित कार्यो से सम्बन्धित बातों को उपबन्धित किया गया है :–

1.देश में ऐसा पर्यावरण विकसित करना जिससे तेज गति से दूरसंचार को बढावा मिले।

2.दूरसंचार के क्षेत्र में देश में पारदर्शितापूर्ण नीति लागू हो।

3.D.T.H., टैरिफ, मोबाइल नं0 पोर्टबिलिटी, आदि ट्राई (टेलीकाम रेगुरिलिटी एथारिटी आफ इण्डिया) के निर्देशों का अनुपालन करें।

4.टेलीकाम रेगुलेरिटी नियामक एथारिटी द्वारा टेलीकाम सेक्टर को विश्व स्तर पर जोड़ने का कार्य करें।

5.सूचना प्रौद्योगिकी पार्क की स्थापना।

1.**देश में ऐसा पर्यावरण विकसित करना जिससे तेज गति से दूरसंचार को बढावा मिले :–**

भारत में दूरसंचार को बढ़ावा देने एवं ऐसे नीतियां विकसित करने को जिन्हें सभी निजी एवं सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम उन उपबन्धों का अनुपालन करे जिन्हें टेलीकाम नियामक प्राधिकरण अधिक 1997 में उपबन्धित की गयी है। दूरसंचार नीतियों का ईमानदारी, निष्ठा, विश्वास से उपबन्धित ऐसी सभी शर्तो का अनुपालन करें। प्राधिकरण द्वारा बनाये गये ऐसे सभी नीतियों को सम्पूर्ण राष्ट्र में लागू कराया जायेगा। दूरसंचार नीति को बढ़ावा देने के लिये सरकार ऐसे

अन्य सभी कदम उठायेगा जो आवश्यक थे उसके लिये सम्पूर्ण विश्व में ऐसा पर्यावरण विकसित करेगा जिससे दूरसंचार नीति लागू हो सके।

2.**दूरसंचार के क्षेत्र में देश में पारदर्शिता पूर्ण नीति लागू हो:–**

टेलीकाम नियामक प्राधिकरण का यह कार्य होना कि दूर संचार के क्षेत्र में वह देश में पारदर्शिता पूर्ण नीति को लागू करना चाहे वह निजी कम्पनियां हो पर सार्वजनिक कम्पनियां सभी के लिए एक नियम, अधिनियम हो जो सर्वसाधारण के हित में हो जो राष्ट्रहित में हो।

3.**D.T.H. (Directed to Home) टैरिफ मोबाइल पोर्टविलिटी आदि ट्राई के निर्देशों का अनुपालनः–**

दूरसंचार को बढ़ावा देने के लिये और सभी को दूरदर्शन के अलावा डी0टी0एच0 की भी सुविधा ट्राई के नियन्त्रण में प्रदान की गयी है, इसके साथ ही साथ मोबाइल में टैरिफ की व्यवस्था कम पैसे में अधिक बात हो सके आदि की भी सुविधा प्रदान की गयी है। मोबाइल पोर्टबिलिटी नियम को भी अपनाया गया है कि कोई भी व्यक्ति लगातार बिना नम्बर बदले किसी एक कम्पनी से दूसरी कम्पनी मैं मोबाइल की सुविधा प्राप्त कर सकता है। आदि सभी टेलीकाम नियामक प्राधिकरण के अधीन होगा।

4.टेलीकाम रेगुलिटिरी एथारिटी द्वारा टेलीकाम सेक्टर को विश्व स्तर पर जोड़ने का कार्य करे

ट्राई का मुख्य कार्य टेलीकाम सेक्टर को विश्वस्तरीय बनाना तथा अपनी दूर संचार नीतियों की जाल को इस प्रकार फैलाना की विश्व के सभी राष्ट्र इस जाल (नीति) की अपनाये तथा उनका पालन करे। ट्राई को यह अधिकर है कि वह दूरसंचार नीतियों को ऐसे सभी निजी एवं सार्वजनिक उपक्रमों को उनकी नीतियों एवं उपबन्धों का अनुपालन करने के लिये आदेश दे सकती है तथा नियमों के उल्लंघन पर उनके विरूद्ध कार्यवाही कर सकती है। विश्व के सभी राष्ट्र जो दूरसंचार नीतियों का प्रयोग कर रहे है उन्हें ट्राई के द्वारा दिये गये निर्देशों का अनुपालन करना होगा।

बीमा नियामक एवं विकास प्राधिकरण अधि0 1999 बनाने का औचित्य :–

बीमा नियामक एवं विकास प्राधिकरण अधि0 1999 बनाने का मुख्य औचित्य यह है कि बीमा व्यवसाय का निजीकरण करने के सम्बन्ध में राय जानने के लिये भारत सरकार द्वारा अप्रैल 1993 में आर0बी0आई0 (रिजर्व बैंक आफ इण्डिया) के पूर्व गर्वनर आर0एन0 मेल्होत्रा की अध्यक्षता में एक कमेटी गठित की थी। जिसकी संस्तुतियां मुख्यतः देश के बीमा उपभोक्ताओं के हितों में बीमा सेवाओं की मात्रा तथा गुणवत्ता में बृद्धि के दृष्टिकोण से प्रस्तुत की गयी थी समिति का मानना यह था कि यद्यपि राष्ट्रीकरण के बाद देश में बीमा क्षेत्र का काफी विकास

हुआ है बीमा कम्पनियों को निजी कम्पनियों के लिये खोला जाना ही उचित होगा उसके मुख्य कारण यह है :–

1.बेहतर उपभोक्ता सेवाओं के लिये प्रतिस्पर्धा का दरवाजा खुलेगा जिससे बीमा उत्पादों की रेंज गुणवत्ता तथा मूल्य में सुधार होगा।

2.गैर बीमा वितीय क्षेत्र में प्रतिस्पर्धा तेजी से बढ़ रही है जिसमें वाणिज्यिक बैंक : म्युचुअल बीमा क्षेत्र, मर्चेण्ट बैंक, गैर बैकिंग वित्तीय संस्था में आदि शामिल है।

3.बीमा कम्पनियॉ वित्तीय रूप से काफी सशक्त है तथा उसे एक सशक्त, सुदृढ़ ढांचा बनाने के लिये है। उसके प्रोफेशनल प्रतिभाओं तथा मार्केटिंग एवं सेवाओं का व्यापक नेटवर्क भी है, ऐसे में वे पूरी तरह प्रतिस्पर्धा करने में सक्षम है।

बीमा उद्योग के उदारीकरण के लिये विशिष्ट सिफारिशे करते हुये समिति ने इस बात को ध्यान में रखा कि इसे खोले जाने पर उसका ट्राई स्वरूप होगा–

1.प्रतिस्पर्धा बाजार विकसित करते हुये नियामक प्राधिकरण को प्रोत्साहनकारी एवं संवर्द्धनात्मक भूमिका भी निभानी चाहिये। उसे शिक्षण एवं प्रशिक्षण पर जोर देना चाहिये। बेहतर बीमा कर्मियों तथा मार्केटिंग अभिकर्ताओं को तैयार करने की उसकी भी जिम्मेदारी बनती है।

2.बीमा उद्योग में आत्म नियंत्रण पर जोर देना होगा। इसके साथ ही धोखाधड़ी तथा गड़बड़ी कड़ाई से निपटना होगा। इसके लिये नियामक प्राधिकरण की पहल और छवि सर्वाधिक महत्वपूर्ण साबित हो सकती है।

3.बीमा प्राधिकरण को सभी श्रेणी की बीमा कम्पनियों के साथ न्यायसंगत बर्ताव करना होगा। इसके लिये प्रवेश इच्छुकों में सें सर्वश्रेष्ठ का चयन करना बेहतर होगा। इसके लिये इनकी वित्तीय स्थिति विशेषज्ञता, अनुभव, प्रतिष्ठा तथा कार्य संस्कृति की जांच पड़ताल करनी होगी।

बीमा नियामक प्राधिकरण की स्थापना 1995 में हुयी, इसका मुख्य कार्य बीमाधारक के हित की सुरक्षा करना, बीमा धारी को विनियमित करना, प्रोन्नति करना, आदि में आश्वस्त करना है।

<u>बीमा नियामक और विकास प्राधिकरण अधि0 1999 के अधीन मुख्य शीर्षक :</u>

बीमा नियामक एवं विकास प्राधिकरण अधि0 1999 के मुख्य शीर्षक में अधिनियम का पूरा नाम एवं प्रवर्तन तारीख का उपबन्ध किया गया है जिसमें उसका पूरा नाम– बीमा नियामक एवं विकास प्राधिकरण अधि0, 1999 होगा जो पूरे भारत में लागू है जो 1 जुलाई 2000 से लागू है।

<u>परिभाषा :–</u>

1.'प्राधिकरण' का अर्थ – बीमा नियामक विकास प्राधिकरण से है।

2.'फण्ड' का अर्थ धारा (1) के अन्तर्गत बीमा नियमाक और विकास अधिक 'फण्ड' से है।

3.'विनियम' का अर्थ प्राधिकरण द्वारा बनाये गये विनियम से है।

4.'सभापति' प्राधिकरण के सभापति से है।

संगठन :–

अध्याय 2 में धारा 3 के अधीन केन्द्र सरकार 1 जुलाई 2000 में एक प्राधिकरण की स्थापना करेगी जिसे बीमा नियामक एवं विकास प्राधिकरण कहा जायेगा। यह एक निगमित संस्था होगी, जिसका शाश्वत उत्तराधिकार होगा। इसे चल एवं अचल सम्पत्ति खरीदने, रखने एवं बेचने का अधिकार होगा। इसकी अपनी एक मुहर होगी। इसे संविदा करने तथा इस पर वाद करने का अधिकार होगा। इसका मुख्यालय नई दिल्ली होगी, प्राधिकरण अपना कार्यालय कही भी स्थापित कर सकता है।

प्राधिकरण की संरचना में एक सभापित योग्य जो पूर्णकालिक तथा अंशकालिक सदस्य होगे। इनकी नियुक्ति केन्द्र सरकार द्वारा इन व्यक्तियों की होगी जिन्हें जीवन बीमा, साधारण बीमा, आदि के बारे में अनुभव एवं ज्ञान हो। इनका कार्यकाल सभापति 5 वर्ष, 65 वर्ष की आयु जो पहले हो सदस्य 5 वर्ष 62 वर्ष की आयु जो पहले ही तक होगी।

प्राधिकरण के दायित्व, शक्तियाँ तथा कार्य :–

कार्य :–

1.इस अधिनियम के उपबन्धों और किसी दूसरे कानूनों जो कुछ समय के लिये हुये हों, के अधीन प्राधिकरण का दायित्व बीमा और पुनर्बीमा व्यवसाय को विनियमित करना, प्रोन्नति करना, और उसकी सुव्यवस्थित वृद्धि आश्वस्त करना है (धारा 14 (1)).

2.उप–धारा (1) में निहित उपबन्धों की व्यापकता पर बिना प्रतिकूल प्रभाव डाले, प्राधिकरण की शक्तियाँ और कार्यो मं निम्न समावेश है –

(1)आवेदक के लिये रजिस्ट्रेशन का प्रमाण पत्र देना, ऐसे रजिस्ट्रेशन का नवीकरण रद्द करना, रूपान्तरण करना, वापिस लेना।

(2)बीमा संविदा की शर्तो, पॉलिसी का समर्पण–मूल्य, बीमा दावे का निपटान, बीमायोग्य हित, बीमाधारक का नामांकन, पॉलिसी का समनुदेशन से सम्बन्धित मामलों में बीमाधारकों के हितों की सुरक्षा करना।

(3)बिचौलियों या बीमा बिचौलियों ओर अभिकर्ताओं के लिये, व्यवहारिक प्रशिक्षण, आचार संहिता, और आवश्यक अर्हताओं को उल्लिखित करना।

(4)सर्वेयरों तथा हानि निर्धारकों के लिये आचार संहिता उल्लिखित करना।

(5)बीमा और पुनर्बीमा से सम्बन्धित वृत्तिक प्रतिष्ठानों को प्रोन्नति करना और विनियमित करना।

(6)इस अधिनियम के उद्देश्यों को पूरा करने के लिये शुल्क और दूसरे भारों का उद्ग्रहण करना (levying)।

(8)बीमाकर्ताओं, बिचौलियों और अन्य सम्बद्ध प्रतिष्ठानों और व्यक्तियों से जानकारी प्राप्त करना, लेखा परीक्षण सहित उनका निरीक्षण करना और उनकी छानबीन करना।

(9)साधारण बीमा के सम्बन्ध में बीमाकर्ताओं द्वारा प्रभावी प्रीमियम दरें, शर्तो और प्रतिबन्धों पर नियंत्रण और विनियम करना, जिन्हें बीमा अधिनियम, 1938 के खंड 64 (यू) के अन्तर्गत प्रशुल्क सलाहकार समिति द्वारा नियंत्रित नहीं किया जाता।

(10)बीमाकर्ता और बीमा बिचौलिये द्वारा तैयार किये जाने वाले और प्रस्तुत किये जाने वाले लेखा की पद्धति तथा उसके लिये प्रपत्र विहित करना।

(11)बीमा कम्पनियों द्वारा निधि के निवेश का विनियम करना।

(12)शोध क्षमता (ऋण) सीमा विनियमित करना।

(13)बीमाकर्ताओं और बिचौलियों के मध्य विवादों का निराकरण करना।

(14)प्रशुल्क सलाहकार समिति के कार्यो का पर्यवेक्षण करना।

(15)वृत्तिक प्रतिष्ठानों (जिसे खण्ड 6 में वर्णित किया गया है) को विनियमित और प्रोन्नत करने के लिये वृत्तिक स्कीमों के लिये बीमाकर्ता के लिये प्रीमियम आमदनी के प्रतिशत को उल्लिखित करना।

(16)ग्रामीण या सामाजिक क्षेत्र में बीमाकर्ता द्वारा लिये जाने वाले जीवन बीमा व्यवसाय और साधारण बीमा व्यवसाय के प्रतिशत को उल्लिखित करना।

(17)ऐसे दूसरी शक्तियों को प्रयोग करना जैसी कि विहित की गयी हो।

(18)सभापति को प्राधिकरण के सभी प्रशासनिक मामलों के संदर्भ में निर्देश देने तथा सामान्य निगरानी की शक्ति प्राप्त होती है।

बीमा नियामक प्राधिकरण :–

वीमा नियामक प्राधिकरण की शक्तियों को निम्न शीर्षकों में बाँट सकते हैं–

1.निर्देश देने की शक्ति

2.प्राधिकरण को आधिक्रमण करने की शक्ति

3.विवरणी प्राप्त करने का अधिकार

4.कठिनाइयों को दूर करने की शक्ति

1.निर्देश देने की शक्ति

(1)प्राधिकरण केन्द्र सरकार के पॉलिसी के प्रश्न पर उन निर्देशों को मानने के लिये बाध्य है जिन्हें वह समय समय पर लिखित रूप में दें। शर्त यह है कि प्राधिकरण को, जहाँ तक

व्यवहारिक हो इस उपधारा के अन्तर्गत दिये गये किसी निर्देश से पहले, अपने विचार व्यक्त करने का अवसर दिया जायेगा।

(2)प्राधिकरण का निर्णय अन्तिम होगा, चाहे सम्बन्धित मामला नीति का हो या न हो।

2.प्राधिकरण को अधिक्रमण करने की शक्ति :

(1)यदि किसी समय केन्द्र सरकार की यह राय है कि :

(क)प्राधिकरण अपने नियंत्रण के बाहर की परिस्थिति के कारण, इस अधिनियम के उपबन्धों के अन्तर्गत या द्वारा थोपे गये दायित्वों के निष्पादन में या कार्यो को निबाहने में असमर्थ है।

(ख)प्राधिकरण ने लगातार केन्द्र सरकार द्वारा दिये निर्देशों के अनुपालन में , या इस अधिनियम के उपबन्धों के अधीन या द्वारा थोपे गये दायित्वों के निष्पादन या कार्यो को निबाहने में लगातार चूक की है और ऐसे चूक के परिणाम स्वरूप प्राधिकरण की वित्तीय स्थिति या प्राधिकरण के प्रशासन ने हानि उठायी है।

(ग)ऐसी परिस्थितियाँ हैं जिसके कारण पब्लिक हित में ऐसा करना आवश्यक हो। तब केन्द्र सरकार अधिसूचना के द्वारा प्राधिकरण का, ऐसे समय के लिये जो 6 महीने से अधिक नहीं होगा, अधिक्रमण (encroachment) कर सकती है और **बीमा अधिनियम, 1938** (1938 का 4) की धारा 2 बी के अन्तर्गत बीमा नियंत्रक के रूप में किसी व्यक्ति को नियुक्त कर सकती है, यदि पहले से ऐसा व्यक्ति नियुक्त नहीं किया गया है।

परन्तु शर्त यह है केन्द्र सरकार को अधिसूचना देने से पहले प्राधिकरण को अपना स्पष्टीकरण देने का युक्ति–युक्त अवसर देना होगा।

(2)प्राधिकरण के अधिक्रमण की अधिसूचना की उद्घोषणा होने पर

(क)अधिक्रमण की तारीख से सभापति और दूसरे सदस्य अपने पद को खाली कर देंगें।

(ख)उनकी सारी शक्तियाँ, कार्यो और दायित्वों को बीमा नियंत्रक द्वारा निष्पादित किया जायेगा, जब तक कि उपधारा (3) के अन्तर्गत प्राधिकरण दुबारा गठित नहीं की जाती।

(ग)प्राधिकरण की अपनी और उसके द्वारा नियंत्रित पूर्ण सम्पत्ति केन्द्र सरकार में निहित हो जायेगी।

(3)अधिक्रमण का समय समाप्त होने से पहले या होने पर,

केन्द्र सरकार प्राधिकरण का दुबारा गठन करने के लिये फिर से सभापित तथा दूसरे सदस्यों की नियुक्ति करेगी। ऐसा कोई भी व्यक्ति जो अपने पद से मुक्त हुआ है, पुनः नियुक्ति के लिये अयोग्य नहीं समझा जायेगा।

3.विवरणी (Return) प्राप्त करने का अधिकार :

(1)जैसा केन्द्र सरकार को समय–समय पर आवश्यक हो, प्राधिकरण विवरणी को या तो ऐसे समय पर और ऐसे फार्म और एंग से, जैसा नियत हो, केन्द्र सरकार को देगी या जैसा केन्द्र

सरकार बीमा उद्योग के विकास और प्रोन्नति के लिये प्रस्तावित या विद्यमान प्रोग्राम के सम्बन्ध में विवरणी, विवरण और दूसरे ब्यौरा उपलब्ध कराने का, निर्देश दें।

(2)प्रत्येक वित्तीय वर्ष के समाप्त होने के बाद नौ महीने के अन्दर अपने क्रियाकलापों जिसमें पूर्व वर्ष के क्रियाकलाप भी सम्मिलित होगें, की पूरी ओर सही जानकारी की रिपोर्ट केन्द्र सरकार को प्रदान करेगी।

(3)प्राप्त रिपोर्ट की प्रति शीघ्र से शीघ्र संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष रखी जायेगी।

4.नियम बनाने की शक्ति :

(1)केन्द्र सरकार इस अधिनियम के उपबन्धों को पूरा करने के लिये अधिसूचना द्वारा नियम बना सकती है।

(2)निम्नलिखित मामलों के कोई या सभी के लिये इस प्रकार के नियम बना सकती है, मुख्यतः

(क)धारा 7 की उप–धारा (1) के अन्तर्गत पूर्णकालिका सदस्यों के अलावा और दूसरे सदस्यों की सेवा की शर्तो और देय वेतन और भत्तों के लिये।

(ख)धारा 7 की उपधारा (2) के अन्तर्गत अंशकालिक सदस्यों को दिया जाने वाला भत्ता।

(ग)धारा 14 की उपधारा (2) के खण्ड (ह) के अन्तर्गत ऐसी दूसरी शक्तियाँ जो प्राधिकरण द्वारा प्रयोग की जा सकती है।

(घ)धारा 17 की उपधारा (1) के अन्तर्गत प्राधिकरण द्वारा साधारण किये जाने वाले खातों के वार्षिक विवरणों का प्रपत्र।

(ड.)धारा 20 के उपधारा (1) के अन्तर्गत केन्द्र सरकार को विवरणी, वक्तव्य और विशेष विवरण उपलब्ध कराये जाने का समय, ढंग तथा प्रपत्र के सम्बन्ध में।

(च)धारा 25 की उपधारा 5 के अन्तर्गत वे मामले जिन पर बीमा सलाहकारी समिति प्राधिकरण को सलाह देगी।

(छ)और कोई मामले, जिनमें कोई प्रावधान किसी उपबन्ध के सन्दर्भ में नियमों द्वारा बनाये जा सकते हों, या बनाये जाने हो।

5.कठिनाइयों को दूर करने की शक्ति :

(1)यदि कोई कठिनाई इस अधिनियम के उपबन्धों को पूरा करने में उत्पन्न होती है, तब केन्द्र सरकार ऐसे उपबन्ध बना सकती है, जो कठिनाइयों को दूर करने के लिये आवश्यक हों, परन्तु ऐसे प्रावधान अधिनियम के अन्य प्रावधानों के साथ असंगत नहीं होने चाहिए और नियत दिन के दो वर्षो के बाद नहीं बनाए जायेंगे। (धारा 28(1))

(2)इस धारा के अन्तर्गत बनाया गया प्रत्येक आदेश शीघ्र से शीघ्र, संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष रखा जायेगा। (धारा 28(2))

5.प्राधिकरण को विनियम बनाने की शक्ति (धारा 114ए):– प्राधिकरण निम्नलिखित मामलों में विनियम बना सकता है–

1.धारा 3 के अन्तर्गत बीमाकर्ताओं की रजिस्ट्रेशन की शुल्क के मामले,

2.धारा 3 की उपधारा 5ई के अन्तर्गत रजिस्ट्रेशन के रद्दकरण या स्थगन का ढंग,

3.धारा 3 की उपधारा 7 के अन्तर्गत रजिस्ट्रेशन की दूसरी प्रति जारी करने के लिये ऐसी शुल्क जो 5 हजार से अधिक नहीं होगी,

4.धारा 3 ए के अन्तर्गत रजिस्ट्रेशन का नवीकरण तथा उसके लिये शुल्क से सम्बन्धित मामले,

5.धारा 6एए की उपधारा 2 के अन्तर्गत अधिक शेयर पूँजी हटाने (divest) की प्रक्रिया और ढंग,

6.धारा 11 की उपधारा (1ए) के अन्तर्गत बैलेन्सशीट (balance sheet) लाभ और हानि के खाते, भुगतान तथा प्राप्ति के अलग खाते ओर रेवेन्यू खाते की तैयारी,

7.धारा 13 की उपधारा (1) का चौथे परन्तुक के अन्तर्गत उल्लिखित बीमाकांक की रिपोर्ट का सार ढंग,

8.बीमाकर्ता को अपनी आस्तियों को निवेश करने का समय, ढंग और दूसरी शर्ते,

9.बीमाकर्ता अपनी किताबों में कौन सी सूचनायें रखे, उनको किस प्रकार रखना चाहिये और उस सम्बन्ध में बीमाकर्ता द्वारा अपनायी जाने वाली जांच,

10.बीमा–अभिकर्ता के लिये लाइसेंस जारी करने कील शुल्क और ढंग तथा आवेदन करने का ढंग

11.बीमा–अभिकर्ता के लाइसेंस के नवीकरण करने की शुल्क तथा अतिरिक्त शुल्क,

12.बीमा–अभिकर्ता के लिये आवश्यक योग्यतायें तथा व्यवहारिक प्रशिक्षण,

13.बीमा–अभिकर्ता के रूप में कार्य करने के लिये पास करने वाली परीक्षा,

14.बीमा–अभिकर्ता के लिये आचार संहिता,

15.बिचौलिया या बीमा–बिचौलिया के लिये लाइसेंस जारी करने की शुल्क और ढंग,

16.बिचौलिया या बीमा–बिचौलिया के लाइसेंस के नवीकरण करने के लिये शुल्क और अतिरिक्त शुल्क,

17.बिचौलिया या बीमा–बिचौलिया के रूप में कार्य करने के लिये पास करने वाली परीक्षा,

18.बिचौलिया या बीमा–बिचौलिया के लिये आचार–संहिता,

19.बिचौलिया या बीमा–बिचौलिया के लिये लाइसेंस की दूसरी प्रति जारी करने के लिये शुल्क,

20.प्रशुल्क सलाहकार समिति के सम्बन्ध में धारा 64 यू बी की उपधारा 2 के अन्तर्गत उल्लिखित मामले,

21.सर्वेयर और हानि निर्धारक के लाइसेंस से सम्बन्धित मामले, उनके कार्य, दायित्व और अन्य पेशेवर आवश्यकतायें,

22.बीमाकर्ता की आवश्यक शोधक्षमता–सीमा निश्चित करना,

23.पुनर्बीमाकर्ता से सम्बन्धित मामले,

24.बीमाधारकों के हित की रखा के लिये उनकी शिकायतों के निवारण सम्बन्धी मामले,

25.बीमा उद्योग के क्रमबद्ध विकास को सुनिश्चित, उन्नति तथा विनियमित करने के लिये और बीमाधारकों के हित की रक्षा के लिये उनकी शिकायतों के निवारण से सम्बन्धित मामले, और

26.कोई अन्य मामले जो प्राधिकरण द्वारा विनियमों द्वारा बनाये जा सकते हैं या बनाये गये हैं।

इस अधिनियम के अन्तर्गत बनाये गये प्रत्येक विनियम–शीघ्र से शीघ्र संसद के दोनों सदनों के समक्ष रखा जायेगा। यदि दोनों सदन विनियम में कोई परिवर्तन करने के लिये सहमत होते हैं या दोनों सदन इस ात पर सहमत होते हैं कि यह विनियम नहीं बनना चाहिये तब उसके बाद विनियम या तो उस परिवर्तित रूप में लागू होगा या लागू नहीं हागा जैसा भी निश्चित किया जाये। पूर्व में किये किसी कार्य की वैधता पर बिना प्रभाव डाले ऐसे परिवर्तन या निराकरण विनियम के अन्तर्गत लागू किये जायेंगे।

बीमा कम्पनी का समापन :

बीमा कम्पनियों के समापन के नियम बीमा अधिनियम, 1938, की धारा 53 से 61 तक में दिये गये हैं। संक्षेप में ये नियम इस प्रकार हैं–

1.बीमा कम्पनी का समापन सामान्यतया न्यायालय द्वारा ही हो सकता है। स्वैच्छिक समापन (Voluntary Liquidation) केवल निम्नलिखित परिस्थितियों में हो सकता है–

(क)यदि कम्पनी का सम्मेलन (amalgamation) या पुननिर्माण (reconstruciton) करना हो, अथवा

(ख)यदि कम्पनी के दायित्वों को देखते हुये इसका व्यवसाय चालू न रखा जा सके। अन्य सभी दशाओं में न्यायालय द्वारा ही समापन हो सकता है। (धारा 54)

2.न्यायालय कम्पनी अधिनियम, 1956, के नियमानुसार बीमा कम्पनी के समापन करने की आज्ञा दे सकता है।

3.बीमा कम्पनी के समापन के लिये कुल अंशधारियों के दस प्रतिशत अंशधारी जिनके पास कुल चुकता पूँजी का कम से कम दसवाँ भाग हो, न्यायालय की आज्ञा प्राप्त करके याचिका दाखिल कर सकते हैं।

4.प्राधिकरण धारा 53 के अन्तर्गत निम्नलिखित किसी भी आधार पर न्यायालय में समापन के लिये प्रार्थना पत्र दिलवा सकता है यदि :

(क)कम्पनी ने धारा 7 के अधीन रिजर्व बैंक में निक्षेप नहीं जमा किया है,

(ख)कम्पनी ने बीमा अधिनियम के नियमों का उल्लंघन किया है और प्राधिकरण द्वारा उसे सूचना देने के तीन माह बीतने पर, भी वह उल्लंघन जारी है,

(ग)कम्पनी की विवरणियों से या उसका अन्वेषण कराने में यह पता चलता है कि कम्पनी दिवालिया हो गयी है,

(घ)कम्पनी का चालू रहना बीमाधारकों के हितों के प्रतिकूल है,

(ड)यदि किसी समझौता के अन्तर्गत किसी कम्पनी का बीमा व्यवसाय दूसरी कम्पनी को अंतरित हो रहा है (ऐसी परिस्थिति में) न्यायालय दूसरी कम्पनी के अन्तरण की कार्यवाही के साथ ही प्रथम कम्पनी के समापन की आज्ञा दे सकता है (धारा 57)

5.धारा 58 में आंशिक समापन का नियम दिया गया है। कहने का तात्पर्य यह है कि यदि कोई कम्पनी अग्नि बीमा, समुद्री बीमा और विविध बीमा इन तीनों का कारबार करती हो, लेकिन अब समुद्री बीमा का कारबार किसी अन्य कम्पनी को अंतरित करना चाहती हो, तब ऐसी क्रिया को आंशिक समापन कहा जायेगा। इसके लिये उस कम्पनी को धारा 58 के अन्तर्गत अपनी समापन योजना को न्यायालय के पुष्टीकरण के लिये दाखिल करना होगा। यदि न्यायालय उक्त योजना को पुष्ट करने की आज्ञा दे तो उसका वही प्रभाव होगा जो कम्पनी अधिनियम, 1955, के अन्तर्गत ज्ञापन (Memorandum) के उद्देश्य खण्ड के परिवर्तन का होता है, और तदनुसार आंशिक समापन किया जा सकता है।

6.बीमा कम्पनी का समापन होते समय न्यायालय उस कम्पनी की बीमा संविदाओं की रकमें घटाने की आज्ञा दे सकता है। (धारा 61)

3.4. नई दूर संचार नीति 2011

केन्द्रीय सूचना और दूर संचार मंत्री कपिल सिब्बल ने 11 अप्रैल, 2011 को नई दूरसंचार नीति के प्रमुख प्रावधानों की रूपरेखा प्रस्तुत की। दूरसंचार नीति, 1999 का स्थान लेने वाली इस प्रस्तावित राष्ट्रीय दूरसंचार नीति, 2011 (NTP-2011) के कुछ प्रमुख बिन्दु निम्नलिखित हैं –

- दूरसंचार विभाग (DOT) द्वारा दूरसंचार लाइसेंसों का 20 वर्ष की बजाए प्रत्येक 10 वर्ष में नवीनीकरण कराने का प्रावधान।
- कंपनियों को दूरसंचार लाइसेंस के नवीनीकरण के लिए अब कम से कम 30 माह पूर्व आवेदन प्रस्तुत करना होगा।
- बाजार में एकाधिकार की स्थिति समाप्त करने के लिए प्रत्येक सर्किल में बीएसएनएल सहित कम से कम छह प्रतिस्पर्धी कंपनियां होंगी।
- दूरसंचार लाइसेंस के आवंटन को मोबाइल स्पेक्ट्रम से अलग किया जाएगा तथा लाइसेंस व स्पेक्ट्रम के लिए अलग–अलग धनराशि वसूल की जाएगी।
- दूरसंचार लाइसेंस की निम्नलिखित चार श्रेणियां होंगी – एकीकृत लाइसेंस, क्लास लाइसेंस, प्राधिकार लाइसेंस और प्रसारण लाइसेंस।
- एकीकृत लाइसेंस का दो स्तर होगा– राष्ट्रीय स्तर और सेवा क्षेत्र स्तर।
- कुछ निश्चित परिस्थितियों में ही स्पेक्ट्रम की साझेदारी की अनुमति दी जाएगी।
- किसी बाहरी एजेंसी द्वारा स्पेक्ट्रम के उपयोग का नियमित आडिट किया जाएगा।
- मोबाइल दूरसंचार क्षेत्र के समन्वय में सहायता हेतु विलय और अधिग्रहण नीति को उदार बनाया जाएगा।
- एकीकृत अभिगम सेवा लाइसेंस प्रणाली (United Access Service Licence System) के स्थान पर एक नई लाइसेंस व्यवस्था शुरू करने पर विचार। इसके तहत सभी के लिए एक ही प्रकार का लाइसेंस शुल्क वसूल किया जाएगा।
- स्पेक्ट्रम के बेहतर प्रबंधन एवं उसके उपयोग के लिए एक राष्ट्रीय स्पेक्ट्रम अधिनियम (National Spectrum Act) बनाने हेतु सर्वोच्च न्यायालय के सेवानिवृत्त न्यायाधीश न्यायमूर्ति शिवराज वी. पाटिल की अध्यक्षता में एक प्रारूप समिति का गठन।
- राष्ट्रीय ब्रॉडबैंड योजना से सम्बन्धित मामलों को देखने के लिए दूरसंचार विशेषज्ञ सैम पित्रौदा की अध्यक्षता में एक ब्रॉडबैंड समिति का गठन।
- प्रस्तावित राष्ट्रीय दूरसंचार नीति, 2011 को वर्ष 2011 के अंत तक लागू करने की योजना।
- 2–जी स्पेक्ट्रम के मूल्य निर्धारण की प्रक्रिया को अंतिम रूप देना अभी शेष।

3.4.2 भारत में बीमा व्यवसाय के उभरते आयाम राष्ट्रीयकरण से निजीकरण तकः भारतीय बीमा के उभरते आयाम

वर्ष 1938 में बीमा अधिनियम, 1938 पारित होने के समय भारत में 138 निजी बीमा कम्पनियॉ कार्यरत थी। इस अधिनियम का उद्देश्य इन कम्पनियों पर राज्य का कठोर नियंत्रण स्थापित करना था। वर्ष 1956 तक 240 निजी जीवन बीमा कम्पनियॉ या भविष्य निधि समितियाँ स्थापित हो गयी थी। भारतीय जीवन बीमा अधिनियम, 1956 द्वारा इन सभी कम्पनियों का राष्ट्रीयकरण कर दिया गया और एकाधिकार के आधार पर जीवन बीमा के व्यवसाय का संचालन करने के लिए भारतीय जीवन बीमा निगम निगमित किया गया। इस राष्ट्रीयकरण का औचित्य यह बताया गया था कि इससे देश के तीव्र औद्योगीकरण के लिए आवश्यक धन प्राप्त होगा।

जीवन बीमा के अतिरिक्त अन्य साधारण बीमा व्यवसाय वर्ष 1972 तक निजी क्षेत्र में ही था। उस समय लगभग 107 निजी कम्पनियॉ थी जिनका राष्ट्रीयकरण साधारण बीमा व्यवसाय (राष्ट्रीयकरण) अधिनियम, 1972 के द्वारा कर दिया गया और उन्हें भारतीय साधारण बीमा निगम और उसकी चार सहयोगी कम्पनियों–नेशनल इन्श्योरेन्स कम्पनी, न्यू इण्डिया एश्योरेन्स कम्पनी, ओरियन्टल इन्श्योरेन्स कम्पनी एवं यूनाइटेड इन्श्योरेन्स कम्पनी के रूप में एक या दूसरे के साथ मिला दिया गया। इस तरह से 1972 में साधारण बीमा उद्योग भी राष्ट्रीयकृत हो गया। जीवन बीमा उद्योग 1956 में ही राष्ट्रीयकृत हो गया था। इस प्रकार पूरे बीमा व्यवसाय का सरकारीकरण हो गया और भारत में बीमा उद्योग भारत सरकार के लिए देश की आर्थिक प्रगति के लिए आवश्यक धन उपलब्ध कराने का स्रोत बन गया इस सम्बन्ध में सरकार ने निम्न बातों पर विशेष बल दिया।

(1)बीमा कम्पनियों से सामयिक एवं विश्वसनीय सूचनाएं प्राप्त करना जिससे बीमा व्यवसाय के अन्तर्राष्ट्रीय नीतियों के अनुरूप बीमा का स्तर व नीतियाँ बनायी जा सके।

(2)बीमा व्यवसाय के पर्यवेक्षण एवं विनियमन को सुदृढ़ बनाया जा सके।

(3)बीमा व्यवसाय।

(4)बीमा व्यवसाय से सम्बन्धित निर्णयों को बाजार के अनुसार लिया जा सकें। वीमा कम्पनियाों की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ बनायी जा सके जिससे उनको अधिकाधिक विश्वसनीय बनाया जा सके।

उपरोक्त के साथ ही मल्होत्रा समिति की अनुशंसाओं के अनुसार बीमा क्षेत्र में ग्राहक सेवा में विशेष बल दिया गया ताकि बीमा पर जनता के विश्वास को बढ़ाया जा सके। वर्तमान समय में बीमा व्यवसाय में भारतीय निजी कम्पनियों को भी अधिकतम 26 प्रतिशत भागीदार के साथ भारतीय निजी कम्पनियों के साथ मिलकर बीमा व्यवसाय करने की छूट मिल गयी है, तथा इस सीमा को 49 प्रतिशत तक बढ़ाने का प्रस्ताव अभी विचाराधीन है।

3.5 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1.डा0 ममता गुप्ता –बीमा अधि0

2.डा0 विवेक सिंह –टेलीकाम नियामक प्राधिकरण

3.युनिक गाइड –डा0 विश्वेवरदास सामान्य विज्ञान

3.9सहायक उपयोगी पाठ्क्रम

1.वेयर एक्ट

2.विवास मनोरमा

3.इंटरनेट

3.10निबन्धात्मक प्रश्न :

प्रश्न–1बीमा नियामक और विकास प्राधिकरण के कार्यो शक्तियों को संक्षेप में समझाये?

प्रश्न–2क्या बीमा नियामक प्राधिकरण को विनियम बनाने की शक्ति प्राप्त है समझायें?

प्रश्न–3टेलीकाम नियामक प्राधिकरण के कार्यो पर संक्षेप में प्रकाश डाले?